* टीकाकार के श्री गुरुदेव जी *

श्री श्री१०८ श्रीसियाशरण जी (श्रीमधुकरजी) महाराज

श्री चारुशीला मन्दिर, श्री चारुशीला बाग

श्री जानकीघाट, श्री अयोध्या जी

Scanned by CamScanner

श्रीग्रन्थकार जी के आदि गुरुदेव श्रीसीताराम उपासना रसिकाचार्य

श्री श्री१००८श्री रामचरण दास जी
(श्रीकरुणासिन्धुजी) महाराज

श्रीजानकी घाट-बड़ास्थान, श्री अयोध्या जी

Scanned by CamScanner

श्रीअमर रामायण

(श्रीराम रत्न मञ्जूषा)

सीताराम शृङ्गार रसाचार्य अनन्त श्रीस्वामी श्रीरामचरणदास (करुणा सिन्धु) के
आपके कृपापात्र शिष्य नर्म सख्य रसाचार्य श्रीराजराघोदास (कृपा सिन्धु) जी महाराज
पात्र शिष्य ग्रन्थकार श्रीस्वामी जनकराज किशोरीशरण (रसिकअली) (दयासिन्धु जी
कीर्तिका यह प्रथम पुष्प है ।

टीकाकार

सीताराम शृङ्गार रसाचार्य अनन्त श्रीस्वामी श्रीरामचरणदास (करुणा सिन्धु) जी
कृपापात्र शिष्य श्री लक्ष्मणशरण (महाविरक्त) जी महाराज के कृपापात्र शिष्य श्री
[illegible] समुद्र) जी महाराज । आपके कृपापात्र शिष्य सिद्ध शिरोमणि श्रीकिशोरीशरण
[illegible] महाराज । आपके कृपापात्र शिष्य श्री श्री १०८ श्रीस्वामी सियाशरण (मधुकर)
। आपके श्रीचरणरज कृपापात्र शिष्य जानकीशरण मधुकरिया ।

[illegible] अमर रामायण नामक यह ग्रन्थ अद्यावधि अप्रकाशित था, हस्तलिखित यह ग्रन्थ की
[illegible] महात्माओं के पास वर्तमान हैं परन्तु अप्रकाशित होनेसे बहुतों को बड़ा असन्तोष और
[illegible] बहुत [illegible] व्याकुलता थी परन्तु श्रीमिथिलारसिक निवास स्थान के महाराज श्रीस्वामी
[illegible]रण [illegible] महाराज ने यह ग्रन्थ मुझे दिया और यह कह करके दिया कि इस ग्रन्थ में
स्वतन्त्र अधिकार है हम इस ग्रन्थ को आपको देते हैं आप इस ग्रन्थ को छपावें और
[illegible] में रजिस्टर्ड कराकर रक्खें ताकि आपके सिवाय कोई दूसरा इस ग्रन्थको हम लोगोंकी
[illegible] छपावे क्योंकि यह ग्रन्थ हमारे आचार्यकी कीर्ति है। अतःमैंने इस ग्रन्थको पाकर स्वयं
[illegible]चार्य [illegible]र्ति स्वरूप इस ग्रन्थ को श्रीसीताराम उपासक भावुकों के सेवा के लिए
[illegible] व्यय [illegible] तथा परिश्रम से श्रीआचार्य चरण कृपाबल से प्रकाशित किया ।

[illegible]राज जी के चौबीस ग्रन्थ एक से एक सुन्दर हैं आपकी वाणी शास्त्र सम्मत तथा
[illegible] तथा भाषा भी सुन्दर और शुद्ध अनुराग की सीमा से निकली है अतः
[illegible] कार भगवत अनुरागी विद्वान कवियों को दिव्य पड़ा र[illegible]ता से देनेवाली है [illegible]

Scanned by CamScanner

आपने रसचन्द्रोदय तथा रघुवर करुणाभरण के द्वारा पिंगल अलंकारों की सीमा को
को सीमा श्रीसीतारामजी के दिव्य धाम में अनन्त पार्षदों के साथ जो २ लीला संस
अतिशय अगम था वह आपके द्वारा प्रगट हुआ, आपके जीवन चरित्रभी दिव्यधामके
है जन्म से वैराग बहुत शीघ्र विद्वान आजीवन दृढ़ साधुताकी एकरस रहन दूरद
अद्भुत चमत्कारयुक्त परधाम यात्रा तथा आपके जीवन प्रसंगमें जो२ साहित्य प्रगट
जो सुख भगवत रसिकों को हुआ। वह सुख अन्य सभी आचार्योंके द्वारा पूर्ण नहीं हो
सभी आचार्यों ने लोक गुरुता की मर्यादा सम्हाल कर थोड़ा २ भगवत अनुराग रस
परन्तु आपने तो दिव्य धाम के अनुराग रस का समुद्र बहा दिया संसार मर्यादा
कभी याद भी आतो तो अग्नि की सी ज्वाला में पाना सरीखा अनुराग रस बहा
आशक्तों की याद भी न रह जाय। आपका जीवन चरित्र दिव्य अवतरित है अत
लिखकर के स्वतन्त्र आपका जीवन चरित्र लिख रहा हूँ सो पाठ [illegible]
रसिकअली जी के जीवन चरित्र की प्रकाशित प्रति के लिए कुछ दिन
यद्यपि आपका जीवन चरित्र पुराने सन्तों में प्रसिद्ध है और पुराने साहि
लोग पुराने सन्तों का तथा साहित्यों का सतसंग सेवा किये होंगे उनके लिएं छिपा
के मुमुक्षु जीवों के लिये मैं संग्रह करके सबके सामने प्रगट करने की सेवा अवश्य

यह ग्रन्थ छपाने में जो परिश्रम पड़ा यह अकथ्य है क्योंकि अकेले मेरे
सहायता किसी की कुछ भी न मिली बाधकता की कमी भी नहीं थी प्रथम मैंने यह
प्रेस में दी थी १७२ पृष्ठ तक छापने में ही ६-७ महीना लग गया कागज खरीदने
छपाई बहुत खराब होगई फिर देखा कि अभी ग्रन्थ चौथाई भी नहीं छपा है स
अर्द्ध त्यजति पण्डितः' की नीति अपनाई तब विरक्त प्रेसमें छापनेको दिय। तो तब
मिले फिर शुद्धाशुद्धी व सूची सहित यह ग्रन्थ तैयार हुआ। परन्तु हिन्दीके अक्षरोंमें
गुणग्राही सज्जनों के सद्भावना के भरोसे छोड़ दिया है क्योंकि परिश्रम बहुत थ
बात का अधिक हुआ कि मैं अखण्ड भगवतधाम वास (क्षेत्रन्यास) वृत्ति से रहा
देश तो मैंने आजन्म देखा ही नहीं है केवल मेरे मन की भावना में आचार्य की
की इच्छा थी तो श्रीकिशोरी जी ने अद्भुत तरह से पूर्ण कर दिया। यह ग्रन्थ श्री
(रसिक सन्तों) का जीवन है। अतः यह सेवा मेरा धन्यभाग्य है कि मुझे मिली,
लोग क्षमा करेंगे ही।

Scanned by CamScanner

❀ श्रीसीताराम चन्द्राभ्यां नमः ❀
॥ श्रीमती सर्वेश्वरी श्रीचारुशीलायै नमः ॥
❀ श्रीमते रामानन्दाय नमः श्रीसद्गुरवे नमः ❀

❀ अमर रामायण ❀

—०: जोकि :०—

श्रीअमर नाथ गुफा में श्रीशंकरजी ने श्रीसुकदेवजीको सुनाया था जैसा कि सर्वसन्त सम्मत है कि एक बार जब श्रीपार्वती जी पर्वत द्वारा श्रीशंकर जी से विवाही गईं तो उसके बाद में प्रेरणा से श्रीनारद जी कैलाश में गये श्रीशंकर जी ने नारद जी का सुन्दर स्वागत सत्कार बाद में श्रीनारद जी एकान्त में बैठी हुई विष्णुसहस्रनाम का पाठ करती हुई श्रीपार्वती जी का किया। श्रीपार्वती जी ने भी शंकर जी से स्वागत किये गये नारद जी का स्वागत किया तथा आसनादि दिया आतिथ्य किया। बाद में श्रीपार्वतीजी ने जब नारदजी का मुख दर्शन किया ...ध श्रीनारदजीका मुख उदास सरीखा देख पड़ा तो जगज्जननी श्रीपार्वतीजीने प्रश्न किया बताइये तो आप एक महान लोक गुरू महाविरक्त हैं ऐसी स्थिति में आपमें सदा भगवत का अनुरागमय गुणगान का उत्साह भरा रहता था आज यह उदासीनता क्यों ? क्या कोई भक्त ...से तो नहीं दीख पड़ा है? तब श्रीनारदजी बोले कि आपसे बढ़कर भगवत भक्त और कौन होगा ...के लिए मुझे और भगवत भक्त की चिन्ता करनी पड़े ?

तब पार्वती जी बोली कि मेरी आपको क्यों चिन्ता करनी पड़ी मैं तो देवों में महादेव भक्तों भक्त गुरुवों में महागुरू विद्वानों को विद्यादाता जीवों को मोक्षदाता लोक पूज्य श्रीशंकर ...राग्य स्वरूप) की अर्द्धांगिनी पत्नी हूँ। तब नारदजी बोले कि इसीलिए तो ? मुझे आपके विषय ...ता हुई, तब पार्वती जी ने प्रश्न किया कि मेरी चिन्ता क्यों ?

नारद जी बोले कि मैं क्या बताऊँ आप श्रीशंकर जी से पूछ लीजिये कि आप इस तरह से ...की माला क्यों पहिनते हैं तब श्रीशंकर जी क्या उत्तर देते हैं ? तब पार्वती जी बोली कि मैंने ...र पूछा था तो शंकर जी ने उत्तर दिया कि हे प्रिये तुम जब २ शरीर त्याग करती हो तो मुझे ...वियोग सहन नहीं होता है अतः मैं तुम्हारे शरीर को कन्धा में लेकर वन २ में दौड़ता हूँ अतः ...ता हूँ अतः यह आपका शरीर जब गल जाता है तब मैं मुण्डोंकी माला बनाकर पहिनलेता ...आपके अनुरागका ही चिन्ह मेरे गलेमें पड़ा रहताहै ऐसा कहकर मेरेसे बहुत अनुराग

Scanned by CamScanner

आपने रसच

को सीमा ।तुकनिधि नारद जी पार्वती जी से कहे कि हे पर्वतकन्यके ! आप बहुत भोल
अतिशय एक ऐसी बूटी खाते हैं कि सब दिन अमर बने रहते हैं कभी नहीं मरते हैं औ
है गले की मुण्डमाला को गिनिये तो कितने मुण्ड हैं और कितनी बार आप जन्म लि
जी को आप पर दया नहीं आई कि उस बूटी को अकेले खाते हैं आपको नही देते हैं

तब पार्वती जी बोली कि हे नारद जी आप ही बताइये कि वे कौन सी बूटी ख
धतूरा भाँग घोट कर हमेशा पिलाती हूँ तो प्रसादी मैं भी लेती हूं इसके अतिरिक्त और तो
मेरी समझ से नहीं खाते हैं।

तब नारद जी बोले कि यह मर्म बात उन्हीं से पूछना यदि मैं बता दूं तो शंकर जी
नाराज हो जायेंगे ऐसा कहकर श्रीनारद जी पार्वती जी को प्रणाम करके चल पड़े।

श्रीपार्वतीजी श्रीशंकरजीके पास हँसकर गईं और शंकर जी ने पार्वती जी का स्व
हुये प्रश्न किया कि प्रिये कौन सी विनोदकी कथा कौतुकनिधि नारदजी ने सुनाई कि आप हँ
तब पार्वतीजी पूछीं कि यह मुण्डमाला आप क्यों पहिनते हैं? तब शंकरजी बोलेकि कहा तोकि
के प्रेम का चिन्ह है मैं एक बार यह सब कथा सुना चुका हूँ आप भूल गयीं क्या ?। तब
बोलीं कि मैं भूल नहीं गई हूँ कुछ पूछने में गलती हुई है अतः आज अब पूछती हूं कि आप
बूटी खाते हैं कि आप कभी मरते नहीं हैं मैं बार २ मरती जन्मती रहती हूँ हमको वह बूटी
देते हैं ?

तब शंकर जी बोले कि हाँ जरूर नारद जी घरफोड़ी बात बता गये, अच्छा अब
देऊँगा तब पार्वती जी बोली कि अभी बताने में क्या हर्जा है। तब शंकर जी बोले कि वह गूढ़
उस तत्व के लिये देशकाल अवस्था का बिचार करना पड़ता है अत: कभी समय पर बता
पार्वती जी वहुत उपाय करने पर भी जब उस तत्व को नही पायीं तो एक बार मान (प्रण
कर गयीं तब शंकर जी ने अमरनाथ गुफा में जाकर एकान्त में उस तत्वमई अमर कथा
बिचार से पार्वती जी को सावधान किया कि अब यह देश भी अनुकूल है और आपका पंच
का भी अनुकूलता है अतः अब देशकाल अवस्था अनुकूल होने से अब कथा कहूँगा परन्तु
होकर सुनना। यदि कथा सुनते हुए आप सोगयीं तो तब फिर मैं नहीं सुनाऊँगा अतः हाँ कह
कहकर शंकर जी कथा आरम्भ किये और पार्वती जी हाँ हाँ कहती जाती थी। बहुत काल
होने पर पार्वती जी को नींद आगई और शंकर जी कथा के रंग में माते कथा कहते जारहे
अमर नाथ की गुफा में एक पक्षी सुक नाम का अपने अण्डे को एक घोंसला बनाकर पहे
रक्खा हुआ था। शंकरजी के अमर कथा के प्रभाव से वह सुक पक्षी का अण्डा चैतन्य
कथा से आनन्द ले रहा था अतः उस पक्षी के मन में विचार आया कि श्रीपार्वती जी ने हाँ

बन्द कर दिया है तो अब शंकर जी कथा बन्द कर देंगे अतः मै ही श्रीपार्वती के सदृश स्वर में हाँ हाँ कहा करूं तो कथा बन्द नहीं होगी। ऐसा विचार कर वह पक्षी हाँ हाँ भर रहा था बहुत काल तक कथा हुई फिर श्रीपार्वतीजी की नींद खुली तो श्रीशंकरजी से बोली कि महाराज मैं तो सो गई थी अतः आपने क्या २ कहा मुझे नहीं सुन पड़ा फिर से कहिये तो। यह सुनकर शिव जी बोले कि हाँ हाँ कौन कह रहा था, तब श्रीपार्वती जी बोलीं कि मैं नहीं जानती हूँ अतः आप निश्चय मानिये। तब श्रीशंकर जी उस गुफा में चारों तरफ दृष्टि फैलाकर देखे तो एक सुक नाम का पक्षी आखों में आँसू भर कर गदगद हो रहा था। श्रीशंकर जी विचार किये कि यदि इस पक्षी को मैं नहीं मारता हूँ तो यह अमर हो जायगा, जैसे मैं अमर हूँ उसी तरह से यह भी मेरी स्पर्द्धा करने लगेगा।

अतः इसको मैं ही मार देऊँ क्योंकि इसने मेरे दिव्य धन की चोरी की है मैंने तो सब गुफा के चेतनों को भगा दिया था यह कहाँ से चोरी करने आया यह तो पक्का चोर मालूम पड़ता है ऐसा कहकर हाथ में त्रिशूल लेकर मारने के वास्ते श्रीशंकर जी दौड़े तो वह सुक पक्षी भी दिव्य ज्ञान को पाकर सर्वज्ञ होगया था अतः जान गया कि श्रीशंकर जी मेरे गुरू हैं यदि गुरू जी से बच गया तब फिर मैं अमर तो हो ही जाऊँगा अतः इस वक्त भागना ही उचित है ऐसा निश्चय करके वह सुकपक्षी भागा तो श्रीशंकरजी पीछे पड़े तब शुक भागते २ घबड़ाया कि अब मैं कैसे बच सकताहूँ अतः भगवान को याद किया तो उरप्रेरक परमात्मा ने स्मरण दिला दिया कि भगवान का अवतार श्रीदेवव्यास भगवान हैं अतः मैं उन भगवान के ही द्वारा गुरु महाराज के निरपराध क्रोध से बच जाऊँगा ऐसा मन में आते ही वह सुकपक्षी श्रीव्यास पत्नी श्रीवटिका अम्बा के पेट में पैठ गये तब शंकर जी व्यास पत्नी वटिका अम्वा को मारना निश्चय किये तो व्यास जी शंकर जी से बोले कि यह अन्याय आप क्यों करने लगे, तब शंकर जी बोले कि तुम्हारी पत्नी के गर्भ में मेरा शत्रु प्रवेश कर गया है अतः मैं मारूँगा। तब व्यास जी बोले कि मैं आपको श्राप देकर भस्म कर देऊँगा। तब श्रीशंकर जी देखे कि ये भगवान के अवतार हैं अतः इनसे लड़ना अनुचित होगा। इनसे विरोध ठीक नहीं है ऐसा निश्चय क के व्यास जी को प्रसन्न करके कैलास चले गये। फिर श्रीसुकदेव जी माता के गर्भ से बाहर नहीं निकल रहे थे कि भगवान की माया मुझे कहीं भ्रमित न कर देवें। अतः बारह वर्ष बीतने पर भी गर्भ से बाहर नहीं आने पर माता को बड़ा कष्ट हुआ तब व्यास जी ने कहा कि हे वत्स अब गर्भ से बाहर आओ तुम्हारी माँ बड़े कष्ट में है। तब गर्भ का बालक अपने दिव्य ज्ञान का आनन्द लेता गर्भ में से ही अपने पिता का उत्तर दिया कि पिता जी मैं गर्भ से बाहर तब आऊँगा कि जब आप भगवान को प्रत्यक्ष करके माया के चक्र प्रवाह को रुकवा देवें। तब व्यास जी ने भगवान के प्रगट होने का अनुध्यान किया तो तब भगवान प्रगट हुये, व्यासजी से बोले कि कहो व्यास जी क्यों मेरे को बुलाये ? तब व्यास जी बोले कि प्रभो ! मेरे पुत्र अपनी माँ के गर्भ से बाहर नहीं निकलते हैं अतः आप कृपा करके उस गर्भ के बालक का मनोरथ पूर्ण कर दीजिये। तब भगवान उस गर्भ के बालक से कहे कि वत्स

बाहर निकलो तुम्हारी मां कष्ट में है। तब गर्भ का बालक बोला कि प्रभो आप अपनी माया का चक्र प्रवाह रोकिये तो मैं निकलूंगा अन्यथा मुझे माया भूलभुलैया में डाल देगी इसलिये मैं नहीं निकलूंगा तब भगवान बोले कि अच्छा मैं इतना ही देर माया प्रवाह को रोकूंगा कि जितना देर एक सरसों का दाना बैल के सींग में पटकने पर वह सरसों का दाना बैल के सींग को छूता रहेगा।

तब सुक बालक बोले कि अच्छा जब मैं कहूँ तभी रोकियेगा। इस करार पर गर्भ का बालक अपना गर्भ बन्धन अपने हाथ से छुड़ा कर तैयार हुये तो तब माया चक्र प्रवाह रुकते ही बालक बन में भाग गये। व्यास जी हा पुत्र हा पुत्र कहते रोते रह गये। सुकदेव जी अमर कथा के प्रभाव से बन में विचरते हुए परमहंसोंके आचार्य होगये। यही यह अमरकथा अमर रामायण है। जिसको श्रीजनराज किशोरीशरण जी ने महावैराग वृत्ति से बुन्देलखण्ड-जालवन जिला के एक जंगल में बेंतवा नदी नाम की नदी तट पर १२ वर्ष का अनुष्ठान करके श्रीसुकदेव जी का प्रत्यक्ष दर्शन पाया और अमर कथा के साथ २ आपका सुक नाम पड़नेका भी परिचय तथा परमहंसोतत्व प्राप्त किया और श्रीसुकदेव जी की प्रेरणा से आपने यह अमर रामायण लिखा है।

श्री श्री १००८ रसिकाचार्य श्रीजनकराज किंशोरी शरण (श्रीरसिकअली) जी का संक्षिप्त जीवन

श्रीस्वामी जनकराजकिशोरी शरण जी का जन्मस्थान श्रीद्वारिकाजी के पास सुदामा नगरीके आपके पिता नागरजातीय एक ब्राह्मण थे। आप बाल्य अवस्थामें ही संसारसे वैराग लेकर भगवानके भरोसे अपने घरसे चल पड़े कुछ थोड़ासा खर्च अवश्य लिये होंगे, इस प्रकार श्रीअयोध्याजी आपहुंचे। आपके पास का खर्च भी समाप्त होगया और विदेश की भाषा भी नही समझ पाये अतः आपको कई दिन भूखे ही बीत गये। भूख से तथा बालपने की घबड़ाहट से व्याकुल चित्त आप श्रीहनुमान जी, श्रीराम जन्मभूमि, श्रीकनकभवन आदि स्थानों में दर्शन करने पर भी भाषा की अज्ञानता से भोजन न मांग सके। श्रीजानकी घाट सरयू तट पर बालू में पड़े २ आधी रात में आप बड़ी जोर से चिल्ला कर रोये। आपके रुदन आवाज को श्रीस्वामी रामचरणदास (करुणा सिन्धु) जी ने सुना, क्योंकि श्री करुणासिन्धु जी सैकड़ों सन्तों के साथ घास फूस की कुटिया बना करके श्रीजानकीघाट सरयू तट पर रहते हुये भजन करते थे अतः आपको रुदन की आवाज किसी की भी सहन नहीं होती थी इसी लिए आपका नाम प्रसिद्ध श्रीकरुणासिन्धु जी था। इस अरक्षित बालक के रुदन पर व्यथित होकर श्रीकरुणासिन्धु जी ने अपने शिष्य श्री राजराघोदास जी को बुलाकर कहा कि रोने वाले व्यक्ति का पता लगाओ। श्रीगुरू महाराज की आज्ञा पाकर श्री राजराघोदास जी महाराज दौड़कर उस स्थान पर आये कि जहाँ बालक रो रहा था। आपने बालक से रोने का कारण पूछा तो वह बालक काठिया

Scanned by CamScanner

वाड़ा की भाषा में बोला कि मुझे चौदह आवरण श्री कनक महल का तथा अनन्त पार्षदों के साथ सभाकुञ्ज में श्रीसीताराम जी का दर्शन हुआ मैं भूख से व्याकुल होनेके नाते बेहोश पड़ा था श्री जानकी जी ने मुझे देखा तो अपनी मुख्य सखी द्वारा मुझे बुलाया मैं कनकभवन दिव्य मार्ग से उस सखी द्वारा सभाकुञ्ज में गया श्री जानकी जी को प्रणाम किया, श्री जानकी जी ने मुझे श्रीरामचन्द्र जी के हाथ समर्पण किया श्रीरामचन्द्र जी ने मुझे एक चारुशीला जी नाम की सब सखियों की स्वामिनी जी के हाथ दिया और यह कहा कि यह मेरी धरोहर को तुम अपने समाज में रक्खो कहा तो तब श्रीसर्वेश्वरी श्रीचारुशीला जी मुझे अपने हृदय से लगाई तो मेरा दिव्य स्वरूप हो गया था जब मेरी नींद खुली तो तब मुझे इस शरीर को पीड़ा फिर दर्द करने लगी इसी लिए मैं रो रहा हूँ कि मेरा वह दिव्य दर्शन दृश्य कहाँ गया। रोते २ बालक ने इतनी कथा सुनाई तो श्री राजराघोदास जी का भी जन्म गुजरात देशका ही था अतः वे उनकी भाषा को जानते थे। अत्यन्त करुणामें भींजकर महाराज राज राघोदास जी ने उस बालक को और भी बहुत सी बात पूछकर हृदय से लगाकर श्रीकरुणासिन्धु जी महाराज के पास में लाकर सब समाचार सुनाये तब श्रीकरुणासिन्धु जी ने ब्राह्मण कुमार अर-चित उस बालक के जीवन पर विचार करके अत्यन्त प्रसन्न हुये और जैसे अपने ऊपर कृपा हुई थी उसी प्रकार की इस बालक पर हुई है ऐसा जानकर जैसे श्रीगुरु महाराज ने मेरा पंच संस्कार अपने शिष्य श्री रघुनाथप्रसाद जी से श्री हनुमान जी की प्रेरणा जानकर कराया था वही प्रकार यह भी घटना है अतः श्रीयुगल सरकार की प्रेरणा जानकर श्रीकरुणासिन्धु जी ने भी उस बालक का पंच संस्कार अपने शिष्य राजराघो दास जी से करवाया।

पंच संस्कार करके साधू समाज में रखकर पढ़ाने का इन्तजाम कर दिया अब बालक बड़ी शीघ्रता से हिन्दी भी समझ गये। आसपास के पढ़ाने वाले सबसे अधिक पाठ हो जाने पर तब श्रीगुरू महाराज की आज्ञा से काशी गये, थोड़े ही समय में भारी विद्वान हो गये। श्रीगुरू महाराज के पास आकर उपासना का प्रश्न किये तो श्रीराजराघो दास जी महाराज ने अपने शिष्यता के नाते बड़े प्रेम से अपनी उपासना भाव का ही उपदेश करने लगे।

श्रीमहाराज राजराघोदासजी पहले गुजरात देश में आचारी वैष्णव थे घर में वैराग होते पर विरक्त होने की इच्छा से श्रीअयोध्या जी आये और श्रीकरुणासिन्धु जी से श्रीसीताराम उपासना का सतसंग पाकर श्री सीताराम युगल मन्त्रराज लिए सतसंग से उपासना भावों को जानकर अपने श्री गुरू महाराज श्री करुणासिन्धु जी से उपासना सम्बन्ध माँगे तो श्रीकरुणासिन्धु जी ने पूछा कि आप के मन में श्रीसीताराम जी की कौन सी सेवा अच्छी लगती है तब श्रीराजराघो दास जी बोले कि मैं श्रीजानकी जी का छोटा भाई रहूँ और श्रीरघुनाथ जी को दहेज में दासभाव से दिया जाऊँ अपनी बड़ी बहिन के दुलार पूर्वक सरकार श्रीरघुनाथ जी का दास बना रहूँ। तब आपकी ऐसी रुचि जान-कर श्रीकरुणासिन्धु जी महाराज ने आपको नर्म सख्य सम्बन्ध दिया है। इस सम्बन्ध का स्वरूप

Scanned by CamScanner

५ वर्षकी उमर से सखी होकर श्रीयुगल सरकारकी एकान्तिकी सेवा में भी रह सकते हैं और ६ वर्षकी अवस्था से सख्य भाव भी बना रहता है किशोरावस्था में दास भाव में सब जगह बाहरी टहल कर सकते हैं। यही भावना श्रीराजरायो दास जी महाराज को श्रीकरुणासिन्धु जीं दिये थे तो आप भी अपने शिष्य श्री जनकराज किशोरी शरण जी को यही भाव उपदेश करने पर श्री जनकराज किशोरा शरण जी महाराज तो अब पूरे पण्डित होगये थें अतः आपने अपने गुरू महाराज से प्रार्थना करके कहा कि मुझे शृङ्गार रस का ही उपदेश दिया जावै तब श्रीराबरायोदास जो आपको श्री करुणासिन्धु जी के पास लाकर के बोले कि महाराज जी यह जनकराज किशोरीशरण को मैं आपके श्रीचरणों में भेट चढ़ाता हूं कहकर दोनों गुरू चेला साष्टांग दण्डवत किये तो तब श्रीकरुणासिन्धु जी बोले कि यह मेरा ही है भेट कैसा? इस प्रकार पूछा तो तब श्रीराजरायोदासजी बोले कि मैं अपनी भावना का उपदेश देने लगा तो ये शृँङ्गार भाव माँगने लगे तब मेरा तो दासभाव है मैं कैसे शृँङ्गार भाव देसकता हूं सरकार ही इस पर कृपा कर दिया जावै ऐसा कहा तो तब श्रीकरुणासिन्धु महाराज ने सम्बन्ध पत्र देकर शृँङ्गार भावना दिया तबसे अष्टयाम भावमें विलीन हुये महाराज श्रीजनकराजकिशोरीशरण जी का यह श्रीसीतारामजी का दिव्य धाम रूप लीला नाम प्रभाव प्रत्यक्ष हुआ, आप भजनके प्रभाव से उच्चकोटि के सन्त प्रत्यक्ष हुए कि आपकी दिव्य धाम यात्रा में भी देवताओं द्वारा फूल वर्षा हुई, दिव्य बाजा बजे, सं० १९०६ मार्गशीर्ष पूर्णिमा को सारे मिथिला नगर भर में दिव्य पुष्प दर्शन दिये सब लोग आश्चर्य किये। तथा आपकी रचना कृत्य पर आपके साहित्य से आज भी आश्चर्य ही होता है आपने जिस प्रकार साहित्य प्रगट किया यह दिव्य पार्षदत्व का ही सूचक है।

श्री करुणासिन्धु जी महाराज के कृपा पात्र अशख्य एक से एक महान पुरुष हुये। जिनमें श्रीराजरायोदास जी तथा श्रीरसिकअली जो और श्रीयुगलप्रियाजी इन तीन महापुरुषों की परम्परा आज भी वर्तमान है, प्रसिद्ध है। परन्तु दिव्य साहित्य रचना में तो श्रीरसिकअली जी के सदृश दिव्य रस भाव में प्रवेश कराने वाला साहित्य और किसी भी आचार्यों का साहित्य नहीं मिला है। श्री अग्रस्वामी जी ने साहित्य प्रगट तो बहुत किया था परन्तु अतिकाल होने की वजह से सब साहित्य बिखर कर लुप्त होगया। जो बचा भी है तो वह मनमुखी लोगों द्वारा बिगाड़ा गया है जिसमें एक आचार्यों के साहित्य भक्षक समाज उत्पन्न हुआ हैं। जो समाज अपने पूर्वजों का तो कोई साहित्य नहीं पाया परन्तु हमारे पूर्वजों श्रीअग्रस्वामीजी श्रीकल्ह स्वाम जो के परम्परागत आचार्योंके ग्रन्थोंको अपने मनमुखी मत पुष्टि करनेके पुरुषार्थमें सफलताके लिये कटौतीका सगर कुमारोंका सरीखा परिश्रम कर रहे हैं। परन्तु भले श्रीकलियुग महाराज उनके द्वारा संसार के जीवों को भ्रम में डाल कर अपना पेट पोषैं, परन्तु सतपुरुषों के दृष्टि में यह कभी नहीं आ सकता है कि श्रीसीताराम मन्त्रदाता श्रीहनुमान जी (सर्वेश्वरी श्रीचारुशीलाजी) के सिवाय और आचार्यया श्री चन्द्रकला सर्वेश्वरी हों। यद्यपि श्रीरसिकअली जी का और श्रीयुगलप्रिया जी का आपस में गुरुभाई गुरुभाई के नाते घनिष्ट प्रेम था

और श्री युगलप्रिया जी को भावनावस्थाके स्वप्नमें मृदंग बजाना सिखाने के नाते श्रीचन्द्रकलाजी को मृदंगाचार्य श्रीयुगलप्रियाजी ने मान लिया था तो आपकी भावनाको पुष्टि करने वाला कुछ आधार भी चाहिये था इसलिए श्री अग्रस्वामी जो ही श्रीचन्द्रकला हैं ऐसा आपने रसिक प्रकाश भक्तमाल में लिख दिया जिससे आपके भाव में सन्तोष हो परन्तु यह लेख सर्वेश्वरी श्रीचारुशीला जी को नीचा दिखा कर चन्द्रकला स्वयं सर्वेश्वरी बनें इस प्रकार का तो नहीं था परन्तु कली महाराज को मौका मिल गया अस्तु श्रीसीताराम मन्त्रदाता श्री हनुमान जी ही श्री सम्प्रदाय आचार्य हैं तथा श्री हनुमान जो सर्वेश्वरी श्री चारुशीला जी हैं यह बात वेद शास्त्र तथा पूर्वाचार्य सब प्रमाण बहुत होने पर भी केवल दो एक वेद मन्त्र व शास्त्र श्लोक प्रमाण दे रहा हूँ। ऋग्वेद ५-३-३ वेद में—

तव श्रिये मरुतो मर्जयन्त रुद्र यत्ते जनिम चारु चित्रम्।
पदं यद्विष्णो रूपपं निधायि तेन पासि गुह्यं नाम गो नाम॥ इति मन्त्रस्यभाष्यं
एतस्य श्रीरामस्य मुख्य मुपासकं रुद्रं (हनुमन्तं) स्तुवन्ति देवाः—

श्रीसीताराम जी के मुख्य उपासक श्रीहनुमानजी को देवता लोग स्तुति करते है—

हेरुद्र हेहनुमन् .तवश्रिये त्वदधिगत संम्पत्प्राप्त्यर्थं-
रामविद्या वाप्त्यर्थं मरुतो देवाः मर्जयन्त शोधयन्ति,
तपोध्यानादिनात्मानं यत् यतस्ते तव जनिम जन्म-
चारु रम्यं यत् यतस्त्वया चित्रं पदं रेफांरूपेणाग्निना युक्तं॥

अर्थ—हे रौद्र भयानक रूप धारण करने वाले श्री हनुमान जी ! आपके हृदय कमल में विराजमान दिव्य सम्पत्ति श्री सीताराम नाम रूप लीला धाम को प्राप्त करने के लिये देवता (ऋषि मुनि महर्षि देवर्षि ब्रह्मर्षि) सब आपकी स्तुति करते हैं क्योंकि आपका माधुर्यमय जन्म का नाम श्री चारुशीला जी है और आपके हो आधीन श्री सीताराम जी हैं। यह अर्थ महाभारत के नीलकण्ठी टीका कार श्री गोविन्द सूरी पुत्र श्री नीलकण्ठ जी ने किया है—

बम्बई से छपा मन्त्र रामायण में देख लीजिये इसके अलावा भी इस वेद मन्त्र के अर्थ अन्य विद्वानों द्वारा किया गया—

श्रीचारुशीला रूपेण अवतीर्णं श्रीहनुमन्तं स्तुवन्ति देवाः-हे रुद्र-रुद्रावतार हनुमन मरुतः देवाः मर्जयन्त-मार्जयन्ति तप आदिभिः स्वात्मानं सोधयन्ति इत्यर्थः॥ किमर्थं तन्-त्वदधिगत श्री-सीताराम विद्या वाप्त्यर्थम्। सुद्धान्त स्कर्णाः श्रीसीताराम तत्वं श्रीयुगल मन्त्रार्थादि न्प्राप्त्यर्थम्। कुत इति चेत्-यत् यतः ते तव चारु (चारुशीला रूपेण) जनिमजन्म चित्रं आश्चर्य जनकं अभूत्। पूर्वं वायुपुत्रो हनुमान। हनुमान रूपेण लंका दाहकः। ततो रुद्रः रुद्रावतारः संहार कर्ता। अधुना चारु-

Scanned by CamScanner

शीला सर्वेश्वरीश्रीसाकेते सम्प्रदाय प्रवर्तिकासखी वा श्रीसाकेता दवतीर्णा एवम्भूता सर्वेश्वरी श्रीचारु-शीला शास्त्र मान्यापि तथा अधुनापि सम्प्रदाय मान्या सर्वेश्वरी श्रीचारुशीला इत्यपि आश्चर्यं चित्र पदस्याभिप्रायः ॥ चारु नाम सुन्दरं ते जजिम जन्म अमूत-इति चारु पदे श्लेषात्। चारु शब्दस्य चारुशीला इत्यर्थ करणं कथमिति शंका शास्त्र विद्भिः भावुकैः रसिकैः न कार्यः॥ यतः शास्त्रमेव तथार्थ करणे प्रमाणम् तच्च-शब्द साधुत्वे प्रधानं व्याकरणं तथाहि--सिद्धान्त कौमुद्यां तद्धितेप्रागिवीये ठा जादा वूर्ध्वं द्वितीया दचइति सूत्रे--चतुर्थौ दनजादौ वा लोपः पूर्व पदस्य च। अप्रत्यये तथैवेष्टइवर्णा ल्लइलस्य च--इति श्लोक वार्तिकस्थस्य अप्रत्यये तथैवेष्ट इति खण्डस्य व्याख्यान भूतेन विनापि प्रत्ययं पूर्वोत्तर पदयो र्वालोपो वक्तव्य इति वार्तिकेन सिध्यति। यथा-देवदत्तः-देवः दत्त इत्यत्र प्रत्यये अविधीयमानेऽपि पूर्वस्य देव पदस्य लोपे दत्त पदेन--उत्तर पदस्य लोपे सति देव पदेन देवदत्तस्य ग्रहणंभवति तथैवात्रापि-चारुशीलेति समुदायस्य उत्तरस्य शीलेति पदस्य लोपे सति चारु पदेन चारुशीलेत्यर्थस्य पदस्य च ग्रहणं बोधः, यः शिष्यते स लुप्यमानार्थाभिधायीति न्यायात्॥ अपरञ्च-नामैक देशेन नाम मात्रस्यापिग्रहणम् इत्यपि न्यायः। पातञ्जले महाभाष्ये सिद्धे शब्दार्थ सम्बन्धे-इति वार्तिक व्याख्यान प्रसंगे--उपलभ्यते--सत्या भामा सत्यभामा इतिउदाहरणं। तथैव प्रकृत्येपि सङ्ग--मनीयम्॥

चारु शब्द का चारुशीला अर्थ कैसे हुआ ऐसी शंका विद्वान भावुक (रसिक) जन नहीं कर सकते हैं, क्योंकि साधुत्वका विधान करनेवाला शास्त्र व्याकरण है, वह प्रमाण सर्वमान्य है। जैसेकि-

सि० कौ० त० प्रागिवीय प्र: में ठा जादा वूर्द्धं द्वितीया दचः,

इस सूत्र के ऊपर श्लोक वार्तिक है—

चतुर्थौ दनजादौ लोपः पूर्व पदस्य च। अ प्रत्यये तथै वेष्ट इवर्णाल्ल इलस्य च॥

इसके तृतीय चरण के व्याख्यान में--विनापि प्रत्ययं पूर्वोत्तर पदयोः र्वालोपो वक्तव्यः, ऐसा है, उसका अर्थ है—

प्रत्यय न हो तौ भी पूर्व पद या उत्तर पद लोप विकल्प से होता है।

उदाहरण—देवदत्तः। दत्तः--देवः, यहाँ कोई प्रत्यय नहीं होता है, परन्तु देवदत्त शब्द में पूर्व पद लोप हुआ तो दत्तः। उत्तर पद लोप हुआ तो देवः। जो देवदत्त शब्द से बोध होता है, वहां केवल दत्त अथवा देव से भी अर्थ बोध होता है, ऐसे यहां भी उत्तर पद शीला का लोप हुआ है, केवल चारु शब्द से चारुशीला रूप अर्थ का बोध होता है और--सिध्दे शब्दार्थ सम्बन्धे, इस भाष्य वार्तिक के व्याख्यान में--पातञ्जल महाभाष्य ने भी लिखा है—नामैक देशेन नाम मात्रस्य ग्रहणम्, भवतीति—नाम के एक भाग से भी सम्पूर्ण नाम का ग्रहण होता है जैसे--सत्या-भामा-सत्यभामा, केवल सत्या शब्द से या केवल भामा शब्द से भी सत्यभामा का ज्ञान होता है। ऐसे ही यहां पर भी चारु शब्द से भी चारुशीला अर्थ का बोध होता है। श्रीहनुमत संहिता के प्रथमाध्याय में लिखा है—

Scanned by CamScanner

त्वं साक्षा च्चारुशीला च नित्या मध्ये प्रपूजिता ॥८॥

श्री अगस्त्य जी श्री हनुमान जी से कहते हैं कि हे हनुमान जी आप श्रीसीताराम जी के माधुर्यमय विलास स्थान में श्रीसीताराम जी के सखि समाज में अग्र पूज्या श्री चारुशीला जी हैं अतः हमको श्रीसीताराम जी के माधुर्य लीला का उपदेश कीजिये ।

हनुमत संहिता के इस श्लोक का अर्थ श्रीस्वामी युगलानन्दशरण जी ने इस प्रकार किया है

नित्य सु परिकर बृन्द बीच राजत हो सन्तत । नाम ललित मुद मिलित चारुशीला सतसम्मत । यूथेश्वरी प्रधान निकर परिकर पद पूजित । युगल विलास विचित्र विमल बानी कल कूजित ॥ श्रीयुगल विनोद विलास पृष्ठ६ पं०६। श्रीयुगलानन्यशरणजींने तो अपनी वाणीसे कहीं भी अपने पूर्वजोंके विरुद्ध चन्द्रकला जी को सर्वेश्वरी नहीं लिखें पुराना प्रमाण कुछ भी नहीं मिलेगा परन्तु अब नये भगत सभी महात्माओं के नामों को बदनाम करने के लिए नये २ पद व ग्रन्थादि रचना करके प्रकाशित कर रहे है जैसे हनुतवाटिका वाली लोमस संहिता यह कलि महाराज की लीला में अभागे लोग फसेंगे ।

श्रीराम जी के वहु पत्नित्व का प्रमाण

सर्वलोक कर्ता भर्ता संहर्ता भोक्ता आदि कारण परात्पर ब्रह्म परमात्मा श्रीराम जी के लिए वहुपत्नीत्व में शंका होना ही अनुचित है । फिर भी संसार तो संसार (शंसरण शोल अथवा शंसय समूह) ही है ऐसी स्थित में जीव (चेतन आत्मा) अज्ञान अन्धकार दुःख का स्वरूप संसार में फँसा है इसीलिए ईश्वर नेअपनी कृपाडोरी वेद शास्त्र प्रकाशक आचार्य परम्पराको किया. परन्तु बीचमें कुछ माया प्रपंची विद्वान अपनी मायाको ईश्वरकी इच्छासे उत्पन्न हुई ईश्वरीय माया को सहायता देनेवाले उत्पन्न हो जाते हैं कि जिसमें जीव कुछ भ्रम में भी पड़ जाते हैं, ऐसी स्थिति में जीवों का संसय दूर करके दृढ़निश्चय द्वारा ईश्वर आराधना प्रचार आचार्यों ने किया है, वह प्रचार दो प्रकार का है एक तो संसार में फँसे जीवों को धम मार्ग में लाने के लिए संसार से वैराग्य उत्पन्नार्थ तथा दूसरा भगवत अनुरागी विद्वान परमहंसों की शास्त्र सम्मत अनुसन्धान दृष्टि देने के लिए। अतः जो लोग एक पत्नी व्रत का अर्थ केवल श्रीसीता जी के सिवाय और को श्रीराम जी विवाह नही किये हैं ऐसा मानते हैं उनका मानना तथा प्रचार करना बहुत अच्छा है कि संसार के जीव ज्यादा विवाह न करें जिस एक पत्नी को वेद विधि से अपनाते हैं उसके सिवाय और संसार से वैराग्य प्राप्त करें कठिन तपस्या द्वारा धर्म शुद्धता को प्राप्त करें । परन्तु जो लोग भगवत भक्तों के भाव में क्षोभ पैदा करने के लिए कमर कस करके श्रीराम जी के बहुपत्नीत्व का खण्डन करते हैं उनके लिये यह प्रमाण दिया जाता है कि श्री राम जी का बहुत स्त्री होना अधर्म नहीं है क्योंकि सभी जीव चेतन शक्ति स्वरूप होने से परात्पर पुरुष परमात्मा के भोग्य हैं अवतार काल में भी आपका चरित्र बहुपत्नीत्व से खाली नहीं हैं । जब श्री

श्री राम जी के पिता जी श्री दशरथजो महाराज के सात सौ अथवा ३५० रानी थी तो वे भी धर्मात्मा ही थे जैसा कि श्रीदशरथजो महाराज के बहुत स्त्रीत्व का श्रीबाल्मीकीय रामायण में लिखा है—

पतत्रिणा तदा सार्धं सुस्थिेन च चेतसा। अवस द्रजनीमेकां कौशल्या धर्म काम्यया॥३४॥बा० बा० सर्ग १४ महिष्या परिवृत्या च वावातामपरां तथा ॥ पतत्रिणस्तस्य (दशरथस्य ३५)

तथा अयोध्या काण्डे—अर्द्ध सप्त शता स्तत्र प्रमदा स्ताम्र लोचनाः।

कौशल्यंपरि वार्याथ शनैजग्मुधृत व्रताः ॥१३॥ सर्ग–३४॥

आदि बहुत प्रमाण हैं। इस प्रकार उन धर्मात्मा महाराज श्री दशरथ जी के सभी पुत्रों के बहुत स्त्री थी जैसा कि श्रीमद्बाल्मीकीय रामायण में अयोध्या काण्ड सर्ग ८ श्लोक १२ में—

हृष्टाः खलु भविष्यन्ति रामस्य परमाः स्त्रियः॥

अप्रहृष्टा भविष्यन्ति स्नुषास्ते भरतक्षये ॥१२॥

अर्थात् मन्थरा ने श्री कैकेई माता से कहा कि हे कैकेई यदि श्रीरामजी राजा हो गए तो श्रीराम जी की परम सुन्दरी सब स्त्रियायें अत्यन्त हर्षित होंगी और तुम्हारे पुत्र श्री भरत जी की सब स्त्रियायें अत्यन्त दुखी होवेंगी। अतः यह बोली बहु पत्नीत्व की सूचक है तथा और भी—

बहूनां स्त्री सहस्त्राणां बहूनां चोप जीविनाम॥

परिवादोऽपवादोवा राघवे नोप पद्यते ॥२७॥

श्री महाराज दशरथ जी कहते हैं कि हे कैकेई श्री राम जी तो अद्भुत गुणवान हैं कि जिनके बहुत हजार स्त्रियायें हैं और उन स्त्रियों की सेवा में एक एक स्त्री के साथ बहुत हजार उपजीवी वाली स्त्रियायें हैं इस प्रकार बहुत स्त्रियों के पति होने पर भी श्री राम जी के पास उन स्त्रियों का कोई प्रकार का झगड़ा (कलह) या सिकायत (चुगली) नहीं आती है, क्योंकि श्री राम जी ने अपने अद्भुत गुण प्रभाव तथा नीति से सबको सम्यक् प्रकार तृप्त कर रक्खा है अतः सब सबसे अतिशय प्रेम करती है यह गुण जैसा श्री राम जी में है ऐसा गुण मेरे में नहीं है क्योंकि मेरे रहते तुमने श्री कौशल्यादि सबको दुख दिया।

तथा इसी प्रकार महाराज श्री दशरथ जी ने आगे भी अध्याय ४२ में कहा है कि—

यः सुखे नोपधानेषु शेते चन्दन रूषितः॥

बीज्य, मानो महार्हाभिः स्त्रीभिः मम सुतोत्तमः ॥१५॥

जो मेरे उत्तम कुमार श्री राम जी उत्तम कुल उत्तम गुण रूप वती महान उत्तमा बहुत सी स्त्रियों के द्वारा बीजित होते हुए उत्तम पलंगों में उत्तम तकियादि लगा कर लाल चन्दन परिलिप्त होकर शयन करते थे वे आज बन में वृक्ष तले कैसे सोवेंगे।

इसी प्रकार श्री सुमित्रा माता ने भी श्री कौशल्या माता से कहा कि जब श्रीराम बन से लौटेंगे तो पितृ ऋण से उरिण होकर राजगद्दी में बैठेंगे उस वक्त श्रीराम जी के साथ श्रीसीता जी भी अपनी

Scanned by CamScanner

श्री भूलीलादि सखियों के साथ अभिशिक्त होवेंगी।

पृथिव्यासह वैदेह्या श्रिया च पुरुषर्षभः ॥
क्षिप्रं तिसृभिरेताभिः सह रामोऽभिषेक्ष्यति ॥१७॥ वा० अ० स० ४४॥

इसी प्रकार श्री जानकी जी ने भी श्री राम जी से कहा है वाल्मीकीय आरण्य० सर्ग ६ में स्व दार निरत श्चैव नित्यमेव नृपात्मज। धर्मिष्ठः सत्य सन्धश्च पितुर्निर्देश कारकः ॥६॥ हे प्रीतम आप अपनी समस्त स्त्रियों में हमेशा आशक्त रहते हैं तथा धर्म को इष्ट मानते हैं सत्यवादी हैं पिता के आज्ञा का पूर्ण पालक हैं। ऐसा कहा है अतः -दार शब्दो नित्यं बहु वचनान्तः—इस व्याकरण दृष्टी से श्रीरामजी का बहुत स्त्री होना सिद्ध है। इसी प्रकार श्री जानकी जी ने वियोगावस्था में भी विलाप करते हुये कहा है सुन्दर काण्ड सर्ग २८ में—

पितु निर्देशं नियमेन कृत्वा वनान्निवृत्त श्च रित व्रतश्च ॥
स्त्रीभिस्तु मन्ये विपुलेक्षणाभि स्त्वं रंस्यसे वीतभयः कृतार्थः ॥१४॥

हा प्रीतम आप तो नियम पूर्वक पिता के आज्ञा का पालन करके वनवास व्रत से निवृत्त होकर तथा कृतार्थ (पूर्णकाम) होकर निर्भयता से बड़ी २ आँख वाली अपनी मेरे से अन्य स्त्रियों के साथ रमण करेंगे परन्तु मैं क्या करूँ ॥ यह विलाप किया। इसी प्रकार कवि श्रीवाल्मीकि जी ने भी कहा है युद्ध काण्ड सर्ग २१ में जब श्रीरघुनाथजी समुद्र किनारे समुद्र के लिये धारणा देने लगे तो उस वक्त कवि ने कहा—

मणि काञ्चन केयूर मुक्ताप्रवर भूषणैः ॥
भुजैः परम नारीणा मभिमृष्ट मनेकधा ॥३॥

अहा जो श्रीराम जी के भुजा उत्तम स्त्रियों के सुन्दर बहुत हाथों से अनेक प्रकार अभिमर्दित होते थे वे ही उत्तम मणि मुक्तादि रत्नों के केयूरादि भूषणों द्वारा भूषित होने योग्य श्रीराम जी की भुजा आज समुद्र किनारे कुशासन पर सिर से दबे श्रीराम जी के तकिया बने हुये हैं॥

इसी प्रकार उत्तर काण्ड सर्ग ४२ में भी श्रीराम राज्याभिषेक के बाद जब श्री सीताराम जी अशोक बन में बिहार करने गये तो वहाँ पर श्री वाल्मीकी जी ने लिखा है कि—

उपानृत्यंश्च राजानं नृत्य गीत विशारदा ॥
वालाश्च रूप वत्यश्च स्त्रियः पान वशा नुगाः ॥२०॥
मनोभिरामा रामा स्ता रामो रमयताम्वरः ॥
रमयामास धर्मात्मा नित्यं परम भूषिताः ॥२१॥

अत्यन्त रूपवती नवीन उमर वाली संगीत (नृत्य गान वजान) की भारी विद्वान श्रीरामजी के मन को अत्यन्त प्रिय लगने वाली विलासाशक्त चित्त वाली स्त्रियोंके साथ रमणशीलों में श्रेष्ठ तथा धर्मात्मा श्रीरामजी ने नये २ श्रृङ्गार करके नये २ ढंग से नित्य रमण किया कराया ॥२०-२१॥

Scanned by CamScanner

अब प्रश्न होता है कि यज्ञ में स्वर्ण प्रतिमा क्यों रक्खी गयी ? जैसा कि श्रीवाल्मीकीय उत्तर काण्ड सर्ग ६१ में लिखा है कि—

काञ्चनीं मम पत्नीं च दीक्षायां ज्ञांश्च कर्मणि ॥ अग्रतो भरतः कृत्वा गच्छत्वग्रे महायशाः ॥२५॥

श्रीरामजी ने कहा कि यज्ञ के समस्त सामग्रियों के साथ मेरी दीक्षित हुई स्वर्ण निर्मित पत्नी को भी श्री भरत जी महायशस्वी यज्ञ कर्म के विद्वानों को आगे करके लेचलें। जबकि पुराणों में लिखा है कि श्री ब्रह्मा जी ने पुष्कर क्षेत्र में यज्ञ किया तो दीक्षा में बैठने के वक्त अर्द्धांगिनी सावित्री को बुलाया तो सावित्री ने आने में देरी कर दिया तब श्री ब्रह्मा जी ने दूसरी स्त्री गायत्री को वाम भाग में बैठा लिया था। इसी प्रकार श्रीराम जी क्यों नहीं कर लिये ?

उत्तर यह है कि एक तो श्रीसीता जी पटरानी थीं जैसे श्री दशरथ जी ने श्री कौशल्या जी को ही यज्ञ में अपने साथ दीक्षित किया था इसी प्रकार श्रीराम जी ने भी अपना कुल धर्म निभाया। दूसरा उत्तर यह है कि श्री मिथिलेश जी को श्री सीता जी अत्यन्त प्रिय थीं इस लिये श्री सीता जी के पाणिग्रहण समय श्री राम जी से प्रतिज्ञा पूर्वक पाणिग्रहण कराया गया कि धर्म कार्यमें आप श्रीसीता जी के सिवाय दूसरे को मत स्वीकार करना, क्योंकि श्री वाल्मीकीय में बालकाण्ड सर्ग ७३ में लिखा है कि—

अब्रवीज्जनको राजा कौशल्या नन्द वर्द्धनम् ॥२३॥ इयं सीता मम सुता सहधर्मचरी तव ॥
प्रतीच्छ चैनां भद्रं ते पाणिं गृह्णीष्व पाणिना ॥२४॥ पतिव्रता महा भागा छायेवा नुगता सदा ॥
इत्युक्त्वा प्रक्षिपद्राजा मन्त्र पूतं जलं तदा ॥२५॥

महाराज श्रीजनक जी ने श्री कौशल्या जी के आनन्द वर्द्धक का कहा कि—हे श्रीराम यह मेरी कन्या सीता है (अर्थात् सिध धातू से गति अर्थ में--"गतौ ज्ञान गमन प्राप्ती" इस प्रकार अर्थ होता है गति ज्ञानेसे श्रीरामकी ज्ञान स्वरूपा सीता, इसी प्रकार गमनप्राप्ति आदि अर्थ प्रकारसे समस्त श्रीराम ऐश्वर्य शक्ति स्वरूपा सर्व सिद्धि प्रदा अहलादिनि शक्ति सीता हैं) अतः आपके समस्त धर्म कार्य में येही सीता एकमात्र होवैं। इस प्रकारकी प्रतिज्ञापूर्वक आप इनका अपने हाथ से पाणिग्रहण करें इसीमें आपका कल्याण होगा। और ये सीता भी पतिव्रता होने से महाभाग्यवती होवें आपके छाया की तरह से अनुगमन करें इस प्रतिज्ञा पर मन्त्रपूत जल प्रक्षेपण हुआ, साधु साध्विति देवानां मृषीणां वदतां तदा ॥ देव दुन्दुभि निर्घोष :पुष्प वर्षो महानभूत् ॥२६॥ देवता ऋषियों का साधुवाद इस प्रतिज्ञा के स्वीकृतिमें ही हुआ है क्योंकि विवाह तो धनुष टूटतेही होगया था। टूटतही धनुभयउ बिबाहू–मानस

श्रीवाल्मीकी जी भी लिखते हैं—यथा अयोध्या काण्डे सर्ग ११८—

दीयमानां न तु तदा प्रति जग्राह राघवः ॥ अविज्ञाय पितु श्छन्दमयोध्याधिपतेः प्रभोः ॥५१॥

श्रीसीता जी श्री अनुसूया मातासे कहती है कि धनुष टूटते ही मेरे पिता मेरे हाथका श्रीरामजी के लिये दे रहे थे परन्तु श्रीरामजी ने पिताजी की आज्ञा बिना नहीं लेऊँगा, कहा तो तब श्रीजनकजी ने महाराज दशरथ जी को बुलाया है। अतः इसी से धर्म कार्यों में श्रीसीता जी के सिवाय दूसरी स्त्री को श्रीराम जी नहीं स्वीकार करते थे यही कारण था स्वर्ण मूर्ती बनाने का।

अब एक पत्नीव्रतो रामः का क्या अर्थ होगा इस पर कहा जाता है कि स्वपत्नि रेव व्रतः— केवल अपनी स्त्रियोंके सिवाय परभोग्याओंको क्यों लेंगे, शेरभी दूसरेका मारा शिकार नहीं खाताहै॥ नारि बिलोकहि हरषि हिय निज निज रुचि अनुरूप। जनु सोहत शृँगारधरि मूरति परम अनूप। मानस

—:*:—

विषय सूची

Scanned by CamScanner

Scanned by CamScanner

॥ इति शुभम्॥

❀ श्री अमर रामायण ❀

(श्रीराम रत्न मञ्जूषा)

❀ बन्दना ❀

जै जै सीताराम जी सबके कारण एक ॥
अद्भुत धाम चरित्र युत निरखत सन्त विवेक ॥१॥
रूप सींव रस सींव दोउ निर्गुण सगुण अपार ॥
रास रंग रस सिन्धु में राम नाम सुख सार ॥२॥
जै मिथिलाधिप नन्दनी जै अवधेश किशोर ॥
जैति चारुशीला अली सकल सखिन शिर मौर ॥३॥
जै जै जै हनुमान श्री श्रीप्रसाद अवतार ॥
चारुशिला सर्वेश्वरी तीन रूप निजधार ॥४॥
जै श्री शुभगा 'भरत' तन सेवा समय सुधार ॥
महाविष्णु अवतार महि 'सनक' 'सुशीला' चार ॥५॥
जै विमला अरु 'लछिमना' लक्ष्मण रूपहु धार ॥
नारायण, पुनि शेष तन सेवा समय विचार ॥६॥
जै हेमा 'श्री' रिपुदमन, तीन रूप सुख सार ॥
दम्पति सेवा सुरुख लखि 'भौमा' सुक मुनि धार ॥७॥
सूर्य अंश सुग्रीव 'शिव' शंकर्षण, अवतार ॥
जय अतिशीला प्यारि प्रिय सु वरारोहा धार ॥८॥
जयति बिभीषण 'भीषणा' विश्व मोहनी शक्ति ॥
पद्म सुगन्धा लाड़िली लाल प्रिया वर भक्ति ॥९॥
भू शक्ती भूधरण की सुलोचना सिय प्यारि ॥
जयति जृम्भणा हरि प्रिया जाम्बवान तनुधारि ॥१०॥
जयति क्षमावति क्षेमदा 'क्षेमा' क्षमावतार ॥
अंगद विद्या वारिधर 'बागीशा' वर चार ॥११॥
पार्षदाष्ट सिय राम के रसिकन हिय सुख सार ॥
वन्दौं सबके पद कमल दिव्य दृष्टि दातार ॥१२॥

—:❀:—

* श्री अमर रामायण टीकाकार व प्रकाशकः *

जानकीशरण मधुकरिया

श्रीचारुशीला मन्दिर, श्रीजानकीघाट

श्री अयोध्या जी

Scanned by CamScanner

श्री अमर रामायण

श्री कनक भवन विहारिणी विहारिणौ विजयेते तराम् ॥ श्रीमत्यै सर्वेश्वर्यै श्रीचारुशीलायैनमः ॥
श्रीमन्मारुतनन्दाय नमः ॥ श्रीमतेरामानन्दायनमः ॥ श्रीमतेअग्रदेवाचार्यायनमः ॥
श्रीमतेकरुणासिन्धवेनमः ॥ श्रीगुरुचरणकमलेभ्यो नमः ॥ श्रीमत् दयासिन्धु चरणकमलेभ्योनमः ॥

श्री भरद्वाज उवाच

नित्यं दाशरथेर्धामाऽयोध्याख्यं वर्णितं त्वया ।
नारदो वाल्मीकिं प्राह ब्रह्मलोकं गमिष्यति ॥ १ ॥

श्री भरद्वाज उवाच :—श्री भरद्वाजजी श्री याज्ञवल्कि जी से बोले कि हे मुने ! आपने श्री चक्रवर्ती दशरथ कुमार रामजी के नित्यधाम अयोध्या नाम का वर्णन किया और नारदजी ने वाल्मीकी जी को श्री रामजी का ब्रह्मलोक (दिव्यधाम) जाने का प्रसंग वर्णन किया ॥ १ ॥

अत्र जाता मदीयान्तस्करणे शंका गरीयसी ।
त्वन्निवर्तयितुं शक्तो रामतत्व विदाम्बर ॥ २ ॥

इस जगह पर मेरे मन में एक बहुत बड़ी शंका पैदा हो गई है । इस शंका को, श्रीराम तत्व के वेत्ताओं में श्रेष्ठ आप ही दूर कर सकते हैं ॥ २ ॥

याज्ञवल्क्य उवाच

शिवेनात्र कृतो ग्रन्थः पार्वतीं प्रतिबोधितुम् ।
श्रीराम रत्नमञ्जूषा साते शंकां निवारयेत् ॥ ३ ॥

श्री याज्ञवल्कि जी बोले कि आपकी इस शंका को दूर करने वाला श्री राम रत्न मंजूषा नाम का एक ग्रन्थ श्री शंकरजी ने श्री पार्वती जी को प्रबोधित करने के लिए कहा है, वही आपकी संका को दूर कर देगा ॥ ३ ॥

भरद्वाज उवाच

तदेवकथयस्वामिन्समन्ता त्कारणान्वितम् ।
यथा गिरिजया पृष्टः शङ्करो ज्ञान सागरः ॥ ४ ॥

श्री भरद्वाज जी बोले कि हे स्वामिन जिस कारण से वह ग्रन्थ बना; जैसे श्री पार्वती जी ने ज्ञान-सागर श्री शंकर जी से प्रश्न किया वही प्रसंग को आप सम्यक् प्रकार से कहिये ॥ ४ ॥

यथा ववोधिता तेन रामभक्तोत्तमेन सा ।
निवर्त्तयस्व मे शंकां सर्वशास्त्र विदाम्बरः ॥ ५ ॥

श्री राम भक्तों में श्रेष्ठ श्री शंकर जी ने पार्वती जी को किस प्रकार प्रबोधित किया (जनाया) वह प्रसंग भी, सब शास्त्रों के जानने वाले आप हैं अतः कहिये ॥ ५ ॥

याज्ञवल्क्य उवाच

यथा गिरिजया पृष्ट श्चोक्तवान्शंकरो यथा ।
त्वत्प्रीत्या कथयिष्यामि गोप्या यद्यपि सा कथा ॥ ६ ॥

श्री याज्ञवल्कि जी बोले, "हे भरद्वाज ! जिस प्रकार श्री पार्वतीजीने प्रश्न किया और श्री शंकरजी ने उत्तर दिया, आपकी प्रीति से प्रसन्न हुआ में वह प्रसंग गुप्त होने परभी सम्पूर्ण कहूँगा ॥ ६ ॥

Scanned by CamScanner

पार्वत्यूवाच

मम नाथ लोकनाथ रामतत्व विदाम्वर।
यत्त्वद्वक्त्रादृच्छ्रुतं पूर्वं श्रीरामचरितं द्विधम् ॥ ७ ॥

श्री पार्वती जी बोलीं कि हे मेरे नाथ ! आप सम्पूर्ण रामतत्व के वेत्ताओं में श्रेष्ठ हैं और सम्पूर्ण लोकों के नाथ हैं ऐसे आपसे मैंने श्रीराम चरित्र को दो प्रकार सुना है ॥ ७ ॥

मानुष्य लौकिकाख्यंच ब्रह्मलौकिक नामकम्।
पूर्वंतु कथितं नाथ बहुवारंमयाश्रुतम् ॥ ८ ॥

वह एक तो मनुष्य लोक का चरित्र और दूसरा ब्रह्मलोक (दिव्यधाम) का चरित्र ये दोनों प्रसंगों को मैं कई बार सुन चुकी हूँ ॥ ८ ॥

खरादीनां वधो यत्र ह्यब्रलोक गमान्तकम्।
नेदमद्यापि लोकेश कथितं करुणानिधे ॥ ९ ॥

हे करुणानिधे ! खर रावणादि वध चरित्र तो सुन चुकी हूँ इसके बाद ब्रह्मलोक (दिव्यलोक) जाने पर जो चरित्र हुआ वह आपने अभी तक नहीं कहा ॥ ९ ॥

शिवउवाच

श्रूयतां चरितं तत्तु गोप्यं त्रिपाद वैभवम्।
अनाधिकारि स्वैवैतत्कथने दोषभाग्भवेत् ॥ १० ॥

श्री शिवजी बोले, "हे पार्वती ! अब आप त्रिपाद विभूती के ऐश्वर्य (वैभव) को प्रकट करनेवाले शुभ चरित्र को सुनिये परन्तु अनाधिकारी से यह चरित्र कहने पर दोष का भागी बनना पड़ता है ॥ १० ॥

पार्वत्यूवाच

अहोस्वाश्चर्यकं नाथाहंते नित्यानुगामिनी।
कथंनमेधिकारोस्ति प्रवदा नुग्रहं कुरु ॥ ११ ॥

श्री पार्वती जी बोलीं—अहोनाथ ! बड़े आश्चर्य की बात है मैं आपकी नित्य अनुगामिनी होने पर भी मेरा अधिकार क्यों नहीं है कृपा करके इस बात को भी कहिये ॥ ११ ॥

शिवउवाच

नाधिकारोद्य एवास्ति यद्यपि प्राण वल्लभा।
शृणु तत्कारणं भद्रे वेद वेलास्वलंघ्यका ॥ १२ ॥

श्री शिवजी बोले—हे भद्रे (कल्याणी) यद्यपि तुम मेरी अत्यन्त प्राण वल्लभा हो तथापि आपको अभी इस शुभ चरित्र में अधिकार नहीं है। क्योंकि वेद की मर्यादा उल्लंघन नहीं की जा सकती है ॥ १२ ॥

प्रथमं स्त्री वा पुरुषः श्रीरामायुध संस्कृतः।
जानक्या मुद्रया चैव तन्नाम्ना नामसंस्कृतः ॥ १३ ॥

स्त्री हो अथवा पुरुष हो पहले उसको श्री रामायुध (तप्त धनुष बाण) संस्कार, श्री जानकी मुद्रिका, श्री सीताराम नाम संस्कार होना चाहिये ॥ १३ ॥

Scanned by CamScanner

सीतापडक्षरोमन्त्रः श्रीरामस्य पडक्षरः ॥

चतुर्विशाक्षरो द्वाख्य एतैरेवाभिसंस्कृतः ॥१४॥

और श्री सीता षड् अक्षर मंत्र राज श्रीराम षड अक्षर मंत्रराज और चौबीस अक्षर वाला मंत्रद्वय इनका संस्कार होना चाहिए ॥१४।

एते च वाह्य संस्काराः कथितावेद सम्मताः ॥

तथैवान्तश्च संस्काराः वदामि प्राणवल्लभे ॥१५॥

हे प्राणवल्लभे ! इस प्रकार के ये वाह्य बाहरी) संस्कारों को वेदों ने बताया है और उसी प्रकार आभ्यन्तरिक (भीतरी), संस्कार भी मैं आप से कहता हूँ १५॥

श्रद्धा विश्वास निष्ठाच रुचिस्तेषु गुरुष्वपि ॥

भक्तिमान् विनयी सत्यं वदामि प्राण वल्लभेः ॥१६॥

हे प्राण वल्लभे ? गुरु के वचन में रुचि, विश्वास परतीति) और निष्ठा होने पर नम्रता पूर्वक प्रश्न करने से तब इस गुप्त चरित्र में रुचि जानकर कहा जाता है ॥१६॥

क्रियामान् शील संन्तुष्टः उदारः परमार्थवित् ॥

भावना भाव संयुक्तो ललितो ललितं हितम् ॥१७॥

और वह प्रश्न करने वाला सदाचार क्रियावान हो शील, संतोष, उदार, और परोपकार इन दिव्य गुणों वाला हो और भगवत् अष्टयाम सेवा भाव वाला जो हो उसको यह अत्यन्त हितूकारक सुन्दर चरित्र कहना चाहिए १७

श्रावये चरितं ब्रह्म लौकिकं लोक दुर्ल्लभम् ॥

कदापि न त्वया पृष्टं मयान श्रावितं शुभे ॥१८॥

इस प्रकार के सत्पात्र से यह दिव्य धाम का दुर्लभ चरित्र कहना चाहिए। हे शुभे ? आपने कभी इस प्रकार का प्रश्न ही नहीं किया ॥१८॥

सीताया रामचन्द्रस्य संस्कारा श्चापि, दुर्ल्लभाः ॥

याञ्चां विना न दातव्या नीतिरेव सनातनी ॥१९॥

ये श्रीसीताराम जी के संस्कार अत्यन्त दुर्लभ हैं विना याञ्चा पूर्वक प्रश्न के ऐसे गुप्त तत्वों को नहीं कहना चाहिए यह सनातन की नीति है ॥१९॥

पार्वत्युवाच

यांञ्चयामि याञ्चयामि याञ्चयामि पुनः पुनः ॥

प्रणतिश्च प्रणतिश्च प्रणतिश्च पुनः पुनः ॥२०॥

श्री पार्वती जी ने कहा—हे नाथ ? मैं बार २ याञ्चा करती हूँ; याञ्चा करती हूँ; याञ्चा करती हूँ। फिर २ बार २ याञ्चा करती हूँ। मैं प्रणाम करती हूँ; प्रणाम करती हूँ; प्रणाम करती हूँ फिर २ बार २ प्रणाम करती हूँ ॥२०॥

त्वमेव नाथ सर्वस्व गुरूणां हि गुरुः प्रभो ॥

त्वमेव रामभक्तोसि वेद वेत्ता त्वमेवहि ॥२१॥

आप ही मेरे सर्वस्व हैं, आप ही मेरे गुरु हैं। सब गुरु वर्गों के गुरु ? हे प्रभो ? आप ही वेदों के तत्व के जानने वाले श्री राम भक्त हैं।२१॥

Scanned by CamScanner

सत्यरं कुरु मे नाथ सत्यरं कुरु सत्यरं ॥
येनाहं ब्रह्मलोकाख्ये चरिते स्याम यौगिका ॥२२॥

हे नाथ ? आप अपनी प्रतिज्ञा को सत्य कीजिए; सत्य कीजिए; सत्य कीजिए। जिससे मैं श्री सीताराम दिव्य धाम के चरित्र को सुनने वाली योग्य पात्र हो सकूँ ॥२२॥

प्रियाया दीन वचनं श्रुत्वा शम्भुः दयानिधिः ॥
साध्वि साध्वीति चाश्वास्य ह्युत्सवे बुद्धिमादधत् ॥२३॥

दया समुद्र श्री शंकर जी ने अपनी अति प्रिया पार्वती जी के दीन वचन सुन कर बहुत अच्छा; बहुत अच्छा कहा, इस प्रकार कह के अभिनन्दन (आश्वासन दिया) और श्री पार्वती जी के पंच-संस्कार उत्सव का विचार करने लगे ॥२३।

मण्डपं रचयामास-शीघ्र माहूय सेवकान् ॥
दिव्यध्वज पताकाभि स्तोरणैश्चातिशोभनम् ॥२४॥

अपने सेवकों को शीघ्र बुला कर के श्री पार्वती जी के पंच संस्कार करने का मंडप दिव्य ध्वजा, पताका, तोरणादि शोभा संयुक्त बनवाया ॥२४॥

घण्टां श्च स्थापयामास पूरयामास मण्डलम् ॥
सप्तवर्णान्निकं तत्र कीर्तनं रामसीतयोः ॥२५

उस मंडप में दिव्य घण्टाओं को स्थापन किए (लगवाए) चारों तरफ से सुन्दर मंडल बनवाए, भीतर में सात रंग के अन्नों से चौक (सर्वतोभद्र) पुरवाए। इस प्रकार उस मंडप में श्री सीताराम नाम अखन्ड कीर्तन कर वाए ॥२५।

गाययामास गन्धर्वैरुच्चैः स्वर मनोहरैः ॥
नारीणांमंगलं गानं पणवादि समन्वितम् ॥२६॥

गंधर्वों के द्वारा उच्च स्वर सुन्दर (मनोहर) गान कर वाए। देव-स्त्रियाँ मंगल गीत गाने लगीं; पणवादि अनेक प्रकार के बाजा बजने लगे। २६।

सादरा नृषिभिर्वेदान्पाठयामास पाठकैः ॥
एवं समाज सहितोहर्षनिर्भर मानसः ॥२७॥

ऋषि लोग आदर पूर्वक वेदध्वनि करने लगे। पाठक लोग अनेक प्रकार के पाठ करने लगे। इस प्रकार समाज सहित महान् हर्षित मन होकर। २७॥

आनेतुं रामचन्द्रस्य सीताया मूर्तियुग्मकम् ॥
नित्यंस्वस्यार्चितं शम्भु र्जगाममन्दिरं तदा ॥२८॥

श्री सीताराम जी की दिव्य जुगल मूर्तियों को लाने के लिए श्री शंकर जी अपने नित्य पूजा के मन्दिर में समाज सहित गए ॥४८।

ततश्च स्वर्ण माणिक्यैः खचिते ध्वज तोरणैः ॥
शोभिते सत्पताकाभिः पुष्प माल्यैश्च मण्डिते ॥२९॥

तब सुन्दर स्वर्ण का और मणियों से खचित (जड़ित) ध्वजा तोरण पताकादि शोभाओं से और पुष्प मालाओं से शोभित २९॥

विमाने स्थापयित्वाथ शंख दुन्दुभि नादिते ॥
सीता युक्तां राम मूर्तिं मण्डपे प्रापयद्धरः ॥३०॥

इस प्रकार के विमान में शंख दुंदुभी आदि बाजाओं के महान् मांगलिक नाद पूर्वक श्री सीताराम जुगल मूर्तियों को बैठाकर मंडप में लाए । ३० ।

ततो मण्डप मध्येतु पद्ममेकं सुवर्णकम् ।
क्रमत श्चतुरा वृत्तमधस्ता त्कर्णिकान्तकम् ॥३१॥

मंडप के भीतर एक सुवर्ण का कमल चार आवरण और मध्य में कर्णिका वाला है ॥३१॥

चतु ष्षष्टिक मेकं तु द्वात्रिंश द्दलकं परम् ॥
तत्रः षोडशदलं दलाष्टक चतुष्टकम् ॥३२॥

पहला आवरण चौंसठ दल का, दूसरा आवरण बत्तीस दल का, तीसरा आवरण सोलह दल का, और चौथा आवरण आठ दल का है ॥३२॥

ततस्तस्य कर्णिकायां स्वासने कोमलांशुके ॥
सीताया रामचन्द्रस्य मूर्ती प्रस्थापिते शुभे ॥३३॥

मध्य कर्णिका में कोमल सुन्दर गद्दीबिछी है उस गद्दी में श्री सीताराम जी की जुगल मूर्तियों को सुन्दर प्रकार से स्थापन किया। ३३॥

देदीप्यमाने भूषाभिः स्वर्ण साहित्यसत्कृते ॥
यथा तथ्यं सखीनां च मूर्तयः स्थापिता मुने ॥३४॥

भूषणों से प्रकाशमान स्वर्ण जरी के कपड़ों से शोभित सखियों की मूर्तियों कोभी स्थापित किया॥३४॥

मुख्याः सख्योऽष्ट जानक्याश्चारुशीलाच लक्ष्मणा ॥
तदाद्याश्चाष्टकावृत्ते पुनः षोडषके वृत्ते ॥३५॥

याज्ञवल्कि जी बोले कि हे ! भरद्वाज ? जानकी जी की उन आठ सखियों में मुख्य श्री चारुशीला जी और श्री लक्ष्मणा जी हैं इनके सहित मुख्य अष्ट सखियों को कमल में अष्ट दल वाले आवरण में स्थापित किया है और। ३५॥

प्रेमा प्रवीणे मुख्ये द्वे तदाद्याः स्थापिता यथा ॥
ततोऽधस्ता त्तु द्वात्रिंश दले वृत्ते सुमालिनी ॥३६॥

प्रेमा प्रवीणा हैं मुख्य जिनमें ऐसी सोलह सखियों को कमल के सोलह दल वाले आवरण में यथा योग्य स्थानों पर स्थापित किया और । ३६।

मधुसाखापि द्वे मुख्ये तदाद्याः सर्वतोदल ॥
प्रेम्णा परमेश्वरेणैवमूर्तयः स्थापिताः पराः ॥॥३७

इसके बाद कमल के बत्तीस दल वाले आवरण में सुमालिनी और मधुसाखा हैं मुख्य जिनमें ऐसी बत्तीस यूथेश्वरी सखियों की मूर्तियों को परमेश्वर श्री शंकर जी ने प्रेम पूर्वक स्थापित किया ॥३७॥

Scanned by CamScanner

चतुषष्टिदले वृत्ते सन्तोषा शान्तिकादयः ॥
भूषिता मूर्तयस्ता सा भावतः स्थापितास्तथा ॥३८॥

कमल के ६४ दल वाले आवरण में संतोषा और शान्तिका हैं मुख्य जिनमें ऐसी ६४ यूथेश्वरी सखियों की मूर्तियों को सुन्दर वस्त्र भूषणों के शृंगार युत भाव पूर्वक स्थापित किया ॥३८॥

चकार षोडसैः पूजां पार्वती प्रतिशिक्षिता ॥
कृत्वा परिक्रमं शम्भुः प्रेम्णासौ प्रियया सह ॥३९॥

अब इस प्रकार (चौंसठ), (बत्तीस), (सोलह), (आठ), मुख्य यूथेश्वरियों के सहित सर्वेश्वरी श्री चारुशीला जी और श्रीसीताराम जी की युगल मूर्तियों की षोडशोपचार पूजा विधानों की शिक्षा पार्वती जी को देकर श्री शंकर जी भी पत्नी सहित प्रेम विभोर होकर परिक्रमा करने लगे ॥३९॥

जानक्या रामचन्द्रस्य पुनः पादाभिवन्दनम् ॥
परिवार समेतस्य कृत्वा चाज्ञा मया चयत् ॥४०॥

फिर परिवार समेत श्री सीताराम जी को प्रणाम करके श्री पार्वती जी के पंच संस्कार करने की आज्ञा मांगी ॥४०॥

मण्डपाग्रे वितानं स्या तत्र वेदी परिस्कृता ॥
तत्रार्षिमुनि देवैश्च शम्भुः शक्त्या समागतः ॥४१॥

इस पूजी मण्डप के आगे आँगन में एक वेदी है उस पर वितान तना करके, चौक आदि पूर कर सजाया गया। वहाँ पर ऋषि मुनि देवता और श्री पार्वती जी के सहित श्री शंकर जी आकर सुन्दर आसनों पर विराजे ॥४१॥

स्वाशने चोप विश्याथ स्वस्याग्रे सापि प्रेरिता ॥
तस्यां भाले विशाले च काश्मीरी तिलकेन च ॥४२॥

जिस आसन पर श्री शंकर जी बैठे उस आसन के आगेमें श्री पार्वती जी को भी बैठाकर काश्मीरी चन्दन से श्री पार्वती जी के भाल पर चन्दन (तिलक) कर दिया ॥४२॥

बिन्द्वर्ध चन्द्र संयुक्तां चन्द्रिकां मन्त्र तो ददौ ॥
शीतलौ च धनुर्बाणौ बाहुमूले तथा विधिम् ॥४३॥

तिलक की श्री अर्धचन्द्र और बिन्दु संयुक्त चन्द्रिका भी मंत्र पूर्वक लगाई और बाँह में शीतल धनुष और बाण की भी चन्दन के ही छाप से लगाए। ४३॥

तुलसी मालिका युग्मश्चैत त्कृत्वासदा शिवः ॥
ददौ दे दक्षिणे कर्णे शंख दुन्दुभिभिर्महान् ॥४४॥

तुलसी की दोलर की माला को कन्ठ में पहिराए इस प्रकार बाहरी संस्कार सदाशिव जी ने पार्वती जी के दक्षिण कान में शंख दुन्दुभी नाद पूर्वक श्री युगल मन्त्र राज को दिए ॥४४॥

Scanned by CamScanner

ध्वनौ याते मन्त्रयुग्मं सीता रामषडक्षरम् ॥
पंचविंशाक्षरश्चैव द्वाख्य संज्ञं ददौ प्रभुः ॥४५॥

ध्वनि के बीच में श्री सीताराम छः छः अक्षर के जुगल मंत्रराज तथा पचीस अक्षर के मंत्र द्वय को भी दिए ॥४५॥

एतत्कृत्वापुनरीशो होमस्थानं समागतः ॥
प्रियया समेत स्तत्रश्चाशने चोप विश्यवै ॥४६॥

इतना करके श्री शंकर जी पार्वती जी के सहित हवन कुण्ड के पास आकर आसन पर बैठ गए॥४६॥

अग्नौ तु हविषा हुत्वा ततो बाणं धनुष् तथा ॥
सीतायां मुद्रिका दिव्या प्रेरिता सन्मुखं प्रिया ॥४७॥
शंख दुन्दुभि भेर्य्यादौ नादिते तेन शैल जा ॥
दक्षिणं भुज मूलंतु तप्तबाँणेन चाङ्कितम् ॥४८॥

अग्नि में हविष्य पदार्थों से हवन करके उस हवन की अग्नि में बाण और धनुष को तपाकर तथा श्री सीता जी की मुद्रिका को तपाकर शंख दुन्दुभी, भेरी आदि बाजाओं के अनेक संगीत नाद पूर्वक सन्मुख बैठीं हुई पर्वत कन्या श्री पार्वती जी के दक्षिण बाँह (बाहु) मूल में पहले तप्त बाँण से छाप दिए ॥४७॥ ४८

तथातप्तेन धनुषा भुज मूलं हि वामकम् ॥
दक्षिणश्च प्रकोष्टस्तु सीताया मुद्रयांकितः ॥४९॥

फिर बाम भुज मूल में तप्त धनुष का छाप दिए फिर दक्षिण हाथ के प्रकोष्ट में श्री सीता जी के तप्त मुद्रिका की छाप दिए ॥४९॥

सीतायां रामचन्द्रस्य चिन्हैर्दिव्यैः सुचिन्हिता ॥
मत्वा स्वस्यां श्चभूयिष्टं भाग्यं तुष्टाव शंकरम् ॥५०॥

इस प्रकार श्री सीताराम जी के तप्त धनुष बाणादिक दिव्य चिन्हों से चिन्हित हुई श्री पार्वती जी अपने को महान भाग्यशालिनी, स्मरण कर अति प्रसन्नता से श्री शंकर जी की स्तुति किए ॥५०॥

एतत्काले महाशम्भु महाविष्णुश्च सुत्सवम् ॥
श्रुत्वा प्रिया समेतौ ता वागतौ शङ्करालये ॥५१॥

उसी समय श्री महा शम्भू जी और श्री महाविष्णु जी अपनी पत्नियों के सहित उन शंकर जी के घर में द्वार पर आ पहुँचे ॥५१॥

तयोर्महात्मनोः शम्भु महात्मास्वस्य मन्दिरे ॥
श्रुत्वा ष्वागमनं सर्वैः समाजैः सन्मुखं ययौ ॥५२॥

इन दोनों केसपत्नीक आगमन को सुनकर के महात्मा श्री शंकर जी अपने समाज के सहित भीतर मन्दिर से उठकर स्वागत के लिए दूर तक सन्मुख आए। ५२।

ततो महत्प्रभावं श्री रामभक्त्यान्वितंहरम् ॥
महाहरिहरौ दृष्ट्वा वाहना दवतेरतुः ॥५३॥

इस प्रकार महान प्रभावशाली श्री रामभक्ति से भूषित श्री शंकर जी को स्वागत के लिए आगे आए हुए देखकर श्री महाविष्णु और श्री महाशिव अपनी २ सवारियों (वाहनों) से नीचे उतर गए ॥५३॥

Scanned by CamScanner

हरोपिसविधिं प्राप्य हरहर्योर्महात्मनोः ॥
ननाम दण्डवद्भूमौ ताभ्या मुत्थाय श्लेषित. ॥५४॥

श्री शंकर जी भी स्वागत विधि पूर्वक उन दोनों महात्माओं को पृथ्वी में साष्टांग दण्डवत् पड़कर प्रणाम किए। उन दोनों ने भी श्री शंकर जी को उठाकर कण्ठ से लगाया ॥५४॥

परस्परं मुदाश्लिष्य चानीता मुत्सवे गृहे ॥
मुक्ता काञ्चनमाणिक्यैर्मण्डिते स्मृद्धि भासिते ५५॥

इस प्रकार परस्पर आनन्द पूर्वक आ क-आश्लेषण गलबाहीं-मिलन) के बाद श्री शंकर जी अपने घर जो मुक्ता, स्वर्ण, माणिक्यों से अत्यन्त ऐश्वर्य पूर्वक प्रकाशमान है, उसमें लिवा लाए ॥५५॥

तावेतौ शक्ति संयुक्तोस्वर्ण सिंहासने शुभे ॥
प्रस्थाप्य पार्वती नाथःपादौ प्रक्ष्याल्य चार्घ्यकम् । ५६॥

और उन दोनों को पत्नियों सहित सुवर्ण सिंहासन पर बैठाकर श्री पार्वती जी के सहित श्री शंकर जी ने पाद्य, अर्घ, आचमन ॥५६॥

ददावाचमनम्पश्चा न्मधुपर्कं ददौप्रभुः ॥
पुन राचमनं ताभ्यां ततः स्नान मकारिं वै ॥५७॥

मधुपर्कादि विधियों से फिर (पुनः) आचमन स्नान कराया ॥५७॥

धौत प्रवार के दिव्ये यज्ञ सूत्रे सुवर्ण के ॥
शम्भुना स्वयमेवाभ्यां दत्त सिंहासने पुन: ॥५८॥

धौत वस्त्र, सुवर्ण का यज्ञ सूत्र (यज्ञोपवीत) श्री शंकर जी ने स्वर्ण सिंहासन पर बैठाकर उन दोनों को स्वयं पहिराया ॥५८॥

प्रस्थाप्य गन्ध पुष्पं च धूप दीपं कृतं यथा ॥
चतुर्धा षड्रसैर्दिव्य मकारि भोजनं ततः ॥५९॥

फिर गंध, पुष्प धूप, दीपादि दिया और दिव्य षट रस भोजन करवाया ॥५९॥

पार्वत्यापि तयोर्देव्यौपूजिते भोजनादिभिः ॥
यक्षकर्दम मालाभि र्ताम्बूलैश्च सुगन्धिभिः ॥६०॥

इसी विधि से श्री पार्वती जी ने भी उन दोनों की पत्नियों को कपूर, अगरु, कस्तूरी, कंकोल आदि मिश्रित चन्दन अर्पण करके सुगन्धित पान चबाया। ६०॥

पुनश्च शक्ति सयुक्ता वेतौपरमेश्वरौ ॥
नीरा जितौ शंकरेण दिव्य सिंहासनस्थितौ ॥६१॥

पुनः अपनी शक्तियों सहित उन दोनों को श्री शंकर जी ने और एक दिव्य सिंहासन पर बैठाकर आरती किया ।६१॥

ऋषयो मुनि देवाश्च गन्धर्व किनरोरगाः ॥
नियन्त्रिता शंकरेण तुष्टुवुस्ते परौ प्रभू ॥६२॥

ऋषि मुनि देवता गन्धर्व किन्नर और नाग आदि जो भी श्री शंकर जी से निमंत्रित होकर आए थे उन सबने भी पर प्रभु महा विष्णु जी और महा शंकर जी की स्तुति की। ६२॥

एतस्यां च शभायां वै महाविष्णु स्तु शंकरम् ॥
उवाच परयाप्रीत्या किमर्थ मागता इमे ॥६३॥

तब महा विष्णु जी ने उस सभा में श्री शंकर जी से प्रेम पूर्वक प्रश्न किया कि ये सब लोग किस कारण से आए हुए हैं ॥६३॥

किंत्वत्तो वरदेशाच्च वरंयाचितु मागताः ॥
एवं प्रियं वदन्तंतं प्रत्यूवाच महेश्वरः ॥६४॥

क्या महाबरदानी जो आप हैं सो आप से वरदान प्राप्त करने को तो नहीं आए हैं ? इस प्रकार प्रेम पूर्वक प्रश्न करते हुए महा विष्णु से श्री शंकर जी बोले ॥६४॥

शिवउवाच

सीतारामांक संस्कारैः संस्कृता पार्वती मया ॥
निमन्त्रिता स्ततः सर्वे स्वागताः मे गृहे प्रभो ॥६५॥

मैंने श्री पार्वती जी को श्रीसीताराम पंच संस्कारों से संस्कृत किया। उसी यज्ञ में निमंत्रित होकर ये सब देवता लोग मेरे घर में आए हुए हैं ॥६५॥

महाविष्णु रुवाच

धन्योसि पार्वती धन्या सीताराम समाश्रिता ॥
सर्वेषां परदेवौ श्री सीतारामौ परात्परौ ॥६६॥

तब श्री महाविष्णु जी बोले—आहा ! आप धन्य हैं और यह पार्वती धन्य हैं जो सब देवताओंमें परात्पर देवता श्री सीताराम जी के समाश्रित हो गयीं हैं ॥६६

संस्कार वेदिका कुत्र करोमि दर्शनं शुभम् ॥
एवमुक्त्वा महाविष्णु र्महा शम्भुः सनातनः ॥६७॥

इनके शुभ संस्कार की वेदी कहां पर है, हम दर्शन करेंगे ऐसा कह कर सनातन महाबिष्णु और महा शम्भू ॥६७।

शंकरेण समं गत्वा दृष्टा मण्डप मद्भुतं ॥
ययौ प्रसन्नतां मेतौ नेमतू रामसीतयोः ॥६८॥

श्री शंकर जी के साथ जाकर अद्भुत मण्डप का दर्शन किया। श्री सीताराम जी के जुगल मूर्तियों का दर्शन कर प्रसन्न हो प्रणाम किए। ६८॥

अर्चांशिवा र्चिर्तां दिव्यैरलंकारै रलंकृताम् ॥
स्तुतिं चकार स्तोत्रेण महाविष्णु र्महाशिवः ॥६९॥

और श्री शिव जी व पार्वती जी से पूजित दिव्य अलंकारों से अलंकृत श्री सीताराम जी की महा बिष्णु और महा शिव जी ने स्तोत्रों से स्तुति किया ॥६९॥

महा बिष्णु रुवाच

जयति जनकपुत्री रामवामांक संस्था जयति युगविधात्री बिश्वधात्री कराञ्जा ॥
कनक सदन शोभांलोकचित्रां लिखन्तीं रघुबर वरभोगा भाविनी मंगलांसे ॥७०॥

श्री महा विष्णु जी बोले—हे जनक पुत्री श्री राम जी के वाम अंग में बैठीं हुईं आपकी जय हो। हे विश्व के विधान करके, युगों का विधान करने वाली ? कर कमल में नील कमल लेकर श्री कनकभवन के खण्ड खण्डों में दीवालों पर सम्पूर्ण लोकों के चित्रों को लिखकर अपने प्रियतम को दिखातीं हुईं हे भामिनी ! आपकी जय हो मेरे मंगलों की आप भावना करें ॥७०॥

कनकभवनखण्डे पादसंचारणाद्वै सितमणिगणभूमिः पद्मरागास्ति यस्याः ॥
जयतु जनकजाया चिन्मयी ब्रह्मरूपा रघुवर मुद दात्री सद्‌गुणानां धरत्री ॥७१॥

श्री कनक भवन के खण्ड खण्डों से विचरण करने से अपने चरणों की लालिमा द्वारा सफेद मणियों की भूमि को पद्मराग का मणि भूमि के समान बना देती हैं ऐसी चिन्मयी ब्रह्मरूपा, सद्‌गुणों की भूमि स्वरूपा श्री रघुनाथ जी को आनन्द देने वाली जनकजाया जी की जय हो। ७१॥

मुकुरगृह रमन्त्या श्चन्द्र कोटिश्चभित्तौ सतत मुदय मस्या आस्य नेवा करो द्वै ॥
कलित कमल श्रेणी तत्र तत्रैव जाता कर कमल विभावै र्निदिशन्त्याश्च चित्रम् ॥७२॥

करोड़ो चन्द्रमाओं के समान प्रकाशमान भित्ति (दीवाल वाले ऐसे दर्पणों (शीशों) का महल में सतत रमण करतीं हुईं श्री किशोरी जी के मुख कमल की कमल पंक्ति उन दीवालों पर जहाँ २ आप जाती हैं तहाँ २ मुख प्रतिविम्ब कमल-पंक्ति प्रकट होती हैं। इस प्रकार अपने कर कमलों में कमल लेकर हाव भाव पूर्वक प्रियतम जू को दीवालों के चित्रों को दिखातीं हैं ॥७२॥

जयति जनक पुत्र्याः पादपद्म प्रभावो यदनुगतनखानां पंक्तित श्चन्द्रपंक्तिः ॥
विलसति खलु लोके भिन्न ब्रह्माण्डकेरवे तदभिगत कलैका शंकरस्यापिभाले ॥७३॥

श्री जनक पुत्री जी के चरण कमल प्रभाव की जय हो। जिन चरण कमल के नखों की पंक्ति चन्द्र पंक्ति की तरह शोभित हैं। जो चरण के नख भिन्न २ ब्रह्माण्डों के आकाश में चन्द्रमा होकर सम्पूर्ण लोकों को प्रकाशित करते हैं उन्हीं चरण नख की एक कला को श्री शंकर जी अपने मस्तक में रक्खे हुए हैं ॥७३॥

जयति जनकपुत्र्याः पाद संचारण श्री श्चकितमपि विधत्ते याम वीरेन्द्रनागाः ॥
निज हृदि तनु भावं राजहंशा विदध्युः रघुवररस मूर्ति र्वीच मोदाब्धिमग्न ॥७४॥

श्री जनक तनया जी के चरण-संचार शोभा की जय हो ? जिस चरण संचार को देखकर इन्द्र का ऐरावत हाथी भी आश्चर्य चकित हो जाता है, और राज हंस भी अपने २ हृदयों में अपनी २ चालों के भावों का ध्यान करते हैं। रस मूर्ति श्री रघुनाथ जी तो इस चरण-संचार-शोभा को देखकर आनन्द मग्न हो जाते हैं ॥७४॥

जयति जनक जाया नेत्र युग्मं विशालं रघुवर रस वासं सौकुमार्य्यादिभासम् ॥
प्रणत जन दयार्द्रं कोप भावा स्पृशं वै मुकुलित मिव दोषा न्वीक्षितुं सेवकानाम् ॥७५॥

श्री जनक जाया जू के जुगल नेत्रों की विशालता की जय हो। जो नेत्र श्री रघुनाथ जू के सुख रस के निवास-स्थान हैं और अत्यन्त सुकुमारता को प्रकाशित करते हैं प्रणाम करने वाले जनों पर दया से द्रवित होते हैं, क्रोध भाव का स्पर्श भी जिन नेत्रों में नहीं होता; सेवकों के दोषों को देखने के लिए तो मानो ये दोनों नेत्र बन्द ही सरीखे रहते हैं ॥७५॥

Scanned by CamScanner

जयति जनक पुत्र्या मुद्रिका कंकणाभ्यां विभूषित करयुग्मं कञ्ज मेवाप्तनालम् ॥
निज कृत दुरितेभ्य स्त्राशमेवाप्तकेषु स्वभय वरद मुद्रं स्वाशिषा वत्समुद्रम् ॥७६॥

मुद्रिका कंकणों से विभूषित श्री जनकजा जू के जुगल कर कमलों की जय हो। जो कर कमल नाल संयुक्त कमल की तरह शोभित हैं और जो अपने किए पापों से भयभीत होकर आपकी शरण आए हैं उनके लिए अभय मुद्रा से आशीर्वाद देते हैं और वरदान देते हैं ॥७६॥

जयति जनकपुत्र्या रागविद्या समग्रं रघुपतिमति कर्षं मोदवर्षं विचित्रम् ॥
अमितगति सुतालं मूर्छना ग्रम जालं स्वर मुनि मित युक्तं ग्रामयुक्तं त्रिभिर्वै ॥७७॥

श्री जनक पुत्री जी के रागविद्या की सम्यक प्रकार जय हो। जो रागविद्या श्री रघुनाथ जी की मति को खींचकर विचित्र आनन्द के बर्षा में भिजा देती है। जिस रागविद्या में अमित सुन्दर ताल मूर्छना ग्राम गतियों का जाल बना है और जो रागविद्या सातों स्वर और तीन ग्रामों से युक्त है ॥७७॥

जयति जनकजाया भारती भव्य रूपा वसु रस परिपूर्णा शब्द शद्मा मृतासा ॥
ऋजुरचित पदानां संहिता संस्कृता या रघुपति मति दीक्षा लंकृते युग्म शिक्षा ॥७८॥

श्री जनकात्मजा की कल्याण स्वरूपा वाणी की जय हो। जिस वाणी में शृंगार वीर करुणादि आठों रस परिपूर्ण हैं और अमृत मयी शब्दों के साहित्य का तो घर ही है। जो वाणी सरलता पूर्वक रचना किए हुए पदों में संहितादि सम्पूर्ण शास्त्रों के सार से भरी हुई है और श्री रघुनाथ जी को मति को सुन्दर दीक्षा से अलंकृत करके विलास और मर्यादा दोनों की शिक्षा देती है ॥७८॥

जयति जनकपुत्र्या पारमैश्वर्यभावो सुरासुरमुनि सिद्धै र्याश्चया स्तूय मानः ॥
अमित विभवलक्ष्मी लोक ब्रह्माण्ड भिन्नाः प्रभवति खलु यस्या अंशतस्तां निषेवे ॥७९॥

श्री जनक पुत्री जी के परम ऐश्वर्य मयी भाव की जय हो। जिसकी देवता, दानव मुनि सिद्ध सब लोग अपने मनोरथ पूर्ति के लिए स्तुति करते हैं। और जिसमें अनन्त ब्रह्माण्डों की ऐश्वर्य लक्ष्मी अलग अलग ब्रह्माण्डों में लोक लक्ष्मी होकर के जिनके अंश से अलग २ प्रभावित होकर सम्पूर्ण लोकों को प्रकाशित करती हैं ॥७९॥

जग दुदय क रैका कालरूपा द्वितीया पुनरपि गत मध्ये पालने यातु दक्षा ॥
तव पद नख दीप्त्या शक्ति रेका समर्था प्रभवति खलु सीते तिसृणां भूतभावा ॥८०॥

कैसे होती है उसको आगे बताते हैं। एक रूप से वह ऐश्वर्य-लक्ष्मी जगत को पैदा करती है दूसरे रूप से काल रूप होकर प्रलय करती है; तीसरे रूप से बीच में होकर सम्पूर्ण लोकों का पालन करने में बड़ी कुशला रहती है। हे सीते! आपके चरण-नख-प्रकाश की शक्ति से समर्थ हुईं ये तीनों शक्तियाँ प्राणियों का भावनाओं को पूर्ण करने में पूर्ण प्रभाव वाली हैं ॥८०॥

तव पति पद स्वङ्का दूब्रह्म विष्णु हरोयमनुभव गत रूपास्तेपि ताभिः समेता ॥
रचयति पुनरेको पालये दूभक्षयेद्वै निवसति निज लोके यावदीक्ष्यास्ति ते वै ॥८१॥

हे सीते! आपके पति चरण कमल के चिन्ह का स्मरण करने से ये ब्रह्मा विष्णु महेश अनुभव के स्वरूप ही हो गए। आपकी अंशभूता उमा रमा ब्रह्माणियों के सहित ये तीनों में से एक तो सृष्टि को उत्पन्न करते हैं और एक पालन करते हैं और एक भक्षण करते हैं। जब तक आपकी इच्छा रहती है तब तक ये लोग अपने २ लोकों में रहते हैं ॥८१॥

त्वमसिपरतमेशी नैव त्वत्तः परास्या त्तवपति रघुनाथो सौ समस्ता त्परात्मा ॥
ननुभवति तुभेदो लिङ्ग व्याख्यान शास्त्रे भवति न खलु तत्वे राम सीता स्वरूपे ॥८२॥

हे सीते ! आप परात्पर ईश्वरी हैं आप से परे और कोई ईश्वरी नहीं है। इसी प्रकार आपके पति ये श्री रघुनाथ जी भी समस्त ईश्वरों में परात्पर ईश्वर हैं। आप दोनों का आपस में शास्त्रसम्मत से तत्वतः कोई भेद नहीं है केवल सीताराम स्वरूप में स्त्री पुरुषत्व का कहने मात्र भेद है। ८२।

तवगुणगण मूर्तिः स्यामहं रामचन्द्र प्रथम गुरू एवं मे श्री महाशम्भु रास्ते ॥
उररि कुरू ममेदं स्तोत्रकं रामसीते कृतमपि गुरूणामे साहकं सम्वरोक्तम् ॥८३॥

हे रामचन्द्र ! आपके समस्त-गुण-गण स्वरूप-मूर्ति (भाग्य गुण) मैं महा विष्णु हूँ और ये महा-शम्भू (जो आपके तन तेज स्वरूप हैं) मेरे प्रथम गुरू हैं। (राघवस्य गुणो दिव्यो महा विष्णु स्स्वरूप-वान्। वासुदेवो घनी भूतो तनुते जो महाशिवः ॥ वसिष्ठ संहिता) हे राम सीते ! मेरे द्वारा दिया हुआ यह स्तोत्र, पहले मेरे गुरु श्री महाशम्भू ने भी सुन्दर स्वरों से भाव पूर्वक किया था वही आज आप अंगीकार करें ।।८३।।

याज्ञवल्क्य उवाच

एवं कृत्वा स्तवं देवो महाविष्णु र्महाहरः ॥
समूवाचशिवं देवं प्रशंसा पूर्वया गिरा । ८४॥

श्री याज्ञवल्कि जी बोले कि हे भरद्वाज ! इस प्रकार श्री महाविष्णु और महाशम्भू जी ने दोनों परस्पर देवता श्रीसीताराम जी की स्तुति किया उसके बाद सब देवताओं के देवता श्री शंकर जी से प्रशंसा पूर्वक वाणी से बोले ।।८४।।

महाशम्भु रुवाच

नत्वं चैकदशो रुद्रो मया ज्ञातं हि तत्वतः ॥
रामचन्द्रस्य सीतायाः प्रेमभक्ति स्वरूप कः ॥८५॥

श्री महा शम्भू जी ने कहा कि हे शंकर ? मैंने तत्वतः यह जान लिया है कि तुम केवल एकादश रुद्र ही नहीं हो प्रत्युत श्री रामचन्द्र जी व श्री सीता जी के प्रेम भक्ति स्वरूप ही हो ।८५।।

पराभक्ति स्त्वहं देव महाविष्णुस्तु मेशृणु ॥
सीताया रामचन्द्रस्य गुणा ये निर्गुणात्मकाः ॥८६॥

और मैं भी श्री सीताराम जी की पराभक्ति का स्वरूप हूँ और इन श्री महाविष्णु जी का स्वरूप भी मेरे से सुनिए-श्री सीताराम जी के जो अनन्त गुण निर्गुणात्मक हैं उनका सामूहिक स्वरूप सौभाग्यगुण ये श्री महाविष्णु जी हैं ।।८६।।

ऐश्वर्य्यं मण्डले स्थाश्च रूपाज्जाता वयं सखे ॥
ताभ्यां प्रस्थापिता यत्र लोके तत्र वशामहे ॥८७॥

हे सखे ! हम लोग श्री सीताराम जी के ऐश्वर्य मण्डल के अन्दर रहने वाले गुण रूपमान होकर के प्रकट हुए हैं। उन्हीं श्री सीताराम जी के विधानानुसार जहां २ वे सब लोगों को स्थापित करते हैं तहाँ तहाँ हम सब बास करते हैं। ८७।।

Scanned by CamScanner

तस्यै वं वचनं श्रुत्वा स्वस्वरूपे समाविसत् ॥
मुहूर्तं निर्वचनोस्ति प्रेमवारि प्रवाहितः ॥८८॥

इस प्रकार श्री महाशम्भू जी ने जब कहा तो शंकर जी सुनकर स्व-स्वरूप की समाधि में प्रवेश कर गए। एक मुहूर्त मौन होकर प्रेम की अश्रुधारा बहाने लगे। ८८॥

तस्यां शभायां ये सर्वे प्रभावं जानकी प्रभोः ॥
श्रुत्वा श्चर्यं गतास्तेपि वभूवु र्भाविपूर्वकाः ॥८९॥

इस प्रकार श्री शम्भू श्री महाविष्णु और श्री शंकर जी की बातों को उस सभा में जिस जिसने सुना वे सब श्री जानकी प्रभु के ऐश्वर्य प्रभाव में भाव पूर्वक आश्चर्य चकित हो गए ।।८९॥

मूहूर्तेन शंकरेऽपि सावधान त्व माययौ ॥
ततो नत्वा महाशम्भु मुवाच प्रेम निर्भरः ॥९०॥

एक मुहूर्त के बाद श्री शंकर जी भी सावधान हो गए और श्री महाशम्भू जी को प्रणाम करके प्रेम गद्गद होकर बोले ॥९०।

देव त्वत्कृपयेदानीं दृष्टुं तत्कथया म्यहम् ॥
इदं रूपं तु विस्मृत्वा स्वप्न मेवात्र दर्शितम् ॥९१॥

शिवउवाच

हेमागारे त्वयोध्यायाः सत्यनैश्वर्य्य भाश्वरे ॥
सीता तथा रामचन्द्रो रत्न पीठे विशालके ॥९२॥

हे देव ! आप की कृपा से इस समय जो कुछ स्वप्न सदृश मैंने देखा है उसको कहता हूँ, आप सुनिए मैंने इस शरीर को भूलकर समाधी में यह स्वप्न देखा है कि श्री अयोध्या जी के अन्दर महान ऐश्वर्य और प्रकाशमान स्वर्ण के महल के अन्दर विशाल रत्न सिंहासन में श्री सीताराम जी को बैठे देखा है ॥९१॥९२॥

सखीनां मण्डले साक्षा द्दृष्टौ द्वौ तेजसा वृतौ ॥
तत्रा हं चारूशीलाच द्वयोः सेवा परायणा ॥९३॥

सखियों के मण्डल में महान तेज से आवृत हुए दोनों सरकारों की सेवा परायण प्रधानभूता श्री चारुशीला जी के रूप में मैंने अपने को देखा। ९३।

किशोर वयसापूर्णा दिव्यरूपा विचक्षणा ॥
तयोः सख्योऽप्यनन्ताश्च मन्निर्देशा त्प्रवर्तकाः ॥९४॥

वे श्री चारुशीला जी किशोरावस्था सम्पन्ना दिव्य स्वरूपा अति सूक्ष्म बुद्धि वाली हैं। और श्री जुगल सरकार की सेवा में अनन्त सखियों की प्रकर्तिका (प्रेरणा करने वाली) श्री चारुशीला जी के रूप में मैं ही था ऐसा मैं ने अपने को देखा है ॥९४।

काश्चि च्छत्रधराः काश्चि द्राजन्ते कर चामराः ॥
काश्चि त्कन्दुक हस्ताश्च काश्चि त्ताम्बूल सम्पुटम् ॥९५॥

Scanned by CamScanner

करेधृत्वा स्थिताः काश्चि त्काञ्चनं जलपात्रकम् ॥
काश्चि ज्जल पान पात्रं काश्चिद्ददाति वीठि काम् ॥९६॥

उस सभा में श्री सीताराम जी को कोई सखी छत्र धारण की हुई थी कोई सखी सुन्दर चवर लेकर शोभित हो रही थी कोई हाथ में गेंद लेकर कोई पान डिब्बा लेकर कोई स्वर्ण का जलपात्र हाथ में लेकर कोई जलपान कुछ मिठाई लेकर खड़ी थी। कोई पान की बीड़ा पवा रही थी ॥९५॥९६॥

काश्चित्करे बाण युग्मं काश्चिच्चाप मनोहरम् ॥
काश्चिद्वेत्रासिपुत्रीं च करेधृत्वा परिस्थिताः ॥९७॥

कोई हाथ में दो बाण लिए हुए कोई मनोहर धनुष को लिए हुए कोई बेंत लिए हुए कोई तलवार लिए हुए कोई कटारी लिए हुए चारों तरफ शोभित थीं ॥९७॥

पुष्पमाल्यानि काश्चिच्च रत्नमाल्यानि काश्चिच ॥
मिष्टं चोपासनं काश्च त्सम्पुटे निहितं सखी ॥९८॥

कोई फूल माला लिए कोई रत्न माला लिए हुए कोई कलेऊ के लिए डिब्बे में मिठाई लिए हुए खड़ी हैं ॥९८॥

गृहीत्वा तिष्ठमानाग्रे काश्चिद्वेत्र धरावराः ॥
स्वर्ण दण्डधराः काश्चि त्पुष्प दण्ड धरा अपि ॥९९॥

कोई रत्न की छड़ी लिए हुए बगल में खड़ी हुई है कोई स्वर्ण कोई पुष्प दण्ड लिए हुए भी खड़ी हैं ॥९९॥

एवं दृष्ठं मया नाथ स्वरूपं स्वस्य तत्र च ॥
तदहंनैव जानामि त्वं जानासिति मेपरः ॥१००॥

हे नाथ ! इस प्रकार के उन श्री सीताराम जी के समाज में मैंने अपने स्वरूप को प्रधान रूप में देखा। उस बात को मैं नहीं समझ रहा हूँ आप मेरे से परे हैं अतः आप जानते हैं ॥१००॥

महाशम्भू रुवाच

कथितं तत्तु ते रूपं माधुर्यमण्डलस्थकम् ॥
पुन रेवं वर्तते य न्मण्डलैश्वर्य भावकम् ॥१०१॥

श्री महाशम्भू जी बोले कि जिस रूप को आपने कहा यह आपका माधुर्य मण्डल में स्थित रूप है और जिस रूप में आप वर्तमान हैं यह रूप ऐश्वर्य मण्डल का भावुक है ॥१०१॥

सार्व कर्त्वंविजानासि समाधिस्थोहि निश्चितम् ॥
एवमुक्त्वा प्रसंश्येनं गमनाय प्रचक्रमे ॥१०२।

आप हमेशा समाधिस्थित रहने से इस सार्वकल निश्चित रूप को जानते ही हैं। इतना कहकर श्री शंकर जी की प्रसंशा करके चलने की तैयारी किए ॥१०२।

पुनः पुनः प्रण म्या सौ वन्द्यौ श्रीराम सीतयोः ॥
महाशम्भु महाविष्णु मण्डपा द्वहि रायथौ ॥१०३॥

उस मण्डप में श्री सीताराम जी को परिवार सहित जुगल मूर्तियों को बार २ प्रणाम करके श्री महाशम्भू और श्री महाविष्णु मण्डप से बाहर आए ॥१०३।

Scanned by CamScanner

ततश्चोत्थाय चोत्थाय प्रणेमु श्च शभासदाः ॥
मुनयो देव गन्धर्वाः गच्छन्तौ द्वौ महाविभू ॥१०४

श्री शंकर जी की सभा के जितने भी देव गन्धर्व मुनि लोग रहे सबके सब जाते हुए उन दोनों हमी विभुओं को बार २ उठ उठ करके प्रणाम किए ॥१०४॥

शक्त्या युक्तौ ननामासौ शक्त्यायुक्तोपि शंकरः ॥
शंकरो शंकरं पश्चा च्छक्त्या युक्तोपि ताविमो ॥१०५॥

श्री पार्वती जी के सहित श्री शंकर जी ने शक्तियों के सहित उन दोनों महा पुरुषों को प्रणाम किया और उन्होने भी शक्तियों सहित श्री शिव पार्वती जी को प्रणाम किया इस प्रकार शक्ति सहित महाशम्भु जी आदि के जाने पर श्री पार्वती सहित श्री शंकर जी भी उन दोनों के पीछे २ कुछ दूर तक गए ॥१०५॥

यदन्तौ नभमार्गं तु यथतुः पार्षदै र्वृतौ ॥
ततोदेवाश्च मुनय स्तुष्टवुः पार्वतीपतिम् ॥१०६॥

इस प्रकार उन महापुरुषों के आकाश मार्ग से जाने पर पार्षदों से घिरे हुए श्री शंकर पार्वती जी को देवता मुनि गन्धर्वों ने स्तुति किया ॥१०६॥

देवामुनय ऊचुः

सनातनोसि देवेश ननाशो प्रलयेपिते ॥
नजानन्ति प्रभावंते यथार्थं मुनि देवताः ॥१०७॥

देवता मुनि लोग बोले—हे देवेश (देवताओं के ईश्वर) आप सनातन पुरुष हैं; प्रलय में भी आपका नाश नहीं होता। आपके यथार्थ प्रभाव को मुनि देवता कोई नहीं जानते हैं ॥१०७॥

किञ्चित् ज्ञातं शभायांय महाविष्णु प्रभाषितम् ॥
वयं ते दाश भूतास्म कृपया चागता इह ॥१०८॥

इस सभा में श्री महाविष्णु के कहने पर थोड़ा सा आप का ज्ञान हम लोगों को हुआ। हम सब आपके दासभूत हैं। हम आप की कृपासे इस समय यहाँ आ पहुँचे। हमारा महान् भाग्य है ॥१०८॥

कुरुष्वा नुग्रहं देव रामचन्द्रस्य साकथा ॥
जानकी सहितस्यासौ कथ्यतां कुत्रराजते ॥१०९॥

हे देव! अब आप हम लोगों पर अनुग्रह करके वह कथा कहिए जिस कथा में श्री रामचन्द्र जी और श्री जानकी जी का निवास इस समय कहाँ और कैसे है ॥१०९॥

रावणं चाह वेहत्वाऽयोध्यायां बहुवार्षिकं ॥
राज्यं कृत्वापुनः कुत्र गच्छे चासौ प्रजासमम् ॥११०॥

पहले एक बार अयोध्या जी में अवतार लेकर रावण को मारा फिर बहुत काल तक राज्य किए उसके बाद अपनी प्रजा संयुक्त किधर को गये हैं ? ॥११०॥

इति सर्वे न जानन्ति तत्प्रभावं समग्रतः ॥
सीतानाथस्ययत् किञ्चित् शभायां त्वन्मुखा च्छ्रुतम् ॥१११॥

ऋषयो मुनयो देवा गन्धर्वाप्सर सस्तथा ॥
केपाश्चि त्कोपि कुत्रापि रामं जानाति धन्य सः ॥११२॥

श्री सीताराम जी के जिस प्रभाव को इस सभा में आपके मुख से जो कुछ सुना है उस प्रभाव को सम्यक् प्रकार से सब कोई नहीं जानते हैं। ऋषि, मुनि, देवता, गन्धर्व अप्सरा और कोई भी हो जहाँ भी हो जो श्री रामजी को जानते हैं वे धन्य हैं ॥११२॥

सर्वे रामंहि जानन्ति नजानन्ति तथापिच ॥
शास्त्र वाक्यै र्वृतो रामो यथार्थे भ्रम कारकैः ॥११३॥

सब कोई श्री राम जी को जानते भी हैं और नहीं भी जानते हैं क्योंकि श्री राम जी यद्यपि शास्त्रों के वाक्यों से आवृत भी हैं तौ भी शास्त्र के शब्द यथार्थ अर्थ में भ्रम पैदा कर देते हैं ॥११३॥

किञ्चि त्वत्कृपया नाथा थवाते दर्शनस्य च ।
प्रभावे स्य ज्ञातु मिच्छा स्माकं जाता रघूत्तमे ॥११४॥

हे नाथ ! हम लोगों को आपकी कृपा से अथवा दर्शन से श्री राम जी के प्रभाव को जानने की इच्छा उत्पन्न हुई है ॥११४॥

उदारोसि कृपालश्च सर्वज्ञोसि सनातन ॥
यथार्थं रामतत्वस्य ज्ञाता नैव च त्वां विना ॥११५॥

आप उदार हैं; कृपालु भी हैं; सर्वज्ञ भी हैं। हे सनातनस्वरूप श्री शंकर जी ! आपके बिना श्री राम तत्व का यथार्थ स्वरूप जानने वाला और कोई नहीं है ॥११५॥

त्वमेव सर्वलोकानां गुरूः पार्मार्थिकः स्वयं ॥
यतः काश्यां मर्ण शीले रामनामो पदिश्यसि ॥११६॥

आप ही सम्पूर्ण लोकों के पारमार्थिक यथार्थ गुरु स्वयं हैं जो आप काशी में मरने वाले को श्री राम नाम उपदेश देकर मोक्ष देते हैं ॥११६॥

यावद्दा शरथे स्तत्वं न जानन्ति यथार्थकम् ॥
तावत्सर्वे मृत्युशीला देवा देवा नरा अपि ॥११७॥

जीव-जब तक चक्रवर्ति कुमार श्री राम जी को यथार्थ रूप से नहीं जान लेता है तब तक चाहे वह देवता हो चाहे दैत्य दानव राक्षस हो चाहे मनुष्य हो वह सब मरण धर्मा हैं ॥११७॥

कृपां कुरू महादेव वयं ते शरणागताः ॥
संतः सर्वे कृपावन्तस्त्वंतु तेषां शिरोमणिः ॥११८॥

हे महादेव ! हम लोगों पर कृपा कीजिए। हम सब आपके शरणागत हैं। सन्त कृपालु होते हैं आप उन संतों में शिरोमणि हैं ॥११८॥

याग्य वल्क्य उवाच

इति विज्ञापनं श्रुत्वा तेषां साधु शिरोमणिः ॥
किमीच्छितंहि भवतां पृष्टा स्ते शम्भुना तदा ॥११९॥

श्री याज्ञवल्कि जी बोले—हे मुने ! उस समय उन सबकी इस प्रकार प्रार्थना सुनकर साधु शिरोमणि श्री शंकर जी ने इन सब लोगों से पूछा कि तुम लोगों की क्या इच्छा है ॥११९॥

Scanned by CamScanner

देवा मुनय श्चोचु:

आर्योसि रामतत्वस्य शिष्यत्वं यांच या महे ॥

तत्वेचूणांतु रामस्य त्वंहि दाता दयानिधे ॥१२०॥

देवता मुनि बोले—हे दयानिधे ! आप श्री राम तत्व के ज्ञाताओं में सर्व श्रेष्ट हैं। श्री राम तत्व के चाहने वालों को श्री राम तत्व आपही देते हैं इसलिए हम लोग आप के शिष्यत्व की याञ्चा करते हैं ॥१२०

शिव उवाच

श्रूयतां जानकीशस्य तत्वज्ञाः सन्ति मा दृशाः ॥

प्रथमं पर वैकुण्ठे विरजायाः परे तटे ॥१२१

श्री शंकर जी बोले—हे देवता मुनियो ! सुनिए। जानकी पति के तत्व को जानने वाले मेरे सरीखे विरजा के पर तट परः परात्पर वैकुन्ठ में निवास करने वाले ॥१२१॥

परोनारायणो देवोऽवतारी परकारणं ॥

यथार्थं सोविजानाति तत्वं राघव सीतयोः ॥१२२॥

जो परात्पर नारायण हैं जो सब अवतार के ही पर कारण हैं वे ही पर देवता श्री राघव सीता जी के यथार्थ तत्व को जानते हैं ॥१२२॥

.परालक्ष्मी प्रिया तस्य साविजानाति तेन वै ॥

आदौ श्री राममन्त्र न्तु तस्मै श्री जानकीददौ ॥१२३॥

उन्हीं के द्वारा उनकी प्रिया श्री परा लक्ष्मी जी भी जानती हैं। उन्हीं पर नारायण को सबसे पहले श्री जानकी जी ने श्री रामसंत्र का उपदेश किया था ॥१२३॥

जानक्या मन्त्रमेवा स्मै स्वयं राम. प्रभु र्ददौ ॥

स्वस्या नामाङ्किता मुद्रा चिन्हिताय च विष्णवे ॥१२४॥

और श्री जानकी जी के मंत्र को इन पर नारायण के लिए परात्पर प्रभु श्री राम जी ने स्वयं दिया था और अपने नाम से अंकित मुद्रिका का चिन्ह भी स्वयं दिया ॥१२४॥

धनुर्वाणाङ्क युक्तोयं सीतयांतु तदा कृतः ॥

एवं संस्कार तत्वाभ्यां युक्तो देव सनातनः ॥१२५॥

और श्री सीता जी ने धनुष वाण के चिन्ह से युक्त किया था इस प्रकार श्री सीताराम तत्व और संस्कारों से युक्त वे सनातन देव पर विष्णु हुए थे ॥१२५॥

तेनापि पर देवेन विष्णुर्नारायणेन वै ॥

स्वस्या प्रिया परा लक्ष्मी संस्कृता चा वबोधिणा ॥१२६॥

और फिर उन पर देव नारायण विष्णु ने अपनी प्रिया परालक्ष्मी को पंच संस्कार युक्त करके इस श्री सीताराम तत्व का उपदेश किया ॥१२६॥

महाशम्भुस्तु श्रीमत्या जानक्या धनुषाङ्कितः ॥

स्वस्या अपि मुद्रयाच द्वाख्यादि मंत्र संस्कृतः ॥१२७॥

और इसी प्रकार महाशम्भू को भी श्री सती जानकी जी ने श्री राम जी के धनुष और अपनी मुद्रिका का चिन्ह दिया तथा श्री सीताराम जुगल मंत्र और मंत्रद्वयादि सम्पूर्ण पंच संस्कारों को दिया ॥१२७॥

Scanned by CamScanner

ततो महाशम्भुनैव महाविष्णुः परिस्कृतः ॥
बाह्यान्तरे श्च संस्कारै स्तेनैवाऽहं तथा विधः ॥१२८॥

उसके बाद श्री महाशम्भू जी ने ये ही पंच-संस्कार श्री महाविष्णु जी को दिए और उन्हीं महाशम्भू जी ने मेरे भी उसी प्रकार बाह्य और आन्तरिक संस्कार किए ॥१२८॥

एवं महा विष्णुनैव विष्णु र्यज्ञ तनुस्तथा ॥
विष्णुना चैव श्रीदेवी श्रीदेव्याच ततः परम् ॥१२९॥
विश्वक्सेनादयः सर्वे संस्कृताः रामसीतयोः ॥
मन्त्रैश्च चाप बाणाभ्यां सीताया मुद्रया तथा ॥१३०॥

और उसी प्रकार श्री महाविष्णु ने भी यज्ञतनु नाम के विष्णु का पंच संस्कार किया। उन विष्णु ने अपनी प्रिया श्री देवी का पंच संस्कार किया और फिर श्री देवी ने भी उसके आगे श्री सीताराम पंच संस्कारों को विष्वकसेनादि वैकुन्ठ के पार्षदों का संस्कार किया। श्री सीताराम युगल मंत्र के साथ धनुष बाण और श्री सीता जी की मुद्रिका छाप दिया ॥१२९॥१३०॥

विष्णुना च तथा ब्रम्हा ब्रम्हणा नारदा दयः ॥
परन्तु रामतत्वस्य सम्यग्ज्ञाता कचि त्क्वचित् ॥१३१॥

और विष्णु ने इन पंच-संस्कारों को ब्रह्मा जी को दिया। ब्रह्मा जी ने नारदादिकों को दिया परन्तु श्री राम तत्व का सम्यक् ज्ञाता कोई २ है ॥१३१॥

देवामुनयं ऊचुः

अस्माकं कुरु संस्कारः संस्कृतापार्वतीयथा ॥
इत्येवं विनयं नाथ विलम्बं माकुरु प्रभो ॥१३२॥

देवता मुनि लोग बोले—हे प्रभो! आपने जिस प्रकार श्री पार्वती जी का संस्कार किया उसी प्रकार हम लोगों का भी पंच-संस्कार कीजिए। हे नाथ? हम लोगों की इस विनय को सुन लीजिए देरी मत कीजिए ॥१३२॥

श्री याज्ञवल्क्य उवाच

तानातंयुक्तां स्तु स चार्त बन्धु रास्वास्यतन्मण्डपं मयियौ च ॥
प्रज्वाल्यवेदी हविषाचहूय यत्पूर्व कृत्यं कृत मेवसर्वम् ॥१३३॥

श्री याज्ञवल्कि जी बोले कि श्री शंकर जी ने आरत हुए उन देवादिकों को आश्वासन देकर आरत बन्धु श्री शंकर जी संस्कार-मण्डप में आए और वेदी को प्रजज्वलित करके हवन किया और पूर्ववत् सब कृत्य करके ॥१३३॥

तप्तेन धनुषा राम नामाङ्कित शरेण च ॥
जानक्या मुद्रया शीघ्रं स्वांकिता मुनि देवताः ॥१३४॥

श्री राम नामाङ्कित धनुष बाण और श्री जानकी जी की मुद्रिका को तपाकर मुनि देवता सबको शीघ्र अंकित किया ॥१३४॥

पुनस्तैः पूज्य मानस्तु प्रसन्नानन शंकरः ॥
उवाच पार्वतीं देवीं शेष संस्कार हेतवे ॥१३५॥

फिर उन देवता मुनियों ने भी श्री शंकर जी की पूजा स्तुति की तब प्रसन्न मन होकर श्री शंकर जी और अधिक संस्कार के लिए श्री पार्वती जी से बोले ॥१३५॥

शिव उवाच

गिरिराजे सुतेऽद्यस्तु कर्णीयो नाम सूत्सवः ॥
मुद्रा पूजनोत्सवश्च धनुरुत्सव नामकः ॥१३६॥

हे गिरिराज सुते ! अब आप का नाम-संस्कार का भी उत्सव होना चाहिए तथा मुद्रिका धनुष बाण का भी पूजन-उत्सव होना चाहिए जो धनुरुत्सव नाम से प्रसिद्ध है ॥१३६॥

पुनरेवात्र तः श्रीमत्सीतारामौ स्वमन्दिरे ॥
गानवाद्यैं विमानेन नेतव्यौ सत्समाजतः ॥१३७॥

उनके बाद इस संस्कार मण्डप से श्रीमत् सीताराम जी की मूर्तियों को विमान में बैठाकर सन्त समाज से गानबजानोत्सव पूर्वक अपने मन्दिर में ले जाने चाहिए ॥१३७॥

गानं कर्तुं प्रेरयस्व सखीःस्वस्याः स्वरावराः ॥
शंकरेणेत्युक्तवति सुस्वरैः शीघ्रनादितम् ॥१३८॥

हे पार्वती जी ! तुम गाने वाली अपनी श्रेष्ठ सखियों को गाने के लिए प्रेरणा करो । इस प्रकार श्री शंकर जी के कहने पर सुन्दर स्वरों से संगीत का शीघ्र नाद उठा ॥१३८॥

प्रोवाच पार्वतीं शम्भुः नामते संस्कृतं प्रिये ॥
जानकी पादशीलेति श्रुत्वा सा मोद माययौ ॥१३९॥

इस तरह श्री शंकर जी पार्वती से बोले कि हे प्रिये ! आपका नाम जानकी पाद शीला संस्कार किया। यह सुनकर श्री पार्वती जी महाआनन्द मग्न हो गई ॥१३९॥

कृत्वा नामोत्सवं शम्भुः कृतं वै धनुरुत्सवं ॥
समग्रं सद्विधानेन प्रीत्या श्रीशम्भुना मुने ॥१४०॥

इस प्रकार पार्वती जी का नामोत्सव संस्कार करके श्री शंकर जी फिर धनुरुत्सव संस्कार को प्रेम से विधान पूर्वक सम्पूर्ण किया ॥१४०॥

भरद्वाज उवाच

कथं केनोपचारेण कोवाथो धनुरुत्सवः ॥
कथ्यतां मुनिशार्दूलविधिना भाव कौतुकम् ॥१४१॥

श्री भरद्वाज जी बोले कि हे मुने ! वह धनुरुत्सव किस लिए, किन उपचारों से कैसे किया । हे मुनिशार्दूल यह भाव के कौतुक को बढ़ाने वाला विधान और कहिए ॥१४१॥

याज्ञवल्क्य उवाच

चन्द्रिका मुद्रिके द्वे च सीतायाः संस्कृती शुभे ॥
धनुर्बाणौतु रामस्य नाम मुद्रा तु पञ्चमः ॥१४२॥

Scanned by CamScanner

श्री याज्ञवल्कि जी बोले कि चन्द्रिका और मुद्रिका ये दो तो श्री सीता जी के शुभ संस्कार कहे जाते हैं। धनुष और बाण श्री राम जी के संस्कार कहे जाते हैं और पाँचवे श्री सीताराम नाम छाप सहित ये पंच-मुद्रा कहे जाते हैं ॥१४२॥

चिन्हितो पञ्चमुद्राभिः सर्वलोकेषु पूजितः॥
तेषांचिन्हं विनैवाय मात्मा पूतो नजायते ॥१४३॥

जो इन पञ्च मुद्राओं से चिन्हित होता है वह सम्पूर्ण लोकों में पूजित होता है। इन पञ्च मुद्राओं की छाप के बिना आत्मा पूर्ण पवित्र नहीं होने पाता है ॥१४३॥

तप्ता वेतौ धनुर्वाणौ सीताया मुद्रिका तथा ॥
नतापये रामसुद्रा चन्द्रिकां नैव तापयेत् ॥१४४॥

धनुष बाण और श्री सीता जी की मुद्रिका ये तो तपा कर लगाने चाहिए और नामें को न तपावे तथा चन्द्रिका को न तपावे ॥१४४॥

राम क्षेत्रे मृदा तेद्वै धारये त्तिलकं यथा ॥
पञ्च भिश्चिन्हितो योसौ रामभक्तेषु गीयते ॥१४५॥

और श्री सीताराम धाम की मिट्टी से जिस प्रकार तिलक लगाया जाता है उसी प्रकार इन पञ्च-मुद्राओं से जो शीतल छाप भी लगाते हैं वे श्री रामभक्तों में अग्रगण्य गिने जाते हैं ॥१४५॥

पूर्वं प्रणव मुच्चार्य चतुर्थ्या समयोजयेत् ॥
नामतेषां मन्त्ररूपं पूजनं तेन कारयेत् ॥१४६॥

अब पञ्च मुद्राओं को धारण करने के मन्त्रों को बताते हैं। प्रथम ॐ लगाकर फिर इन मुद्राओं के नाम में चतुर्थी लगा देने से अन्त में नमः कह देने पर मुद्राओं के नामही मन्त्र बन जाते हैं इन्हीं मन्त्रों से इन पञ्च मुद्राओं का पूजन करे ॥१४६॥

षोडसैः पूजयि त्वातु संस्कुर्ये च्छिष्य मुत्तमम् ॥
पूजनं कारये त्तेषां तेन पश्चा त्तथा विधैः ॥१४७॥

षोडसोपचार पूजन करके सच्छिष्य का शीतल और तप्त संस्कार करे फिर शिष्य से भी उसी प्रकार पूजन करावे ॥१४७॥

नीराजनं गानवाद्यैः पुष्पवृष्ट्या समन्वितम् ॥
धनुरुत्सव मेवं च कथ्यते द्विज सत्तम ॥१४८॥

हे ब्राह्मण श्रेष्ठ! आरती गान, बजान, फूल संयुक्त पूजा को धनुरुत्सव कहा जाता है ॥१४८॥

एवं नीराजनं कृत्वा मुद्राणां रामसीतयोः ॥
उच्चस्वरेण विज्ञप्तीं शम्भुना च तथा कृता ॥१४९॥

श्री शंकर जी ने तथा पार्वती जी ने इसी प्रकार श्री सीताराम जी की मुद्राओं की आरती पूजा करके उच्चस्वर से उन मुद्राओं की सभा में स्तुति किया तथा बाद में इस उत्सव के स्वरूप को बताया ॥१४९॥

Scanned by CamScanner

शिवपार्वत्यानूचतुः

राम ब्रम्ह राजपुत्र हस्तेऽनस्रं विराजितौ ॥
सूर्या नन्त प्रभावन्तौ धनुर्वाणौ नमाम्यहम् ॥१५०॥

श्री शिवजी सहित पार्वती जी बोले कि—हे परात्परब्रह्म श्री रामचन्द्र जी के हस्तकमल में विराजने वाले अनन्त सूर्यों के समान् प्रभाव वाले धनुर्बाण जी आपको हम नमस्कार करते हैं ॥१५०॥

असुराणां घातकौ च सुराणां भय नाशकौ ॥
निहितेभ्यो मोक्षदौ च धनुर्वाणौ नमाम्यहम् ॥१५१॥

हे असुरों के नाश करने वाले! देवताओं के भय नाशक! जो आपको धारण करे उसको मोक्ष देने वाले धनुर्बाण जी हम आपको नमस्कार करते हैं ॥१५१॥

स्वचिन्ह बाहु मूलेभ्यः सीतारामांघ्रि भक्तिदौ ॥
श्रीराममुष्टि सौभाग्यौधनुर्वाणौ नमाम्यहम् ॥१५२॥

जो आपके चिन्हों को अपने बाहु मूल में धारण करते हैं उनको श्री सीताराम जी के चरणों की भक्ति देने वाले, श्री राम जी की मुष्टी में रहने का सौभाग्य है जिसका, ऐसे धनुष-बाण जी को मैं नमस्कार करता हूँ ॥१५२॥

ध्याना नन्द करौ दिव्यौ योगीनांध्यान दुर्लभौ ॥
नित्यं रामा युधारव्यौतौ धनुर्वाणौनमाम्यहम् १५३॥

भक्तों को ध्यान के दिव्य आनन्द को देने वाले, रुक्ष योगियों के ध्यान में जो अत्यन्त दुर्लभ हैं; श्री राम जी के नित्य आयुध श्री धनुष-बाणों को प्रणाम करता हूँ ॥१५३॥

ममशूला च्छक्ति शूला त्विष्णुच क्रात्परात्परौ ॥
दिव्यन्तौ राममुष्ट्या श्रीधनुर्वाणौ नमाम्यहम् ॥१५४॥

जो मेरे शूल से, शक्ति के शूल से, विष्णु के चक्र से, तथा सभी आयुधों से परात्परतर हैं और सब आयुधों के कारण ईश्वर तथा श्री राम जी के हाथ में रहने वाले दिव्य श्री धनुर्बाण जी को मैं नमस्कार करता हूँ ॥१५४॥

रासे श्रीरामचन्द्रस्य चार्वांगाभिनयेंगिते ॥
चलच्चमत्कृता वेतौ धनुर्वाणौ नमाम्यहम् ॥१५५॥

रास के रंग में नृत्य करते हुए श्री राम जी के श्रेष्ठ अंगों में अभिनय चाल पर चमकने वाले दोनों श्री धनुष बाण जी को मैं नमस्कार करता हूँ ॥१५५॥

श्रीराम वनिताभिश्च तद्विश्लेषे समर्चितौ ॥
स्पृसन्तीनां मोद करौ धनुर्वाणौ नमाम्यहम् ॥१५६॥

प्रियतम के वियोग में श्री राम जी की पत्नियों ने जिनका सम्यक् प्रकार पूजन किया। स्पर्श करने पर महा आनन्दित हुई इस प्रकार के श्री धनुर्बाण जी को मैं नमस्कार करता हूँ ॥१५६॥

Scanned by CamScanner

असुरेभ्यो भीतकेभ्यः सुरेभ्यः शरणं प्रदौ ॥
भूमिभार हरावेतौधनुर्बाणौ नमाम्यहम् १५७

भयभीत हुए असुर देवतादि सब को शरण देने वाले, भूमि के भार को हरण करने वाले श्री धनुष-बाण जी को नमस्कार करता हूँ ॥१५७॥

इति धनुर्बाणाष्टकम् अथ चन्द्रिकाष्टकम्

यस्या अंशेन रमो मा साविज्याद्यादि शक्तयः ॥
सम्भवन्ति सदाहं श्री चन्द्रिका लंकृतीं स्तुमः ॥१५८॥

यहाँ तक श्री धनुर्बाण जी का अष्टक हुआ। अब यहाँ से आगे श्री चन्द्रिका जी का अष्टक कहते हैं जिनके अंश से रमा उमा सावित्री आदि अनन्त शक्तियाँ उत्पन्न होती हैं इस प्रकार की श्री सीता जी के अलंकारभूता श्री चन्द्रिका जी की मैं स्तुति करता हूँ ॥१५८॥

श्रीरामध्यानगम्यंच मुमुक्षुभ्यो गतिप्रदम् ॥
सीताशिरो भूषण श्री श्रन्द्रिकाख्यं नमाम्यहम ॥१५६॥

श्री राम जी के ध्यान में निवास करने वाली, मुमुक्षुओं को गति देने वाली श्री सीता शिर भूषण स्वरूप श्री चान्द्रिका जी को मैं नमस्कार करता हूँ ॥१५६

श्रीरामाक्षि भोगरूपं चन्द्रकोटि प्रभाधरम् ॥
सीताशिरोभूषणं श्रीचन्द्रिकाख्यं नमाम्यहम् ॥१६०॥

श्री राम जी के नेत्रों को सुख भोग देने वाली, करोड़ों चन्द्रमाओं के प्रकाश को धारण करने वाली श्री चन्द्रिका नाम से प्रसिद्ध श्री सीता जी के शिरभूषण को मैं नमस्कार करता हूँ ॥१६०॥

समाप्तिकां भूषणानां बिना न्यूनं करी तुया ॥
ललाटिका परं ध्येया तां सीता लंकृतिं स्तुमः ॥१६१॥

जिनके बिना सब भूषण न्यून ही प्रतीत होते हैं। सब भूषणों की अवधि, श्री सीता जी के ललाट-अलंकृति रूप में जिनका ध्यान होता है ऐसी श्री चन्द्रिका जी की मैं स्तुति करता हूँ १६१॥

सीतारामयो र्युगलोपासकानां ललाटकौ ॥
तिलकेभ्राज माणां तां चन्द्रिकाख्यं नमाम्यहम् ॥१६२॥

श्री सीताराम जुगल उपासकों के भाल तिलक में शोभित होने वाली श्री चन्द्रिका जी को मैं नमस्कार करता हूँ ॥१६२॥

स्वरस्मि मण्डले दिव्ये दीप्यन्तीं तरलप्रभे ॥
चन्द्र भानु तिरस्कृत्य तां सीतालंकृतिं स्तुमः ॥१६३॥

अत्यन्त तीक्ष्ण प्रकाश मण्डलके बीच में स्वयं प्रकाशमान होने वाली चन्द्र सूर्यों के प्रकाश का तिरस्कार करने वाली श्री सीता जी के अलंकार स्वरूपा श्री चन्द्रिका जी की मैं स्तुति करता हूँ ॥१६३॥

यस्याश्चिन्हं भालमध्ये विधाय रामसीतयोः ॥
भावुका रसिकत्वंहि यान्ति तां चन्द्रिकां स्तुमः ॥१६४॥

Scanned by CamScanner

जिनके चिन्ह को भालमध्य तिलक में धारण करने से श्री सीताराम के भावुक रसिकता को प्राप्त करते हैं उन श्री चन्द्रिका जी की मैं स्तुति करता हूँ ॥१६४॥

यस्याश्चिन्हं भाल देशे विधाय तिलके शुभे ।
भवेद्रामस्यातिप्रियस्तां सीता लंकृतिं स्तुमः ॥१६५॥

जिनके चिन्ह को भाल मध्य तिलक पर धारण करने से भक्त श्री राम जी का अत्यन्त प्रिय होता है। इस प्रकार की श्री सीता अलंकृति की मैं स्तुति करता हूँ ॥१६५॥

इति श्री चन्द्रिकाष्टकम ॥ श्रीमुद्रिकाष्टकञ्च ॥

सीता कर सरोजस्य दले किल विराजितम् ॥
स्वङ्गुली भूषणं तस्मा न्मुद्रिकाख्यां नमाम्यहम् ॥१६६॥

(यहाँ तक श्री चन्द्रिका जी का अष्टक कहा। अब आगे श्री मुद्रिका जी के अष्टक को कहते हैं।) श्री सीता जी के करकमल दल में विराजने वाली अँगुली भूषण स्वरूपा श्री मुद्रिका जी को मैं नमस्कार करता हूँ ॥१६६॥

श्रीरामो योगिभिर्ध्येयः सोपि ध्यायति यांसदा ॥
सीतानामांक संयुक्तां मुद्रिकां प्रणमाम्यहम् ॥१६७॥

सब योगियों से ध्येय, जो श्री राम जी वे भी जिसका हमेशा ध्यान करते हैं ऐसी श्री सीता नाम से अंकित श्री मुद्रिका जी को मैं प्रणाम करता हूँ ॥१६७॥

तेजो मण्डल सन्द र्भै भक्तानां हृदये तमः ॥
हारिणि प्रकुरू श्रेयो जानकीमुद्रिके हि मे ॥१६८॥

महान् तेज मण्डल से भक्तों के हृदय के अंधकार को दूर करने वाली; हे श्री जानकी जी की मुद्रिके ! आप मेरा कल्याण करें ॥१६८॥

कृपापात्रस्य जानक्या जनस्य मस्तकोपरि ॥
वर्तिनीं सर्वलोकेष्वभयदां मुद्रिकां स्तुमः ॥१६९॥

श्री सीता जी के महा कृपा पात्र भक्त के मस्तक पर रहने वाली सम्पूर्ण लोकों को अभय देने वाली श्री मुद्रिका जी की मैं स्तुति करता हूँ ॥१६९॥

आदर्श वर्तुलाकारे कपोले स्यामसुंदरे ॥
स्फुरतीं राजपुत्रस्य दक्षे सीतोर्मिकां स्तुमः ॥१७०॥

शीशा की तरह चमकने वाले राजकुमार श्री श्याम सुन्दर के गोल कपोलों पर चमकने वाली बड़ी चतुरा श्री सीता जी की मुद्रिका की मैं स्तुति करता हूँ ॥१७०॥

यस्या अंशोद्भवा माया जगदुत्पादितुं क्षमा ॥
सीताङ्गुल्योर्मिका सामे श्रेयोदिशतु सर्वदा ॥१७१॥

जिनके अंश से उत्पन्न होकर माया जगत को उत्पन्न पालन प्रलय करने में कुशल होती है ऐसी श्री सीता जी के अँगुली-भूषण श्री मुद्रिका जी मेरे लिए हमेशा कल्याण देवै ॥१७१॥

Scanned by CamScanner

अंगुष्टस्यापि तर्जन्यां मध्यमा या मनोहरा ॥
रामस्य राजपुत्रस्य जानक्यामुद्रिकां स्तुमः ॥१७२॥

श्री जानकी जी के अँगुष्ठ तर्जनी मध्यमा उँगलियों में रहकर राजपुत्र श्री राम जी के मन को चुरा लेने वाली श्री मुद्रिका जी को मैं स्तुति करता हूँ ॥१७२॥

कनिष्ठाया उर्मिकां चा नामिकायास्तथैवच ॥
विभ्रन्तीं मण्डलं नौमी जानक्या करयोद्वयोः ॥१७३॥

श्री जानकी जी के दोनों कर कमलों की कनिष्ठका अनामिका उँगलियों में रहकर प्रकाश का मण्डल बाँधने वाली श्री मुद्रिका जी को मैं नमस्कार करता हूँ ॥१७३॥

चंद्रिका मुद्रिका वाण धनुषां च स्तवातिकम् ॥
उमामहेश्वरोक्तं च स्त्रियो वा पुरुषा अपि ॥१७४॥

श्री उमा महेश्वर जी से की हुई श्री चान्द्रिका मुद्रिका धनुष बाण की स्तुति को स्त्री वा पुरुष ॥१७४॥

पठन्ति नियमान्नित्यं सायं प्रातस्तु भक्तितः ॥
सायुज्यं ते प्राप्नुवन्ति सीताया राघवस्य च ॥१७५॥

जो कोई भी सायं प्रातः नियम पूर्वक भक्ति से पाठ करते हैं वे श्री सीता राघव जी की सायुज्य मुक्ति को प्राप्त करते हैं ॥१७५॥

इति श्री शङ्कर कृते श्री अमर रामायणे सीतारामरत्न मञ्जूषायाँ
पार्वता सँस्कारो नाम प्रथमस्सर्गः ॥१॥

यह श्री शंकर जी के द्वारा रचना किया हुआ "श्री सीताराम रत्न मंजूषा" नामक अमर रामायण में पार्वती संस्कार प्रसंग पहला सर्ग सम्पूर्ण (समाप्त हुआ।

श्री याज्ञ बल्क्य उवाच

इत्थं गिर्य्यात्मजायाश्तु कृत्वा संश्कार याज्ञकम् ॥
अर्चा समाजकं सर्वं पार्वत्या सह शम्भुना ॥१॥

श्री याज्ञवल्कि जी बोले कि हे मुने ! श्री शंकर जी ने गिरिजा जी का इस प्रकार अर्चा पूजन समाज जोड़ करके विधान पूर्वक पंच संस्कार यज्ञ किया ॥१॥

विमानेन गानवाद्यै नृत्यद्भिः शिव किंकरैः ॥
वेदान् गृणद्भिः मुनिभिर्नीतं तत्रैव मंदिरे ॥२॥

इसके बाद श्री शंकर जी के गणों द्वारा गान बजाना नृत्य के सहित और मुनियों द्वारा वेदध्वनि सहित विमान से श्री सीताराम अर्चा विग्रह समाज को उसी अपने नित्य पूजा के मन्दिर में लिवा लाए ॥२॥

सिंहासने स्वर्णमये खचिते रत्नजालकैः ॥
मूर्ती दिव्ये रामचंद्र सीतयोः स्थाप्य शङ्करः ॥३॥

और लाकर खचित स्वर्णमय सिंहासन पर श्री सीताराम अर्चा मूर्तियों को श्री शंकर जी ने स्थापित किया ॥३॥

Scanned by CamScanner

कृत्वा प्रणामंयुगलं तत्र सान्तरमन्दिरे ॥

समाज सहित स्तस्थौ मुनिदेवैः परिवृतः ॥४॥

फिर श्री शंकर जी श्री सीताराम जुगल सरकार को प्रणाम करके विस्तार मैदान वाले उस मन्दिर में देवता मुनियों के समाज से घिरे हुए बैठे ॥४॥

इत्यन्तरे शैलसुतात्मनाथं पवित्रगाथं प्रणयान्वितासौ ॥

हर्षाश्रु रोमोद्गम कायकान्ती परेश्वरं प्राञ्ज लिनावभाषे ॥५॥

तब पर्वत कन्या श्री पार्वती जी पवित्र कीर्ति वाले अपने प्राण नाथ को हर्षाश्रु रोमाञ्चित गद्गद होकर प्रणय पूर्वक हाथ जोड़कर प्रसन्न मन श्री शंकर जी से बोलीं ॥५॥

श्री पार्वत्युवाच

कृतः श्रमस्त्वया नाथ मदर्थे करुणात्मना ॥

सद्भावत्वं सतामेत त्परकार्यसुयोजकम् ॥६॥

हे नाथ! करुणापूर्ण आपने मेरे लिए बहुत बड़ा परिश्रम किया। दूसरे के लिए सत्कार्यों को सुयोजित करने में परिश्रम करना यह संतों की सद्भावुकता है। ६॥

महात्मानः पर्यटन्ती गृहीणां बद्ध चेतसाम् ॥

श्रेयसे सततं लोके समं कृत्वा दुःखं सुखम् ॥७॥

संत लोग हमेशा दुख सुखों को सहन करते हुए भी गृहस्थी में बद्धचित्त वाले गृहस्थों के घरों में उनके कल्याणों के लिए विचरा करते हैं ॥७॥

निष्कामापि वहत्येव लोके देव सरिद्यथा ॥

निस्काम स्तपतेसूर्य्य स्तमः सीत हरः प्रभुः ॥८॥

यद्यपि वे निष्काम होते हैं तो भी जैसे गंगा और सूर्य संसार के पाप व अन्धकार (तापों) को दूर करने के लिए निष्काम चला करते हैं तैसे वे (सन्त) भी चलते हैं ॥८॥

श्रुत्वेत्युमायाः सुविनीत वाक्यं विश्वास निष्ठा रुचि सूचनंच ॥

प्रसंशयं प्राणप्रियां हरोपि हर्षप्रयुक्तोहि हितं वभाषे ॥९॥

श्रद्धा, विश्वास और निष्ठा की सूचक श्री पार्वती जी की वाणी सुनकर अत्यन्त हर्ष में भरे श्री शंकर जी प्राणप्रिया की प्रसंसा करते हुए हितमय बचन बोले ॥९॥

शिव उवाच

निवर्तितं तुतत्सर्वं मिदानीं सुस्थिराभव ॥

श्रूयतां सततं प्रीत्या पूर्वं पृष्टा हिया कथा ॥१०॥

हे प्रिये आपके संस्कार विधानों को मैंने पूरा किया। अब स्थिरचित्त होकर पहले पूछे हुए प्रश्नों के उत्तरों को अब सतत प्रेम से सुनिए ॥१०॥

Scanned by CamScanner

उमोवाच

अयमेवाभिलाषोमे न मया प्रेरितः प्रभुः ॥
श्रममाप्तो यज्ञ कार्य्ये क्षणं विश्रम्य चारभ ॥११॥

श्री पार्वती जी बोलीं—हे नाथ ! मेरी भी यही अभिलाषा थी पर मैंने प्रेरणा इसलिए नहीं की कि आप यज्ञ कार्य में परिश्रम पाए हैं अतः थोड़ी देर विश्राम करके तब कथा आरम्भ कीजिए ॥११॥

शिव उवाच

येभावनिर्भराः सीतारामचन्द्र पदाम्बुजे ॥
तेषां तयोः कथैवस्या द्विश्राम श्चापरः श्रमः ॥१२॥

श्री शिव जी बोले कि जो श्री सीताराम चरणकमलों के भाव में निमग्न हैं उनके लिए श्री सीताराम कथा ही विश्राम है और सर्वत्र परिश्रम है ॥१२॥

सीताराम गुणानांहि श्रवणे यत्सुखं परम् ॥
ब्रह्मेन्द्राणां पदे प्राप्ते न वा मोक्षे सुखं तथा ॥१३॥

श्री सीताराम गुणगान सुनने में जो परम सुख प्राप्त होता है वह सुख ब्रह्मा इन्द्र-पद और मोक्ष पद पाने पर भी नहीं होता है ॥१३॥

शुको वाल्मीकि व्यासौ च शेषोपि सनकादयः ॥
महाशम्भुर्महाविष्णुः सर्वे रामकथारताः ॥१४॥

श्री शुकदेव जी, श्री वाल्मीकि जी, श्री व्यास जी, श्री शेष जी, श्री सनकादि जी, श्री महाशम्भु जी और श्री महाविष्णु जी ये सब श्री सीताराम कथा में ही आसक्त चित्त हैं ॥१४॥

पार्वत्यूवाच

कुरुष्व मंगलं नाथ वक्तुं सीतापते र्गुणान् ॥
परन्तु चरितं ब्रह्म लौकिकं कथयप्रभो ॥१५॥

श्री पार्वती जी बोलीं कि हे नाथ ! यदि ऐसी बात है तो तब श्री सीतापति के गुणगान वर्णन करने का मंगला चरण आरम्भ कीजिए परन्तु कथा दिव्य धाम की ही कहिए ॥१५॥

शिव उवाच

कनकभवनखण्डे मण्डिते मुक्तजालै र्विभूषित वरवेषो नाट्यकेलिप्रयुक्तः॥
कमल वदन कान्ता मण्डले मोहन श्री र्जयति जनक जायाः प्रेमपूर्णाम्बुजाक्षः ॥१६॥

श्री शिव जी बोले कि श्री जनक जाया जी के प्रेम में परिपूर्ण कमल सदृश नेत्र वाले श्री रघुनाथ जी की जय हो जो श्री रघुनाथ जी कनक भवन के मणि मुक्ता जालों से भूषित रासखण्ड में सुन्दर वस्त्रा भूषणों से श्रेष्ठ श्रृङ्गार किए हुए अत्यन्त मन मोहक सौन्दर्य युक्त रास नृत्य करने के लिए तैयार हैं ऐसे कमलवदनी कान्तामण्डल के मोहक सौन्दर्य वाले तथा जानकी जी के अनुराग से भीजे नेत्र वाले श्री प्रीतम की जय हो ॥१६॥

Scanned by CamScanner

चपल चरण चारै स्तान मान प्रकारै रभिनय करकञ्ज भ्रामितो पाङ्ग दृष्टि: ॥
अधर मधुर बिम्ब स्मेर शोभा विधायी जयति जनकजेशः कोटि कन्दर्प कान्तिः ॥१७॥

जो अपने चरण कमलों की चंचलता से राग तान के मान प्रकार पूर्वक करकमल से अभिनयों को प्रकट (प्रगट) करते हुए चंचल दृष्टि से कटाक्ष करते हुए और मधुर बिम्बाफल के समान लाल अधरों से मंद मुसकराते हुए करोड़ों कामदेवों के दर्प को दमन करने वाले सुन्दरता के विधान करने वाले श्री जनकजा जी के प्राणनाथ की जय हो ॥१७॥

विचलित कच वृन्दै गण्डयुग्मा वृत श्री जित विधुमुख कान्ति वीटिका चर्वणेन ॥
सघन घन वपु. श्री कौशलेशात्मजोसौ जयति जनकजायाः प्राणनाथ: प्रकामम् ॥१८॥

जिनके दोनों गोल कपोलों पर अलकें चंचल हो रही हैं और अपने मुख चन्द्र की कान्ति से पान बीरा चर्वण करते हुए चन्द्रमा की शोभा को जीत रहे हैं इस प्रकार सघन मेघ के सदृश श्री श्याम सुन्दर सबके मनोरथों को पूर्ण करते हुए इन श्री कौसलेशात्मज श्री जनकजा जी के प्राणनाथ की जय हो ॥१८॥

ऋषि मुनिभिरूपास्य स्तर्क शास्त्रै रतर्क्यः श्रुति सकल सु गीतः प्रीतिसाध्यो न चान्यैः ॥
ममहृदय नवाब्जे यस्य वासोऽप्यजस्रं जयति जनक जाया वल्लभोऽसौ परेशः ॥१९॥

जो ऋषि मुनियों के उपास्य देव हैं; तर्क शास्त्रों से जिन की तर्कना नहीं की जा सकती है; समस्त श्रुतियाँ जिनका सुन्दर गान करती हैं; जो केवल प्रेम से ही प्राप्त हो सकते हैं अन्य साधनों से नहीं; मेरे हृदय के नवीन कमल में जिनका नित्य एक रस बास है ऐसे परात्पर ईश्वर श्री जनकजाया जू के बल्लभ की जय हो ॥१९॥

अहं विधाता विष्णुश्च सोमः सूर्यश्च तारकाः ॥
वाय्वग्न्याकाशमह्यादि दिग्पालादिग्च पर्वताः ॥२०॥

मैं और ब्रह्मा तथा विष्णु, सोम (चन्द्रमा) सूर्य तारागण, वायु अग्नि, आकाश, पृथ्वी, दिक्पाल, दिग्गज पर्वत ॥२०॥

ऋषयो मुनयो देवा असुरा ऋद्धिसिद्धयः ॥
गन्धर्वाप्सरसो नागाः किन्नराः सिद्ध यक्षकाः ॥२१॥

ऋषि, मुनि, देवता, असुर, ऋद्धि-सिद्धि आदि, गन्धर्व, अप्सरा, नाग, किन्नर, सिद्ध यक्ष ॥२१॥

समुद्राः सरितश्चान्ये यावद्ब्रह्माण्ड गोलकाः ॥
भिन्नाश्चापि भिन्नरूपाः प्रति ब्रह्माण्ड वर्तका ॥२२॥

समुद्र, नदियाँ और भी जो ब्रह्माण्ड गोलक के अन्दर हैं वे चाहे भिन्न रूप हों चाहे अभिन्न रूप में हों इसी ब्रह्माण्ड में हों अथवा अन्य जितने ब्रह्माण्डों में हों ॥२२॥

सीतारामाश्रयाः सर्वे कलाश्चांश विभूतयः ॥
चतुर्विंशति मूर्तीनां चतुर्णां चादि कारणम् ॥२३॥

ये सब के सब श्री सीताराम जी के ही कला अंश विभूतियां हैं तथा श्री सीताराम जी के ही आश्रित भी हैं और चौबीसों अवतारों के भी कारण ये ही श्री सीताराम जी हैं ॥२३॥

Scanned by CamScanner

सीतारामौ विजानीहि सत्यं सत्यं ब्रवीमिते ॥
नृपेयथा ह्यमात्यत्वं तथा रामे निवोध्यतां ॥२४॥

श्री सीताराम जी ही सनातन सत्य परात्पर ब्रह्म हैं यह बात मैं तुम से सत्य कहता हूँ; सत्य कहता हूँ। जितने भी ईश्वर हैं वे सब राजा के पास में मन्त्रियों की तरह श्री राम जी के पास में हैं ऐसा निश्चय जानो ॥२४॥

नारायणत्वं विष्णुत्वं भगवत्तादिकं हि यत् ॥
नाम्नि रूपे च लीला सु धाम्नि यस्य परात्परे ॥२५॥

श्री नारायण में नारायणत्व श्रीविष्णु में विष्णुत्व आदि जितने भी भगवत्तादिक गुण हैं वे सबके सब परात्पर ब्रह्म श्री सीताराम जी के नाम रूप लीला धाम के ही अन्तरगत हैं ॥२५॥

बृहत्त्वं विद्यते तस्मा द्रामे ब्रह्म त्व मागतम् ॥
ब्रम्हेति च पदं यत्तु बृहत्त्वार्थे प्रकीर्तितम् ॥२६॥

जितना भी बृहत्त्व (बड़प्पन) है वह सब श्री सीताराम जी के ही ब्रह्मत्व से ही आया हुआ है। 'ब्रह्म' यह जो पद है बृहत्त्वार्थ वाचक ही कहा जाता है ॥२६॥

बृहद्गुणा चिदानन्दे श्रीरामेघटतिस्वतः ॥
ईश्वर्य्य श्चेश्वराः प्रोक्ताःस्वेस्वे धाम्नि प्रवर्त्तकाः ॥२७॥

बृहद् गुण जितने भी हैं वे सब सच्चिदानन्द श्री सीताराम जी में ही स्वतः सुघटित हैं। जितने भी ईश्वर और ईश्वरी अपने २ धामों के प्रवतेक कहे जाते हैं वे सब ॥२७।

जानक्यारामचन्द्राच्च समुद्भूताः सनातनाः ॥
अप्रमेय विभवौ श्रीसीतारामौ नमाम्यहम् ॥२८॥

श्री जानकी और श्री राम जी से ही सनातन समुद्भूत (उत्पन्न) हैं। इस प्रकार के अप्रमेय वैभव वाले श्री सीताराम जी को मैं नमस्कार करता हूँ ॥२८॥

सर्वेश्वरौ सर्वाधारौ कार्य कारणतः परौ ॥
माधुर्य्य मण्डल स्थौ श्रीसीतारामौ नमाम्यहम् ॥२९॥

जो कार्य और कारणों से परे हैं; सब के ईश्वर और सब के आधार हैं; ऐसे परात्पर ब्रह्म माधुर्य मण्डल में रहने वाले श्री सीताराम जी को मैं नमस्कार करता हूँ ॥२९॥

माधुर्य रूप सम्पन्नौ सीतारामौ नमाम्यहम् ॥
येचात्मवन्तौः मुनयो हर्निशं रामसीतयोः ॥३०॥

सम्यक् प्रकार माधुर्य रूप से सम्पन्न श्री सीताराम जी को मैं नमस्कार करता हूँ। जो आत्मवान् मुनि लोग अहर्निस (दिन रात) श्री सीताराम जी के ॥३०॥

गानं गुणानां कुर्वन्तो ब्रम्हानन्द मवाप्नुयुः ॥
तेतु धन्य तमा लोके तान्नमामि पुनः पुनः ॥३१॥

गुणों का गान किया करते हैं वेही ब्रह्मानन्द को प्राप्त करते हैं; वे ही इस लोक में धन्यतम हैं, उनको मै बार २ प्रणाम करता हूँ ॥३१॥

Scanned by CamScanner

सीतारामोपासकानां ध्यानं सर्वफलप्रदम् ॥
कैचित्तयो र्नित्य लीलां ललितां शुद्धमानसः ॥३२॥

श्री सीताराम उपासक भक्तों का ध्यान सब प्रकार के फलों का देने वाला होता है । कोई २ महात्मा शुद्ध मन से श्री सीताराम जी की नित्य ललित लीलाओं का ॥३२॥

ध्यायन्त्यहर्निशं मग्ना स्तान् नमामि पुनः पुनः ॥
सभार्य्या ऋषयः सर्वे सीताया सह राघवम् ॥३३॥

दिन रात ध्यान करते हुए मग्न रहते हैं उनको मैं बार २ प्रणाम करता हूँ । सब ऋषि लोग अपनी पत्नियों के सहित श्री सीता राघव जी का ॥३३॥

प्रीत्या वेदोक्त विधिना पूजयन्तिजपन्तिच ॥
विरजास्थः क्षीरसायी वैकुण्ठाधिपतिः प्रभुः ॥३४॥

वैदोक्त बिधि से अनुराग पूर्वक पूजन करते रहते हैं; श्री जुगल मन्त्र का जप करते रहते हैं और बिरजा के उस पार रहने वाले क्षीर सागर में शयन करने वाले बैकुन्ठ के अधिपति जितने भी प्रभु हैं वे सब ॥३४

एतैः परा वरै श्चिन्त्यौ सीतारामौ हि मे प्रभू ॥
सीतारामेति चत्वारो वर्णा वर्णोत्तमाः पराः ॥३५॥

पर और अपर सब जिनका ध्यान करते हैं वो सर्वोपास्य देवता श्री सीताराम जी ही मेरे प्रभु हैं। सी ता रा म ये चारों वर्ण (अक्षर) सब वर्णों में परात्पर हैं ॥३५॥

आत्मानः सर्व वर्णानां बेदानां सार सम्मताः ॥
आत्मानोमंत्रवीजानां वेद मूलानि कीर्तिताः ॥३६॥

ये ही सी ता रा म चारों वर्ण सब वर्णों की आत्मा हैं; वेदों के सार हैं; सत्पुरुषों के सम्मत हैं; सब मन्त्र-बीजों के आत्मा है; वेदों के मूल हैं; ऐसा वेदों और विद्वानोंने कीर्तन किया है ॥३६॥

मुमुक्षव श्च तैरेव सिद्धिं यान्ति स्ववांछिताम् ॥
नारायणस्यापिमंत्रे रकारः सिद्धिदो भवेत् ॥३७॥

मुमुक्षु जन इन्हीं सीताराम चार वर्णों से मनवाञ्छित समस्त सिद्धियों को प्राप्त करते हैं जैसे कि नारायण मन्त्र से रकार ही सिद्धि देनें वाला होता है ॥३७॥

अन्यथा तद्विश्लेषे नाय नायेत्यसिद्धिदः ॥
वेदास्तुवन्ति चत्वारो वर्णांस्यादींश्च मांतकाम् ॥३८॥

अन्यथा रकार के बिना वह नारायण मन्त्र नायण नायण इस प्रकार अशुद्ध और सिद्धि देने में असमर्थ होता है । सीताराम चारों वर्णों की चारों वेद स्तुति करते हैं और ककारादि मकारान्त अर्थात क से लेकर म पर्यन्त जितने भी वर्ण हैं ॥३८॥

Scanned by CamScanner

तेभ्योजातास्तु ते सर्वे जानन्ति मुनयस्त्विदम् ॥
सी कारा त्साम वेद श्च ताकारा द्यजु रुच्यते ॥३६॥

ये सब इन चारों वर्णों (अक्षरों) से उत्पन्न होते हैं । इस बात को सब मुनि लोग जानते हैं और सीकार से सामदेव, ताकार से यजुर्वेद उत्पन्न होते हैं ॥३६।

ऋग्राकारा त्समुद्भूतोऽथर्वणस्तु मकारतः ॥
सीतारामेति चतुर्भ्यो वर्णेभ्यो ग्राममूर्च्छनाः ॥४०॥

राकार से ऋग्वेद और मकार से अथर्वण वेद उत्पन्न होते हैं । सी ता रा म इन चार वर्णों से संगीत के ग्राम और मूर्छनादि ॥४०॥

कण्ठोत्थाश्चस्वराः सप्त जाता रागाः सभार्यकाः ॥
श्रीसीतारामया नाम्नः स्वरास्तेभ्यः स्वरास्तथाः ॥४१॥

कन्ठ से उत्पन्न होने वाले सातों स्वर तथा अपनी पत्नियों के सहित सब राग उत्पन्न होते हैं । श्री सीताराम इस नाम से लगे हुए जो स्वर हैं उनसे सब स्वर उत्पन्न होते हैं ॥४१॥

वर्णास्तेभ्य स्तु वर्णाश्च जाताहिमाद्रिकन्यके ॥
शृङ्गारादि रसाश्चाष्ट भोजने षड्रसास्तथा ॥४२॥

श्री सीताराम इस नाम के वर्णों से सब वर्ण उत्पन्न होते हैं । हे हिमाद्रिकन्यके ! शृङ्गारादि आठ रस और भोजनादिक षटरस ॥४२॥

तेभ्यश्च चतुर्वर्णेभ्यो जानकी पादशीलके ॥
प्रवक्ष्यामि पृथक्त्वेन यस्मा द्यस्माद्धि यो भवत् ॥४३॥

इन्हीं चार वर्णों से उत्पन्न होते हैं । हे जानकी पादशीला ! अब मैं तुम से जिस जिससे जो जो उत्पन्न होते हैं उन सबको अलग २ कहता हूँ ।४३॥

जानकीपादशीले त्वं श्रूयतां सावधानतः ॥
सकारस्यापीकाराच्च शृङ्गारो रसराजकः ॥४४॥

हे जानकी पादशीले ! सावधान होकर सुनो—सीकार की ईकार से रसराज शृङ्गाररस उत्पन्न हुआ ॥४४॥

तस्मादेवं सकाराच्च हास्यो जातः सनातनः ॥
तकारा द्रस कारुण्य मकारादद्भुतोद्भवः ॥४५॥

और सकार से सनातन हास्यरस उत्पन्न हुआ । तकार से करुणारस उत्पन्न हुआ; मकार से अद्भुत रस उत्पन्न हुआ ॥४५॥

रेफा द्वै वीर संजात स्तस्याकारा द्भयानकः ॥
वीभत्सोयं मवर्णाच्च रौद्रो मस्या प्यकारतः ॥४६॥

रेफाकार से वीर रस उत्पन्न हुआ और रेफ के आकार से भयानक रस उत्पन्न हुआ 'म' वर्ण से बिभत्स रस और मकार के अकार से रौद्र रस उत्पन्न हुआ ॥४६॥

Scanned by CamScanner

सीतायां रामनाम्नश्च ज्ञेय मेवं यथाक्रमम् ॥
सकारा न्मधुरो जात स्तकाराल्लवणोद्भवः ॥४७॥

इस प्रकार श्री सीता जी और श्री राम जी के नाम से क्रमशः षटरस भी उत्पन्न हुए जैसे—सकार से मधुर रस व तकार से लवणरस उत्पन्न हुए ॥४७॥

तयोः स्वराभ्यां संजात श्चाम्लोहिमाद्रिकन्यके ॥
तथा श्रीरामनाम्नश्चरेफात्तिक्तो रसो द्भवः ॥४८॥
मकारा त्कटु रुत्पन्नः काषायोद्विस्वरोद्भवः ॥
पूर्वं सीतेति व्याख्याय वदेद्रामं ततः परम् ॥४९॥

इन दोनों के स्वरों से आम्ल रस उत्पन्न हुआ। उसी प्रकार हे हिमाद्रिकन्यके! श्री राम जी के नाम में जो रेफ उससे तिक्त रस उत्पन्न होता है। इन दोनों के स्वरों से काषाय रस उत्पन्न होता है। पहले सीता कह करके पीछे राम-नाम उच्चारण करना चाहिए ॥४८॥४९॥

द्वयो रैक्यं वियुज्याथ जपतां नैव सिद्धिदम् ॥
पुनर्भक्ते रसाः पञ्च शृणु तेषां समुद्भवम् ॥५०॥

इन दोनों नामों को अलग करके जपने वाला सम्यक्प्रकार सिद्धि को नहीं प्राप्त होता है। फिर भक्ति के पाँचों रसों की भी इन्हीं चारों वर्णों से उत्पत्ति है सो सुनो ॥५०॥

वात्सल्यो जानकी नेत्रा त्सख्यो राघव नेत्रतः ॥
द्वयोश्चपाद पद्माभ्यां दास्यो जातः शुभानने ॥५१॥
श्रीरामपादपद्मस्य नखेभ्यः शान्त स्वेतकः ॥
शृङ्गारस्तु मयापूर्वं कथितो यद्यथा भवत् ॥५२॥

श्री जानकी जी के नेत्रों से वात्सल्य और श्री राघव जी के नेत्रों से सख्य रस की उत्पत्ति है और इन दोनों के पाद पद्मों से दास्यरस की उत्पत्ति है। हे शुभानने! श्री राम पाद पद्मों के नखों से श्वेत रंग का शान्तरस उत्पन्न होता है और शृङ्गार रस जिस प्रकार से उत्पन्न होता है उसको मैंने पूर्व से ही कह दिया है ॥५१॥५२॥

तेषां षष्ठो मिस्र रसः नील पीताम्बरोद्भवः ॥
श्रीरामसीतयो नाम रूपं लीला च धाम च ॥५३॥
येषां बिभूतिरंशाश्च कलाया बरसमस्तकम् ॥
श्रीरामसीतयोर्नाम सर्वस्वं मे शुभानने ॥५४

इन सब में एक और छटवाँ मिश्र रस है जो इन सरकारों के नील पीत बस्त्रों से उत्पन्न हुआ है। श्री सीताराम जी के नाम रूप लीलाधाम की बिभूतियों की अंश-कला से समस्त रस और विश्व सब की उत्पत्ति है। हे शुभानने! श्री सीताराम जी का नाम ही मेरा सर्वस्व है ॥५३॥५४॥

Scanned by CamScanner

तस्यै वच प्रभावेन शङ्करोहं सनातनः ॥
जानक्या राम चन्द्रस्य वर्णरत्नं चतुर्मुखः ॥५५॥

इन्हीं श्री सीताराम नाम के प्रभाव से मैं सनातन शंकर हो गया। श्री जानकी राम चन्द्र जी के नाम में जो चार वर्णरत्न हैं उन्हीं के जप से ब्रह्मा जी चार मुख वाले होकर जगत को उत्पन्न करने में कुशल हुए हैं ॥५५॥

जपेद्व तत्प्रभावेन जगदुत्पादितुं क्षमः ॥
विष्णुरेव जपे स्प्रीत्या तेनैव पालने क्षम: ॥५६॥

और विष्णु भी उन्हीं चार वर्णरत्नों के प्रेम पूर्वक जप से विश्व के पालन करने में कुशल हुए हैं उसी प्रभाव से मैं भी कल्प के अन्त में विश्व बिनाश के लिए समर्थ हुआ हूँ ॥५६॥

तथा तेन प्रभावेन कल्पान्तेऽहं विनाशकः ॥
तथैव तस्य तद्धामा योध्याख्यंहि सनातनम् ॥५७॥

उसी प्रकार श्री सीताराम जी का धाम अयोध्या जी भी सनातन ब्रह्म हैं जिनके वैभव-अंश से भू लोक स्वर्ग लोक और बैकुण्ठ अखन्ड हो गए। ५७।

यस्यांशेनैव भूस्वर्ग वैकुण्ठास्ते प्यखण्डिताः ॥
निर्विकल्पं निराकारं निराधारं भुविस्थितम् ॥५८॥

वह श्री अयोध्या जी इन्द्रियातीत, निराकार (प्रकृतिक आकार से रहित) व निराधार होकर पृथ्वी में स्थित हैं। जो महान्‌तेज से आवृत हुई, मायिक गुणों से रहित; दिव्य गुणों की खानि है ॥५८॥

तेजोवृत्तं गुणातीत ममायकं गुणै र्युतम् ॥
अयोध्या विमला सात्या प्रमोदारण्य मालिनी ॥५९॥

श्री अयोध्या-विमला, सत्या, प्रमोदारण्य, मालिनी ब्रह्म पदा, लोक भिन्ना, सज्जनों से सेव्या, शुक्लवर्णा, ॥५९॥

ब्रह्मपदा लोक भिन्ना सद्भिः सेव्या च शुक्लभा ॥
सप्तदुर्गासप्त ख्याता ध्वजा शिखर मालिनी ॥६०॥

सात आवरण वाली सातों ऊपर के लोकों में प्रसिद्ध, सुन्दर ध्वजा पताका कलश तोरणादि से शोभिता, सुन्दर चित्रवती, मेघालम्बिनी, अनन्ता, ब्रह्म की सत्ताभूता ॥६०॥

चित्रपदा धनालम्बि न्यनन्ता ब्रह्मसंस्तिता ॥
अष्टापदा केलिपूर्णा महाघोषा सुगन्धिनी ॥६१॥

अष्टापदा, विनोद पूर्णा, महान संगीत-नाद व सुगन्ध से भरी सूर्यवंशी वीर पुरुषों से सुरक्षिता, सूर्य सदृश प्रकाशवती, रथ, हाथी, घोड़े आदि सवारियों से परिपूर्णा ॥६१॥

Scanned by CamScanner

वीरसेव्या भानुमन्ती स्यन्दनेभास्वका कुला ॥
अनाद्यन्ता गुप्तरूपा भावगम्या त्रिमण्डला ॥६२॥

आदि अंत रहिता, गुप्त रूपा, भाव से प्राप्त होने वाली, तीन मण्डल वाली, ब्रह्मा, विष्णु, महेश त्रिदेवों से पूजिता, हवन के धुँआ से भरी, असंख्य वैभववाली ॥६२॥

त्रिदेवार्च्या होम धूप पूरिता संख्य वैभवा ॥
कृत्तेमारण्य संविद्धा सर्वालौकिक वैभवा ॥६३॥

कृत्रिम सजे हुए बगीचाओं से और बनों से परिपूर्णा, सर्व लोकों के वैभव वाली इत्यादि नामों वाली, नित्य मुक्त पार्षदों के अधिकार वाली ॥६३॥

इत्यादि नामकं नित्य मुक्तजीवाधिकारकम् ॥
सखण्डैः सप्तद्वीपैश्च नगै नद्यब्धिभिर्युतम् ॥६४॥

नौसातादि खन्डों के सहित सातों द्वीप, पर्वत, नदी और समुद्रों सहित त्रिपाद विभूति के वैभव को धारण करने वाली, परात्परधाम और लीला विभूति का धाम इन दोनों की एक स्वरूपा ॥६४॥

त्रिपाद्वैभूतिकं ब्रह्मलौकिकाख्यं द्वि भूतिकम् ॥
मिथिलायां द्विधाभूतं यथारामस्तु सीतया ॥६५॥

और दूसरे रूप से मिथिला हुई जैसे श्री राम जी का धाम उसी प्रकार श्री सीता जी का धाम, प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष स्वरूपा, पूर्ण माधुर्य और पूर्ण ऐश्वर्य से मिश्रिता ॥६५॥

लक्ष्या लक्ष्य स्वरूपं च माधूर्य्यैश्वर्य मिश्रितम् ॥
वेदो पनिषत्पुराण संहिता स्मृत्ति तंत्रकैः ॥६६॥

वेद, उपनिषद पुराण, संहिता, स्मृति, तन्त्र, काव्य, शास्त्रों से नित्य जिनकी स्तुति की जाती है; श्री सरजू सरिता जी से चारों तरफ घिरी हुई ॥६६॥

काव्यैः शास्त्रै स्तूयमानं समन्ता त्सरितावृतन् ॥
चिन्तामणि कल्पवृक्ष कामगोभी रसैर्युतम् ॥६७॥

चिन्तामणिमय भूमि वाली, कल्पवृक्षों के बनों से शोभिता, कामधेनु गौवों से और सब रसों से पूर्ण इस प्रकार की श्री अयोध्या और श्री मिथिला जी में श्री सीता राम जी का नित्य चरित्र होता है ॥६७॥

एवम्भूत द्वयोर्धाम्नो श्चरितं रामसीतयोः ॥
तद्ब्रह्म लौकिकाख्यंहि त न्नामार्थं वदाम्यहम् ॥६८॥

'ब्रह्मलौकिका' यह जो नाम है इसके अर्थ को मैं कहता हूँ—जिसको वेद भी नहीं जानते केवल भगवत् कृपा पात्र भावुक जन जानते हैं ॥६८॥

वेदा अपि नजानन्ति जानन्ति भावुकाजनाः ॥
महाशया महाभागा रसिकानन्य वृत्तयः ॥६९॥

क्योंकि भगवद्गीता में लिखा है—त्रैगुण्य विषया वेदाः निस्त्रैगुण्यो भवार्जुन। वेद तीनगुणों तक ही बोलते हैं तुम पर होजाओ। जो रसिक जन महान् आशय वाले, महाभाग शाली, रसिक अनन्य वृत्ति से भजन करने वाले ऐसे भक्तों का हृदय (श्री सीताराम जी के नाम रूप लीला धाम के चरित्रों का घर है) ॥६९॥

तेषां तु हृदयं तस्य निधानं चरितस्यच ॥
व्यावृतं चाव्यावृतं च द्विविधं धनिनां धनम् ॥७०॥
व्यावृतं लोकाविख्यातं भूमिस्थं नैव कोपिच ॥
लोकाविभूय श्रीराम श्चरत्यत्र च व्यावृतम् ॥७१॥

जिस प्रकार धनिकों का धन घर में रक्खा हुआ और बाहर फैलाया हुआ दो प्रकार का होता है उसी प्रकार भक्तों का धन जो श्री रामचरित्र है वह एक तो दिव्य धाम त्रिपाद विभूति में है जिसको इस लोक में कोई नहीं जानता और एक लोक में श्री राम जी के अवतार लेने पर सब भक्तों के सामने किया गया है (जो वेदों और रामायणों में मुमुक्षुओं की सिद्धि के लिए लिखा हुआ प्रसिद्ध है) ॥७०॥७१॥

वेदे रामायणे ख्यातं मुमुक्षूणांच सिद्धये ॥
तद्भिन्नं नित्य सिद्धं चा व्यावृतं ज्ञायतां शिवे ॥७२॥

और दूसरा नित्य पार्षदों की सम्पत्ति त्रिपाद विभूति का चरित्र है जो इस आवतारिक चरित्र से भिन्न है (हे शिवे! श्री राम रसिकाचार्यों के गम्भीर हृदय समुद्र में उस चरित्रा मृतको तुम समझो) ॥७२॥

तद्राम रसिकाचार्य्य हृद्भू गाम्भीर्य्यगर्त्तके ॥
तत्प्रसिद्धाय लोकेऽस्मिन्नित्याख्चा विर्भवन्तिहि ॥७३॥

उसी दिव्य धाम के चरित्र को प्रसिद्ध करने के लिए लोक में नित्य अवतार हुआ करते हैं। (कभी परात्पर पुरुष स्वयं आते हैं और कभी अपने मुमुक्षुओं के उपकार के लिये अपने अंशों से अवतार लेते हैं) ॥७३॥

स्वयंवा स्वस्य चांशेन ह्युपकर्त्तुं मुमुक्षुकान् ॥
तत्प्रभावं नजानन्ति बद्धा बुद्धिय विरोधकाः ॥७४॥

बुद्धि से विरोध किए हुए बद्ध-जीव इन अवतारों के चरित्र-प्रभाव को नहीं जानते हैं। (जो भगवान् के आश्रित हुए कृपा पात्र मुमुक्षु जन हैं वे जानते हैं) ॥७४॥

मुमुक्षवो विजानन्ति कृपायुक्ता स्तदाश्रिताः ॥
एवं चाहं सखीवस्या जानक्यानिमिवन्शजा ॥७५॥

हे पार्वती मैं भी इसी प्रकार नित्यधाम में निमिवंशी कन्या श्री जानकी जी की सखी होकर नित्य पार्षदों के मण्डल में अग्रगण्या श्री चारुशीला नाम से हूं और इस लोक में भी सम्पूर्ण लोकों का गुरू होकर श्री सीताराम जी की उपासना करता हूँ ॥७५॥

नित्यानां मण्डले गन्या अत्राचार्य्यो प्युपासकः ॥
मया सह त्वं देवेशि कल्पान्ते मुक्तमण्डले ॥७६॥

इसी प्रकार हे देवेशी ! मेरे साथ तुमभी कल्प के अन्त में प्रेमभक्ति पूर्वक (श्री सीता जी की किंकरी होकर के मुक्त मण्डल में निवास को प्राप्त करोगी) ॥७६॥

सीताया किंकरी भूत्वा प्राप्स्यसे प्रेमभक्तितः ॥
यत्प्रभावस्य चाज्ञानं तदेवाभाव कारणम् ॥७७॥

श्री जुगल सरकार के चरित्र प्रभाव को न जानना ही जीवके अभाव का कारण है और प्रभाव को जान लेना ही सद्भावना का कारण है ॥७७॥

यत्प्रभावस्य विज्ञानं तद्धै भावाति कारणम् ॥
तस्माच्छैलात्मजे किञ्चित्त्वां विज्ञापयितुं यथा ॥७८॥

इसलिए हे शैलात्मजे श्री राम जी और श्री जानकी जी के प्रभाव को तुम्हें जनाने के लिए मैंने कुछ थोड़ा कहा ॥७८॥

जानक्या रामचन्द्रस्य प्रभावः कथितोमया ॥
अद्य त्वयाहि यत्पृष्टं तदेव कथयाम्यहम् ।७९॥

आज तुमने जो कुछ पूछा है वही मैं कहता हूँ। यह बड़ी रसीली दुर्लभ कथा है सावधान होकर सुनो ॥७९॥

श्रूयतां सावधानेन दुर्ल्लभा रसवत्कथा ॥
इति श्री शङ्करकृते श्री अमररामायणे श्री सीतारामरत्नमंजूषायां
श्री सीताराम प्रभाव स्वल्पवर्णनं नाम द्वितीयस्सर्गः ॥२॥

इस प्रकार श्री शंकर जी से रचित श्री राम रत्न मंजूसा नामक अमर रामायण में श्री सीताराम जी का प्रभाव थोड़ा सा वर्णन रूप दूसरा सर्ग पूरा (समाप्त) हुआ ॥२॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां द्वितीयस्सर्गः ॥

शिव उवाच

कैवल्यो नित्यमुक्तश्च मुमुक्षु बद्ध एवच ॥
इत्थं पञ्चविधा जीवाः प्रोक्तावेद विदाम्वरैः ॥१॥

श्री शिव जी बोले—वेद वेत्ता विद्वानों ने कैवल्य, नित्य, मुक्त, मुमुक्षु और बद्ध इन पाँच प्रकार के जीवों का वर्णन किया है ॥१॥

वदामि लक्षणान्येषां प्रोक्तानि मुनिभिर्यथा ॥
लोकाना मुपकाराय त्यागायग्रहणायच ॥२॥

इन पाँचों प्रकार के जीवों में जिनका जैसा लक्षण मुनियोंने कहा है वैसा लोक उपकारार्थ ग्रहण त्याग के लिए मैं वर्णन करता हूँ ॥२॥

नाहं किमप्यकर्त्तृत्वा त्तदन्यन्नैव किञ्चन ॥
एवं बुध्वा तु कैवल्याः श्रीरामेद्वैत भावकाः ॥३॥

मैं कर्त्तृत्व (कर्त्तापन) से अतिरिक्त कुछ नहीं हूँ और कर्त्ता से अतिरिक्त भी और कुछ नहीं है इस प्रकार श्री राम जी में अद्वैत भाव रखने वालों को कैवल्य-जीव जानना चाहिए ॥३॥

Scanned by CamScanner

केचि न्मन्वन्त्युपादानं जगतां ब्रह्मकारणं ।
कैवल्या स्तेपिसंज्ञेया ब्रह्मण्युपाधिवादकाः ॥४॥

कोई लोग ब्रह्म को जगत का उपादान कारण मानते हैं उनको भी कैवल्य-जीव ही जानना चाहिए। वे लोग, ब्रह्म में उपाधि आई है, ऐसा कहते हैं ॥४।

कालत्रयेपि मायाया नसंसर्गो कदाचन ॥
सुग्रीव हनुमन्मुख्यो ष्यनन्ता नित्य सूरयः ॥५।

और जिनमें माया का संसर्ग तीन काल में कभी भी नहीं आया है ऐसे हनुमान सुग्रीवादिक अनन्त नित्य पार्षद हैं उनको नित्य-जीव कहते हैं ॥५॥

शरीर त्रयतो मुक्तः श्रीमद्गुरु प्रसाद भाक् ॥
नित्यानां मण्डलेवापि समुक्तो देहवान्नपि ॥६॥

जो स्थूल, सूक्ष्म, कारण तीनों शरीरों से मुक्त हो गए हैं, श्री गुरु महाराज के प्रसाद का फल प्राप्त कर गए हैं अथवा नित्य पार्षदों के मण्डल में पहुंच चुके हैं वे शरीर के रहते हुए भी मुक्त-जीव कहे जाते हैं ॥६॥

रहस्यं ब्रह्म लोकानां ज्ञातं गुरू प्रसादतः ॥
स्वस्वरूपे तदाकारः प्राप्तुं वा विरहातुरः ।७॥

श्री गुरु महाराज की कृपा से भगवान के दिव्य धाम का रहस्य जिनको ज्ञात हो गया है इस प्रकार अपने स्व-स्वरूप में तदाकार हो गए हैं अथवा भगवान के मिलने के लिए विरह से बेचैन हो गए हैं ॥७॥

इह लोकेपि सोमुक्तो जीवं लोकानुकम्पया ॥
स्वस्या चरणानु बोधैर्मुमुक्षू नाप्तु मावसत् ।८॥

जो लोग इस लोक में भी मुक्त जीवन हैं केवल संसार के जीवों में दया करके अपने आचरणों से मुमुक्षु जीवों को ज्ञान देकर भगवान को प्राप्त कराने के लिए रहते हैं। ८।

सीतारामानुरक्तानांपदं प्राप्तुश्चश्रद्धयत् ॥
ज्ञात्वा चा चरति प्रीत्या तद्धर्मं समुमुक्षुकः ।९॥

और जो श्री सीताराम जी के अनुरागियों के दिव्य पद को प्राप्त करने के लिए श्रद्धा रखते हैं और अनुराग पूर्वक उन्हीं के धर्म को जानकर आचरण करते हैं वो मुमुक्षु-जीव कहे जाते हैं ।९॥

यस्य किञ्चि द्विवेक श्च नात्मनः परमात्मनः ॥
सुखंजीवितु मात्र श्च स बद्धः कथ्यते बुधैः ॥१०॥

जिसको आत्मा व परमात्मा का कुछ भी विवेक नहीं है केवल सुख से जीवित रहना मात्र चाहते हैं उनको विद्वान लोग बद्ध-जीव कहते हैं ॥१०॥

श्रीरामभक्तेष्वरतिः कुटुम्बाशक्तमानसः ॥
वित्त स्नेही कर्म परः सबद्धः कथ्यते बुधैः ॥११॥

और जो श्री रामभक्तों से द्वेष रखकर संसार कुटुम्ब में आसक्त मन वाले केवल धन से प्रेम करते हैं। विविध प्रकार के धन-उपार्जन-कर्म में लगे रहते हैं उनको भी विद्वान लोग बद्ध-जीव कहते हैं ॥११॥

बद्धानाञ्च मुमुक्षूणां समूहो यत्र वर्तते ॥
तन्मानुष्यं लोक इति कथ्यते वेद विज्जनैः ॥१२॥

बद्ध और मुमुक्षु जीवों का समूह जहाँ निवास करता उसको वेद वेत्ता विद्वान मनुष्य लोक कहते हैं ॥१२॥

नित्याना मपिमुक्तानां मण्डलं यत्र वर्तते ॥
तदेव ब्रह्मलोकश्च ते च ब्रह्म स्वरूपकाः ॥१३॥

नित्य और मुक्त जीवों का मण्डल जहाँ निवास करता है उसको दिव्य धाम कहा जाता है और उन्हीं जीवों को ब्रह्म-स्वरूप भी कहा जाता है ॥१३॥

तेषां चरति यद्रामो रसिको जानकी वरः ॥
तदेव चरितं ब्रह्म लौकिकं कथ्यते शिवे ॥१४॥

उन्हीं में श्री रसिकवर श्री जानकी वर श्री राम जी रमण करते हैं। इसी चरित्र को दिव्य धाम का चरित्र कहा जाता है ॥१४॥

रहस्यं स्थान समयो यत्साहित्यं समाजकम् ॥
भजने भावनायां तु ह्येतन्मूल प्रयोजनम् ॥१५॥

भावुकों की भावना में रहस्य, स्थान, समय, साहित्य व समाज इन सबका भजन में मूल प्रयोजन रहता है ॥१५॥

यदुक्तं सूक्ष्म भावेन वर्णयामिसविस्तरम् ॥
वेदानामप्यगम्यं हि तत्कृपा मेहृदिस्थितम् ॥१६॥

भगवान की कृपा से मेरे हृदय में स्थित हुआ वेदों से भी अगम्य जो रहस्य सूक्ष्मभाव कहा जाता है उसको मैं विस्तार सहित वर्णन करता हूँ ॥१६॥

प्रथमं ज्योतिषां वृत्ति र्यान्ध्यायन्ति सुयोगिनः ॥
तद्बहिः प्रकृति र्ज्ञेया तामावृत मप्राकृतम् ॥१७॥

सबसे पहले योगसाधन में ऊँचे पहुँचे हुए योगी लोग अपनी चित्तवृत्ति से जिस ज्योति का ध्यान करते हैं उस ज्योति के अन्दर ब्रह्म का अप्राकृतिक धाम है और उस ज्योति से बाहर अविद्यामाया प्रकृति है ॥१७॥

ततश्च विरजा नाम्नी नदी चावृत्य शोभते ॥
यस्या स्नानेन जीवानां लिङ्गं देहं विनश्यति ॥१८॥

ब्रह्म ज्योति के भीतर, भगवत धाम से बाहर बीच में एक विरजा नाम की नदी है जो भगवत् धाम को घेरकर शोभित है जिनके स्नान से जीवों का प्राकृतिक स्थूल, सूक्ष्म, कारण ये तीनों लिङ्ग शरीर नाश हो जाते हैं ॥१८॥

Scanned by CamScanner

सम्यग्भगवतो नित्य धाम नि तत्र चोत्तरे ॥
संक्षेपेण प्रवक्ष्यामि यथा यो यत्र चावसत् ॥१६॥

उस बिरजा नदी के उस पार भगवान के जो नित्य धाम हैं उनका संक्षेप से जो जहाँ पर है उन सब का मैं वर्णन करूँगा ॥१६॥

गिरि नारायणाख्योवै पुरी नारायणाह्वयका ॥
वनं नारायणाख्यं च जीवा मुक्ताश्च नित्यदा ॥२०॥

सबसे पहले बिरजा के उस पार एक नारायण नाम के पर्वत से घिरी हुई नारायण नाम की नगरी है जो नारायण नामक बन से घिरी हुई है जिस नगरी में नित्य और मुक्त पार्षद ॥२०॥

असंख्या दिव्यरूपाश्च दिव्याम्बर विभूपिताः ॥
स्वशक्ति सहिता भक्ताश्चतुर्भुज स्वरूपकाः ॥२१॥

जो असंख्य हैं और दिव्य रूप हैं वे दिव्य वस्त्र भूषणों से शोभित हैं वे सब अपनी शक्तियों के सहित चतुर्भुज स्वरूप हैं और श्री नारायण भगवान के भक्त हैं ॥२१॥

तैरेव निवसत्यत्र श्रीमन्नारायणः प्रभुः ॥
पार्षदैर्बहुभिसेव्यो दिव्याभूषण भूषितः ॥२२॥

इन बहुत से पार्षदों से सुसेवित श्री मन्नारायण दिव्य वस्त्राभूषणों से शोभित इस नगरी में निवास करते हैं ॥२२॥

शङ्ख चक्रायुधो दिव्य रत्नमन्दिर मण्डपे ॥
सतयोजन विस्तीर्णे देव्यासह विराजते ॥२३॥

नगर के मध्य में सौ योजन विस्तार वाले मण्डप के भीतर दिव्य रत्न मन्दिर में संख चक्रादि आयुधों को धारण किए अपनी पत्नी श्री महालक्ष्मी जी के साथ विराजे हुए हैं ॥२३॥

ततोदूरं गिरिस्त्वेको ज्योतिर्धामा विराजते ॥
भास्वरा च पुरी तत्र वनश्चैवात्र भास्वरम् ॥२४॥

वहाँ से कुछ दूर और आगे एक ज्योतिर्धामा नामक पर्वत से घिरी हुई भास्वरा नाम की नगरी के बाहर में चारों तरफ भास्वर नाम का बन है ॥२४॥

सहस्र शिरसो देवो तत्र रश्मिभिरावृते ॥
मण्डपे राजते कान्ता लावण्या वामभागके ॥२५॥

उस पुरी में सहस्र सिर के विष्णु विराजते हैं जो कि महाप्रकाशमान मण्डप के अन्दर लावन्यां नाम की अपनी पत्नी को बाम भाग मे लेकर विराजे हुए हैं ॥२५॥

अनन्त शक्तिभिः सेव्या दिव्याभूषण भूपिता ॥
सिंहासने महापद्म प्रभाको ट्यर्क बृङ्हिते ॥२६॥

Scanned by CamScanner

जो दिव्य वस्त्राभूषणों से भूषित, अनन्त शक्तियों से सेवित हैं। इस प्रकार के सहस्रशीर्षा विष्णु करोड़ों सूर्यों के समान प्रकाशमान सिंहासन के मध्य कमल के ऊपर विराजे हैं ॥२६॥

अनन्ता नुचरा दिव्या स्तुवन्ति दिव्य स्तोत्रकैः ॥
शङ्ख नाद मनन्ताश्च कुर्वन्ति तस्य पार्षदाः ॥२७॥

दिव्य स्तोत्रों से अनन्त अनुचर आपकी स्तुति कर रहे हैं। अनन्त पार्षद संख आदि बाजाओं को बजा रहे हैं ॥२७॥

नृत्यं कुर्वन्त्यनन्ताश्चो वादयन्ति ततं घनम् ॥
चानद्धं सुपिरश्चैव पुष्पाणि वर्षयन्ति च ॥२८॥

अनन्त पार्षद नृत्य कर रहे हैं इस प्रकार वीणा, मृदंग, झाँझ और आगे वंशी आदिक अनन्त बाजे बज रहे हैं और पुष्पों की बर्षा हो रहा है ॥२८॥

तस्माद्दूरं प्रभा युक्तो प्रभानामा शिलोच्चयः ॥
प्रभावती पुरी तत्र प्रभविष्णु र्महाद्युतिः ॥२९॥

इस भास्वरा नामक नगर से कुछ और आगे महान् प्रकाशमान प्रभा नामक पर्वत से घिरी हुई प्रभावती नाम की नगरी है। वहाँ पर महान् प्रकाशमान् प्रभविष्णु नाम के भगवान विराजते हैं ॥२९॥

सतयोजन विस्तीर्णे मुक्ता रत्न विभूषिते ॥
रत्नतोरण सन्दर्भे मण्डपे राजते स्वयम् ॥३०॥

उस प्रभावती नाम की नगरी में सौ योजन का विस्तार वाला मुक्ता, रत्नों से भूषित; रत्नों के तोरण ध्वजादि से सजा हुआ एक मण्डप है जिसमें वे प्रभविष्णु स्वयं प्रकाशमान हो रहे हैं ॥३०॥

सुप्रभा वाम भागे च शक्तिस्तस्य विराजते ॥
सख्य स्तस्या असंख्या श्च छत्र चामर हस्तकाः ॥३१॥

वाम भाग में सुप्रभा नाम की शक्ति विराजमान है। अनन्त सखियों से छत्र चवरादिक द्वारा सेवित हैं ॥६१॥

गानं कुर्वन्त्यनन्ताश्च नृत्यन्त्यभिनया न्विताः ॥
काश्चि द्वीणां वादयन्ति काश्चि न्मृदङ्ग वाद्यकाः ॥३२॥

अनन्त सखियाँ गान करतीं हैं। अनन्त सखियाँ हावभाव अभिनय पूर्वक नृत्य करती हैं। अनन्त सखियाँ मृदंग, वीणादि बाजा बजाती हैं ॥३२॥

शङ्ख चक्र गदा पद्म धरा दाशा ह्यसंख्यकाः ॥
छत्र चामरहस्ताश्च ह्यनन्ता स्तं स्तुवन्ति च ॥३३॥

अनन्त दास संख, चक्र, गदा, पद्म को धारण किए हुए छत्र चवरादि से सेवा कर रहे हैं; अनन्त सेवक अस्तुति कर रहे हैं ॥३३॥

Scanned by CamScanner

अथादूरं गिरिस्त्वेको नाम्ना सोयं महोदयः ॥
महोदया पुरीतत्र स्वर्ण मन्दिर मण्डिता ॥३४॥

इस नगर से कुछ और आगे एक महोदय नामक पर्वत से घिरी हुई, स्वर्ण के महलों से भूषित, महोदया नाम की नगरी है। ३४॥

महोदयं वनं चात्र तेनैव परिवेष्टिता ॥
महाविष्णुः स्वयं चात्र राजते सद्गुणै र्वृतः ॥३५॥

जो महोदय नाम के वन से चारो तरफ घिरी हुई है। इस नगर के अधिष्ठात्री देवता भी महाविष्णु अपने सद्गुणों से स्वयं आवृत हैं ॥३५।

दिव्याम्बर धरो दिव्यैर्भूषणै र्भूषितः प्रभुः ॥
वाममार्गे महालक्ष्मी र्देवी तस्य महाद्युतिः ॥३६॥

जो प्रभु दिव्य वस्त्राभूषणों से भूषित हैं और महा द्युतिमान हे (प्रकाशमान) महालक्ष्मी वाम भाग में विराजी हैं ॥३६॥

अनन्त शक्तिभिस्सेव्या नानाभूषण भूषिता ॥
द्वौचाष्ट भुज भ्राजन्तौ रत्न सिंहासनेस्थितौ ॥३७॥

जो अनन्त शक्तियों से सेविता, नाना भूषणों से भूषिता हैं। ये दोनों महाविष्णु और महालक्ष्मी आठ २ भुजा वाले हैं और रत्न के सिंहासन पर विराजे हैं ॥३७॥

तस्माद्दूरं विश्वकान्तो नाम्ना रुक्मशिलोच्चयः ॥
पुरं चापि विश्व कान्तं नाम्नाचैववनं तथा ॥३८॥

सर्वत्र काञ्चनीभूमि खचिता राजवेश्मका ॥
सहस्रयोजन प्रान्ता कोटि सूर्य प्रभाधरा ॥३९॥

इस नगरी से आगे और कुछ दूर में विश्वकान्त नामक पर्वत से घिरी हुई विश्वकान्ता नाम की नगरी सर्वत्र स्वर्णमयी भूमि से सुशोभित है जिसमें विविध प्रकार के राजमहल हैं और एक हजार योजन को जिसका घेरा है, ऐसी वह नगरी करोड़ों सूर्यों के समान प्रकाशमान है ॥३८।३९॥

तत्र माणिक्यमुक्ताभि र्रचितोदिव्य मण्डपः ॥
तोरणैः सत्पताकाभिस्तम्भ श्रेणिभि र्रचितः ॥४०॥

उस नगर में माणिक्य मुक्तादि से रचित दिव्य मण्डप है जो तोरण पताकादि खम्भ पंक्तियों से सुशोभित हैं ॥४०॥

तत्र सिंहासनं मुक्ता नीलरत्न सुनिर्मितम् ॥
योजनैक विशालंच तत्र पद्मासनंपरम् ॥४१॥

इस प्रकार के मण्डप में मुक्ता और नील रत्नों से निर्माण किया हुआ चार कोष का चौड़ा सिंहासन है, उसके मध्य कमल के आसन पर ॥४१॥

Scanned by CamScanner

चतुरात्मा वासुदेव स्तेजो राशिर्विराजते ॥
चतुर्भुज श्चिदानन्दो शक्तिश्चापि चतु र्वपुः ॥४२॥

चतुर्व्यूहात्मक वासुदेव दिव्य तेज राशि से घिरे हुए चार भुजा वाले सच्चिदानन्द हैं; इसी प्रकार इनकी चार शरीर वाली चतुर्भुजा शक्ति भी है ॥४२॥

गन्धर्वे गायमानश्च दाशीदाश परिवृत्तः ॥
किरीठ कुण्डलोभाति केयूर कङ्कणान्वितः ।४३॥

गंधर्व जिनके गीत गा रहे हैं, दासी दास सेवा कर रहे हैं; क्रीट, कुण्डल, बिजायठ, कंकणादि भूषणों से भूषित हैं ॥४३॥

ततः परं पर्वतको नाम्ना गोमानकोचकः ॥
गोकुलं मथुरा रम्यश्च पुरं वृन्दावनम्वरम् ॥४४॥

इस नगर से आगे एक गोमानक नामक पर्वत से घिरी हुई गोकुल, मथुरा और वृन्दावन नामक श्रेष्ठ नगरी है ॥४४॥

गोप विष्णुर्विभात्यत्र कामुकी कामिनी वृतः ॥
गोपिकानां सहस्रेषु रमते स्वेच्छया प्रभुः ॥४५॥

इन तीनों नगरियों में हजारों कामिनी गोपिकाओं से घिरे हुए महा कामुक गोपविष्णु प्रभु स्वेच्छा पूर्वक रमण करते हुए सुशोभित हैं ॥४५॥

परात्परानन्द रूपः श्रृङ्गार रस दैवतः ॥
सांगीत कुशलो वेणु प्रवीणश्चाद्भुत स्वरः ॥४६॥

जो परात्पर आनन्द स्वरूप श्रृङ्गार रस के देवता हैं। संगीत में बड़े कुशल, अद्भुत स्वर से वेणु (बंशी) बजाने वाले हैं ॥४६॥

प्रमदा प्रेम बद्धश्च रति कोक विशारदः ॥
रासे नट वरोनृत्य न्नारीणांचित्त कर्षकः ॥४७॥

प्रमदाओं के प्रेम से बँधे हुए, कोकशास्त्र में प्रवीण नटवर रासमें नृत्य करते हुए नारियों के चित्त को आकर्षित कर रहे हैं। ४७॥

केकि पक्षा पीड शोभी गुंजा भूषण भूषितः ॥
कुञ्जान्तर विहारीच ललना लालितः सखा ।४८॥

मोर-पक्ष धारण किए हुए, गुंजा के भूषणों से भूषित, कुञ्जों के भीतर लालित हुए, ललनाओं के सखा विहार करते हुए शोभित हैं ॥४८॥

आह्लादिनी शक्ति राधा भुजारक्त गलों ल्लसः ॥
यमुनाग्र तमालाना मन्तरे रमते मुदा ।४९॥

जो अपनी आह्लादिनी शक्ति राधा के गल में भुजा डाल कर यमुना के किनारे तमाल-वृक्षों के वन के अन्दर आनन्द पूर्वक रमण करते हुए आसक्त है ॥४९॥

Scanned by CamScanner

पंसायो गोप बालास्ते विट चेट विदूषकाः ॥
केचि त्पीठ मर्दका श्च तैः साकं वन माविशत् ॥२०॥

और कभी विट, चेतक, विदूषक, पीठमर्दक ये चार भेद के बहुत से सखा गोप बालकों के साथ यमुना तट के बनों में प्रवेश कर विलास करते हैं ॥२०॥

ततः परं पुरी चैका रजता राजते शुभा ॥
रजतं च वनं तत्र बलो विष्णु र्हलायुधः ॥२१॥

इन पुरियों से कुछ और आगे एक रजता नाम की नगरी रजत नामक बन से घिरी हुई है। इस नगरी में बलविष्णु नामक भगवान रहते हैं जिनका हल ही आयुध है ॥२१॥

रेवती राजते तस्य शक्तिः सुन्दर विग्रहा ॥
नाना मणिगणा कीर्णै भूषणैर्भूषिता शुभा ॥२२॥

रेवती नाम की शक्ति के साथ सुन्दर विग्रह से विराजते हैं यह शक्ति भी विविध प्रकार के मणि भूषणों से भूषिता अति सुन्दर विग्रहवाली है ॥२२॥

गन्धर्वैं गायमानौ सौ दासी दास परि वृतः ॥
मधुपश्च मधुभोजी अरुणाद्यैक कुण्डलः ॥२३॥

इस प्रकार वह बलविष्णु भगवान के आगे गंधर्व लोग गा रहे हैं; दासी दास सेवा कर रहे हैं; मधुप और मधु भोजी; अरुनाच व एक कुण्डल ऐसे बहुत से सखा और दासों से सेवित हैं ॥२३॥

ततो दूरं द्वार वती पुरीरत्न मयी वरा ॥
पञ्च दुर्गं मदुर्गै श्चावृतासद्म समाकुला ॥२४॥

इस नगरी से कुछ दूर और आगे रत्नमयी श्रेष्ठ एक द्वारावती नाम की नगरी है यह पाँच परकोटों और कुछ खाली भूमि से भी घिरी हुई सुन्दर महलों से परिपूर्ण है ॥२४॥

कोटि सूर्य समा कान्तं विस्तरं राज मन्दिरम् ॥
गवाक्ष तोरणै र्जालैः पताकाध्वज बृंहित तम् ॥२५॥

उस नगर में सूर्य के समान प्रकाशमान भरोखा, तोरण, पताका और ध्वजादि सुन्दर सजावटों से सजा हुआ, बहुत विस्तार वाला एक राज मन्दिर है ॥२५॥

योजनैकं शभागारं रत्नस्तम्भ समाकुलम् ॥
खण्डान्तरं विभक्तं च वितानैश्च विराजितम् ॥२६॥

उस राजमन्दिर में चार कोस का चौड़ा एक सभा मण्डप है जो रत्नों की खम्भावली से और विविध खण्ड खण्डान्तर अलग २ वितान, चन्दोवा, परदाओं से सुशोभित है ॥२६॥

तत्र शङ्ख गदा पद्म चक्रधारी चतुर्भुजः ॥
वासुदेवो वीर विष्णुः राजते राजके गणे ॥२७॥

उस मण्डप में संख, चक्र, पद्म, गदाधारी वासुदेव नामक वीर विष्णु राजकीय गुणों से शोभित विराजे हैं ॥२७॥

Scanned by CamScanner

रुक्मिणी सत्यभामाद्या देव्यो नन्ता वरोधके ॥
भ्राजन्ते बहुभिर्भोगै भूषणैं रत्न मुक्तकैः ॥५८॥

उनके अगल बगल में रुक्मिणी सत्यभामादिक अनन्त स्त्रियाएँ रहती हैं जो अलग २ महलों में निवास करती हैं तथा रत्न मुक्तों के भूषण व वस्त्रों से तथा बहुत से भोगों से सुशोभित हैं ॥५८॥

सदेभै दिग्गजा कारैः स्यन्दनाश्वैः समाकुलम् ॥
राज्ञा राजिभिरावृत्तं राज वर्त्म विराजते ॥५९॥

इस प्रकार की उस द्वारावती नगरी में दिग्गजों के समान सुन्दर बड़े २ हाथी रथ व घोड़े भरे हैं। उस नगर के राजमार्गों में राजाओं की भीड़ लगी है ॥५९॥

नृत्यन्त्यप्सरसोऽनन्ता गायन्ति सुरगायकाः ॥
स्तुवन्ति मुनयो देवा नारदो वीण वादकः ॥६०॥

उन वासु देव भगवान के आगे अनन्त अप्सराएँ नृत्य कर रही हैं; गन्धर्व गा रहे हैं; मुनि, देवता, वीणा बजाने वाले नारदादिक स्तुति कर रहे हैं ॥६०॥

ततः परं भौरकाद्रि स्तत्रवै भौरकापुरी ॥
रत्नमाणिक्य सन्दर्भा भूमिः सर्वत्र शोभना ॥६१॥

इस नगरी के कुछ दूर और आगे भौरक नामक पर्वत से घिरी हुई भौरका नाम की नगरी है जो रत्न माणिक्य मयी सुन्दर भूमि से चारों तरफ अत्यन्त शोभित है ॥६१॥

उच्चकानि विशालानि सद्मानि तैः समाकुला ॥
दुर्गाणि विंशतिस्तस्या भ्राजन्ते सूच्चकानि च ॥६२॥

इस नगर में ऊँचे २ विशाल महल भरे हैं। इस नगर के बीस परकोटा (दुर्ग) हैं जो बड़े २ ऊँचे अत्यन्त प्रकाशमान हैं ॥६२॥

अष्ट योजन विस्तीर्णा नृप वेस्माप्तभूमिका ॥
मण्डप स्तत्र सद्दीप्तः द्वय योजन विस्तरः ॥६३॥

उस नगर में आठ योजन का विस्तार वाला एक राज महल है जिसमें पर्याप्त भूमि के अन्दर दो योजन-विस्तार वाला सुन्दर प्रकाशमान एक मण्डप है ॥६३॥

स्तम्भानां राजयस्तत्र मुक्तास्तोरण संस्कृताः
तिरस्कुर्वन्ति प्रभया स्वस्या सूर्य्य प्रभाशतम् ॥६४॥

उस मण्डप में चारों तरफ खम्भावली है और मुक्ताओं के तोरण लगे हुए हैं जो सैकड़ों सूर्यों के प्रकाश को अपने प्रकाश से तिरस्कृत किए हुए हैं ॥६४॥

तत्र सिंहाशनं तद्व द्रचितं रत्न सञ्चितैः ॥
सिंहासनेतु पद्मैकं सहस्रदलरत्नकम् ॥६५॥

उस मण्डप में विविध प्रकार के रत्नों से रचना किया हुआ एक सिंहासन है। उस सिंहासन के अन्दर रत्नों का बना हुआ एक हजार दलवाला कमल है ॥६५॥

Scanned by CamScanner

कोमलांशुक विस्तीर्णो राजते नृहरि प्रभुः ॥
स्तुवन्ति बहुशो देवा नरा गन्धर्व राक्षसाः ॥६६॥

उस कमल में कोमल बिछावन के ऊपर नरसिंह नामक प्रभु विराजे हैं जिनकी बहुत से देवता, मुनि, गन्धर्व राक्षस स्तुति कर रहे हैं ॥६६॥

मूर्तिमन्ता स्तु वेदा स्तं स्तुवन्ति भाव पूर्वकाः ॥
नारसिंही शक्ति स्तस्य वाम भागे विराजते ॥६७॥

और चारों वेद मूर्तिमान होकर भाव पूर्वक स्तुति कर रहे हैं। नारसिंही नाम की शक्ति उनके वामें भाग में शोभित है ॥६७॥

दासी दास गणानन्ता नाना साहित्य धारिणः ॥
सेवन्ते भय संयुक्तामरु त्सूर्य्याग्नि सिद्धयः ॥६८॥

अनन्त दासी दास गण नाना प्रकार के साहित्यों को प्रकट करके सेवा कर रहे हैं तथा वायु सूर्य अग्नि, सिद्ध लोग भी भय से कम्पित होकर सेवा कर रहे हैं ॥६८॥

ततो दूरं गिरिस्त्वेको नाम्ना त्रैविक्रमो वरः ॥
नील रत्न मयो दिव्य फल पुष्प जलै र्वृतः ॥६९॥

इस नगरी से कुछ दूर और आगे एक त्रैविक्रम नामक श्रेष्ठ पर्वत है जो नील रत्न मय दिव्य फले फूले वृक्षों से शोभित है ॥६९॥

मृग पक्षि गणा विष्ट स्तत्र त्रैविक्रमा पुरी ॥
शत योजन विस्तीर्णा मणि सद्म समाकुला ॥७०॥

जिसमें दिव्य मृगपक्षी गण कल्लोल मचाए हुये हैं। उस पर्वत के शिखर पर सौ योजन विस्तार वाली, मणिमय महलों से भरी हुई त्रैविक्रमा नाम की नगरी है ॥७०॥

राजवेश्म वतीभूमिः सर्व रत्न समाश्रिता ॥
योजन द्वय विस्तीर्णं राजमन्दिर मद्भुतम् ॥७१॥

बहुत से राजमहलों से शोभित उस नगरी में सब रत्नों से रचना की हुई भूमि पर दो योजन विस्तार वाला एक अद्भुत राज मन्दिर है ॥७१॥

रत्नस्तम्भावलिदा वृत स्त्वर्द्ध योजन मण्डपः ॥
मुक्ता तोरण सं विद्धः पताकाध्वज शोभितः ॥७२॥

जिसमें रत्नों की खम्भावलियों से सुशोभित एक मण्डप है जो दो कोस का विस्तार और मुक्ता तोरण पताका ध्वजादि से सुशोभित है ॥७२॥

तत्रसिंहासनेरत्न खचिते कोमलांशुके ॥
विराजते शक्ति युक्त स्त्रिविक्रमः प्रतापवान् ॥७३॥

उस मण्डप में रत्नों से खचित सिंहासन के अन्दर विराजते हुये, शक्ति से संयुक्त, महान् प्रतापवान त्रिविक्रम भगवान हैं ॥७३॥

Scanned by CamScanner

द्विभुजो रत्नमाली सत कुण्डल द्वय शोभितः ॥
धृत्वा चामर छत्रादि सेव्य मानो सुसेवकैः ॥७४॥

जो दो भुजा वाले और दोनों कानों में रत्नों के सुन्दर कुण्डल तथा रत्न मालाओं से सुशोभित है । सुन्दर सेवको के द्वारा छत्रादि से सेव्यमान हैं ॥७४॥

शक्ति स्तस्यापि सद्रूपा वाम भागे समास्थिता ॥
सखीभिः सेव्य मानासा स्वपतेः सेवनेरताः ॥७५॥

उन त्रिविक्रम भगवान के वामभाग में उनकी सद्रूपा नाम की शक्ति बिराजी हैं जो अपनी सखियों से सेवित अपने पति की सेवा में रत हैं ॥७५॥

देवै र्वेदैर्मु निभिश्च स्तूयमानः सनातनः ॥
स्वधाम्नि निवसत्येवं त्रिविक्रमो महाप्रभुः ॥७६॥

वे सनातन महाप्रभु त्रिविक्रम भगवान देवता मुनि और वेदों से नित्य स्तुत्य होकर अपने इस धाम में निवास करते हैं ॥७६॥

ततो दूरं पर्वतै को महोच्चो मादृगुरो वरः ॥
पुरश्च मादृगुरं तत्र स्वायतायुतयोजनम् ॥७७॥

इस पुरी से कुछ दूर और आगे एक बहुत ऊँचा मादृगुर नाम का पर्वत है वहाँ पर दस हजार योजन बिस्तार वाली मादृगुर नाम की नगरी में ॥७७॥

नील रत्न कृतै दुर्गै दुर्गमै स्त्रिभिरावृतम् ॥
नीलरत्न कृतागारै श्चतुर्दिक्षु समाकुलम् ॥७८॥

जो नील रत्नों के बने हुए अत्यन्त दुर्गम तीन आवरण दुर्गों (परकोटाओं) से शोभित है जिस नगरी में चार तरफ नील रत्नों के बने हुए महल भरे हैं ॥७८॥

योजनानां पञ्चशतै राजते राज मन्दिरम् ॥
निपुणै स्तज्जनैः पूर्णं पताकाध्वज शोभितम् ॥७९॥

उस नगर मे पाँच सौ योजन का बिस्तार वाला एक राजमन्दिर है जो ध्वजा पताकादिकों से सुशोभित है तथा सुन्दर पार्षदों से परिपूर्ण है ॥७९॥

सत योजन विस्तीर्णो मण्डप स्तत्रभूषित. ॥
योजन द्वय विस्तारं सिंहासन मतिप्रभम् ॥८०॥

उस राजमहल के अन्दर सौ योजन बिस्तार वाला सुन्दर भूषित एक मण्डप है। उस मण्डप के भीतर अति प्रकाशमान दो योजन बिस्तार वाला (आठ कोस का) एक सिंहासन है ॥८०॥

कोमले स्वासने तत्र खचिद्रत्न किरीट धृक् ॥
मत्स्यो वै भगवा न्साक्षा द्राजते सत्प्रभाधरः ॥८१॥

उस सिंहासन पर कोमल बिछावन के ऊपर बैठे हुए रत्नों से खचित मुकुट को धारण किए हुए, सुन्दर प्रकाशमान शरीर वाले साक्षात् मत्स्य भगवान विराजे हुए हैं ॥८१॥

Scanned by CamScanner

चतुर्भु जोङ्गदी माली सेव्यमानः सुरासुरैः ॥
गन्धर्वै गीयमानोपि स्वभक्तै पर्य्युं पासितः ॥८२॥

जो चार भुजा वाले प्रकाशमान बिजायठ और मालाओं को धारण किए हुए, देवतासुर सबसे सेवित हैं; गन्धर्व जिनका गान करते हैं; भक्त जन जिनकी उपासना करते हैं ॥८२॥

श्रृङ्गी साध्वी प्रियातस्य वामे भूषण भूषिता ॥
सिद्धि स्मृद्धि गणै स्सेव्या दासीभिः परिवारिता ॥८३॥

इस प्रकार के मत्स्य भगवान के वामभाग में सुन्दर भूषणों से भूषित, अत्यन्त प्रिया, साध्वी श्रृङ्गी नाम की शक्ति बिराज मान हैं जो सिद्धि रिद्धि समृद्धि गणों से सेवित तथा दासियों से परिवारिता (घिरी हुई) हैं ॥८३॥

ततोदूरं पर्वतैको कौर्म्यकः कान्तिमा न्परः ॥
कौर्म्यः तत्र पुरं चास्ति प्रभाभानु तिरस्कृतम् ॥८४॥

इस नगर से कुछ दूर और आगे एक महान् प्रकाशमान कौर्म्य नामक पर्वत है। वहाँ पर अपने प्रकाश से सूर्य का तिरस्कार करने वाली एक कौर्म्यो नाम की नगरी है ॥८४॥

सतानिचाष्ट विस्तारं योजनानां समन्ततं ॥
गांगेया महि सर्वत्र विभक्तागार शोभना ॥८५॥

वह नगरी एक सौ आठ योजन विस्तार वाली तथा चारों तरफ स्वर्णमयी भूमि वाली सर्वत्र अलग अलग विस्तृत महलों से शोभित है। ८५॥

राजमन्दिर प्राविष्टा मणिभिर्वहुवर्णकैः ॥
खचिता भ्राजते भूमि स्तत्र मण्डप मद्भुतम् ॥८६॥

जिस नगर में बहुत रंग की मणियों से रचित राज मन्दिर हैं जिस राजमन्दिर में रत्न खचित भूमि पर एक अद्भुत मण्डप है ॥८६॥

सतयोजन विस्तीर्णं पताकाध्वज शोभितम् ॥
तोरणानां स्तति स्तम्भेष्वनन्तेषु विराजितम् ॥८७॥

जो मण्डप सौ योजन विस्तार वाला ध्वजा पताका तोरणादि से सुशोभित तथा अनन्त खम्भाओं से विराजमान है ॥८७॥

रुक्म वैडूर्य्य मुक्ताभिः खचिते श्रासने वरे ॥
इल्या देव्यापि सहितो राजते कूर्म्मकः प्रभुः ॥८८॥

उस मण्डप में स्वर्ण वैडूर्य्य, मुक्तादि मणियों से खचित श्रेष्ठ सिंहासन पर इल्या देवी के साथ कूर्म भगवान विराजे हुए है ॥८८॥

Scanned by CamScanner

सेव्यमानः स्वभक्तानां गणैर्ज्ञेयो गुणैश्च सः ॥
सच्चिदानन्दरूपोसौ भक्तमण्डल रञ्जनः ॥८९॥

जो अपने भक्त गणों से सेवित हैं और दिव्य गुणों से जाने जा सकते हैं। इस प्रकार के वे कूर्म भगवान सच्चिदानन्द स्वरूप हैं और अपने भक्त मण्डल को प्रसन्न रखते हैं ॥८९॥

ततः परं विभात्येको विशदः सौकरो गिरिः ॥
भूषितश्च शिखरैः फल पुष्पैः प्रपूरितः ॥९०॥

इस नगर के आगे कुछ दूर पर एक सफेद रंग का सौकर नामक पर्वत है जो दिव्य शिखरों में फल फूल पूरित दिव्य वृक्षों से सुन्दर भूषित है ॥९०॥

मृगसिंह वराहैश्च संकुलो वारिनिर्भरैः ॥
अधित्यको पत्यका भू श्चतुर्दिक्षुप्रभाधरा ॥९१॥

उस पर्वत में हिरन सिंह वराह आदि जानवर भरे हैं और जल के झरना झर रहे हैं। उस पर्वत के नीचे चारों तरफ की भूमि सुन्दर प्रकाशमान है ॥९१॥

वाराहीश्च पुरी तत्र दुर्गमैः पञ्च दुर्गकैः ॥
आवृता मणि कुड्यैश्च पताकाध्वज शोभिता ॥९२॥

उस भूमि पर वाराही नामकी नगरी है जो पाँच दुर्गम पर कोटाओं (दुर्गो) से आवृत है; मणियों के बने हुए ध्वजा पताकाओं से शोभित है। ९२॥

गोपुराणि चतुर्दिक्षु सर्ववर्णेषु सुवृतैः ॥
विराजन्ते रक्षितैश्च दिव्याम्बर विभूषितैः ॥९३॥

इस नगर के परकोटाओं में चारों तरफ के फाटकों पर ऊँचे २ सुन्दर गोपुर बने हुए हैं जिन फाटकों पर रक्षा करने वाले दिव्य वस्त्राभूषणधारी द्वारपाल खड़े हुए पहरा करते हैं। ९३॥

भगवान्वराह स्सा ात्तां पुरी शास्ति च सास्वतीम् ॥
नित्यां प्रीत्या प्रजानां तु भक्तानां सुख वर्द्धनः । ९४

इस प्रकार की उस सनातन पुरी का साक्षात वाराह भगवान शासन करते हैं। जो भगवान नित्य प्रिय प्रजा जनों का और भक्त जनों का सुख बढ़ाने हैं ॥९४.

वाराही वैष्णवी योगे त्येवं शक्ति त्रयान्वितः ॥
चतुर्भुज श्चिदानन्दः किरीट कुण्डलाञ्चितः ॥९५॥

उन चतुर्भुज सच्चिदानन्द क्रीट कुण्डलादि भूषणों से भूषित भगवान की तीन शक्तियाँ हैं जिनका नाम-वाराही वैष्णवी योगा-इस प्रकार है । ९५।

गन्धर्वाप्सरसो नागास्स्तुवन्ति किन्नराश्रपि ॥
प्रवन्धैर्गान वाद्यै श्च सामसाङ्गित कोद्धतैः ॥९६॥

जिन भगवान के आगे अप्सरा नृत्य करती हैं; गन्धर्व गाते है; नाग और किन्नर अनेक प्रकार के प्रबन्ध गान बाद्यों से अत्यन्त बढ़े हुए सामवेदी संगीत द्वारा स्तुति करते हैं ॥९६॥

Scanned by CamScanner

एतस्याग्रे दूरगेको भद्रकल्याण नामकः ॥
राजते गिरि रारण्यैः संसिद्धो फल वारिभिः ॥९७॥

इस नगर से आगे और कुछ दूर में एक भद्र कल्याण नामक पर्वत है जो चारों तरफ बनों से शोभित; सिद्ध, फल, फूल, वृक्ष तथा झरनाओं से सुन्दर शोभित है ॥९७॥

भद्र कल्याणिका तत्र पुरी तस्यास्ति विस्तरः ॥
योजनानां सप्त शतैः समन्ताच्च परिस्कृतः ॥९८॥

वहाँ पर एक भद्र कल्याणिका नाम की विस्तृत नगरी है जो सात सौ योजन की चारों तरफ विस्तार वाली है ॥९८॥

राजस्थानं त्रिशतं विस्तारेण विभक्तकम् ॥
एतस्यैव चतुर्थांशो मण्डपः प्रभयान्वितः ॥९९॥

उस नगरी में तीन सौ योजन विस्तार वाला, सुन्दर विभागों से युक्त, राजस्थान (महल) है। उस राजस्थान के अन्दर पचहत्तर २ योजन का एक प्रकाशमान मण्डप है ॥९९॥

वंशरुच्छदार्क मणिभिर्निर्मितो रुण रत्नकैः ॥
मुक्ता सुमिश्रितै र्भाति तोरणै खण्डभावितः ॥१००॥

वंशच्छद और सूर्यकान्तादि मणियों से निर्माण किया हुआ और लाल रत्नों तथा मुक्तादिकों से मिश्रित बने हुए तोरणों से जिस मण्डप के प्रत्येक खण्ड सुन्दर भाव पूर्वक रचे गए हैं ॥१००॥

तस्मिन् सिंहासने दिव्ये दीव्यन्तीं भद्रकां पुरीम् ॥
पालयं सुखमासीनः कलंकी करुणावरः ॥१०१॥

उस मण्डप में दिव्य सिंहासन के ऊपर विराजे हुए करुणासागर कलंकी भगवान अपने प्रकाश से प्रकाशित करते हुए भद्रकापुरी को पाल रहे हैं ॥१०१

सा तस्य वाम भागेच राजते सद्विभूषिता ॥
किरीट कुण्डल वतः सूर्य्याग्न्यर्क प्रभावतः ॥१०२॥

उन कलंकी भगवान के वाम भाग में सुन्दर भूषणों से भूषित, करुणा नाम की महा लक्ष्मी विराजमान हैं। चन्द्र, सूर्य, अग्नि के समान वालों, क्रीट कुण्डलादि भूषणोंसे भूषित ऐसे कलंकी भगवान के आगे ॥१०२

गानं कुर्वन्ति गन्धर्वा नृत्यन्त्यप्सरसांगणाः ॥
दासी दास गणा भक्त्या सेवन्ते तौगुणान्वितौ ॥१०३॥

गन्धर्व लोग गान कर रहे हैं; अप्सरागण नृत्य कर रही हैं; दासी दास गण सेवा कर रहे हैं; भक्त गण गुण गा रहे हैं ॥१०३

ततः परं दूरतश्च राजते बौध चिद्गिरिः ॥
बौधकापि पुरी रम्या सर्व सिद्धि समन्विता ॥ १०४

इस नगरी से आगे कुछ दूर पर बौद्ध नामक चैतन्य पर्वत है वहाँ पर बौधका नाम की रमणीय पुरी है जो सब प्रकार की सिद्धियों से परिपूर्ण है ॥१०४॥

Scanned by CamScanner

विस्तारस्तु योजनानां लश त्पञ्च शतैर्यथा ॥
योजनानां च तुर्भिश्च राजते राजमन्दिरम् ॥१०५

जिस नगरी का विस्तार पाँच सौ योजन का है। जिस नगर में चार योजन का राजमहल है ॥१०५॥

तस्यार्द्ध योजनं तत्र सभागारं मणि कृतम् ॥
तत्र सिंहासने दिव्ये प्रभुर्वोधः प्रभान्वितः ॥१०६॥

जिस राज महल के अन्दर आधा योजन (दो कोस) का मणिमय सभा मण्डप है जिस मण्डप में दिव्य सिंहासन पर महान प्रकाशमान बोध प्रभु विराजमान हैं ॥१०६॥

ज्ञाना विज्ञानका द्वे च दक्षिणे वामतः प्रिये ॥
बोधकामि बोधकैश्च भक्त्या सेवित पादुकः ॥१०७॥

उन बोध भगवान की ज्ञाना और विज्ञानका नाम की दो शक्तियाँ दक्षिण और वाम तरफ विराजी हुई हैं। हे प्रिये पार्वती ! उन बोध भगवान की प्रियाएं बड़ी भक्ति पूर्वक अपने पति की चरण सेवा करती हैं ॥१०७॥

एतस्याग्रे ब्रह्म सूरो गिरिराजो विराजते ॥
•ब्राह्मी नाम्ना पुरी तत्र चतुर्द्वारोति शोभना ॥१०८॥

इस नगरी से आगे एक ब्रह्मसूर नामक पर्वत शोभित है वहाँ पर ब्रह्मी नाम की नगरी चारों दिशा फाटक वाली अति शोभित है ॥१०८॥

नाना मणि कृतं तत्र राजते राज मन्दिरम् ॥
तत्रमण्डप मध्येतु सिंहासन परिच्छदे ॥१०६॥

उस नगर में बिविध प्रकार के मणियों से शोभित राजमन्दिर है। उसके अन्दर एक मण्डप है जिसके मध्य एक सिंहासन है ॥१०६॥

पारस्वधीः प्रभुस्तत्र राजतेगण सेवितः ॥
वामभागे शक्तिरेका धीरमा शोभते परा ॥११०॥

उस सिंहासन के मध्य सुन्दर बिछावन के ऊपर पारस्वधी नामक भगवान अपने गणों से सुसेवित बिराजे हैं। उनके बाम भाग में धीरमा नाम क एक पराशक्ति शोभित है ॥११०॥

एतस्याग्रे शुक्ल साकं बनं पष्पु फलान्वितम् ॥
नानापक्षिगणों युष्टं तत्र चैकं सरोवरम् ॥१११॥

इस नगर से आगे शुक्लसाक नाम का वन फूल फलों से भरे बृक्षों से तथा पक्षी और मृगगणों से सुशोभित है। उस बन में एक सरोवर है ॥१११॥

दशयोजन विस्तीर्णं मणि बद्धचतु स्तटम् ॥
तत्रैका वेदिका शुक्ला योजनैक सुविस्तरा ॥११२॥

जो दश योजन बिस्तार वाला, मणियों से सम्बद्ध चारों तट वाला है। उस सरोवर के मध्य में एक वेदिका है ॥११२॥

तस्योपरितु हंसानां मण्डलेराजतेस्वतः ॥
हंशराजो वरटापि समाश्रित विवेकिका ॥११३॥

उस वेदी के ऊपर सफेद रंग के हंसों का एक मण्डल है जिस मण्डल के मध्य में एक हंसों के राजा बड़ी विवेक वाली बरटा नाम की पत्नी से सुशोभित है ॥११३॥

शान्ती शीला तितिक्षाच सन्तोषा सौरभा मती ॥
मेधाद्या हंशनी रूपा शक्तयोपि विचक्षणाः ॥११४॥

उन हंसराज की पत्नी बरटा शक्ति की शान्ति, शीला, तितिक्षा, संतोषा, सौरभा, मति और मेधा आदि बहुत सी शक्तियाँ हंसिनी रूप में सूक्ष्म बुद्धि वाली सखी हैं ।११४।

ताभिः सेव्या तुबरटा समाश्रित विवेकिका ॥
भगवतो हंशस्यैवं नित्यं धाम विराजते ॥११५॥

उन सखियों से सुसेवित श्री बरटा जी महान् विवेक वाली हैं। इस प्रकार हंस भगवान अपने नित्य धाम में विराजे हैं ।।११५।।

ततः परं पर्वते को नीलकान्तोपि नामतः ॥
नीलकान्ती पुरीतत्र स्वर्णदुर्ग समाश्रिता ॥११६॥

वहाँ से आगे एक नील कान्त नाम का पर्वत है। उस पर्वत पर नील कान्ति नाम की नगरी है जो सुवर्ण के परकोटा से शोभित है ॥११६॥

गन्धर्वैं स्तूयमान स्तु हयतुण्डो स्वयं हरिः ॥
वेदैश्चापि स्तूयमानः मण्डपस्थे महासने ॥११७॥

उस नगर में एक मण्डप में महासिंहासन पर बैठे हुए हयतुण्ड नामक भगवान हैं, जो स्वयं विष्णु हैं, गन्धर्व और वेद जिनकी नित्य स्तुति करते हैं ।११७।

सूर्य्यानन्त प्रभे भव्यो भावितांगस्तुभूषणैः ॥
अलं गुणा च गाम्भीर्य्या तस्य वामे च दक्षिणे ॥११८॥

अनन्त सूर्यों के समान प्रकाशमान मण्डप में प्रकाशमान अंगाबभूषणों से शोभित भव्यस्वरूप (कल्याण स्वरूप) भगवान के दक्षिण और वाम भाग में बैठीं हुई अलंगुणा और गाम्भीर्य्या नाम की दो शक्तियां बिराजमान हैं ।।११८।

राजते शक्ति सौन्दर्य्ये बहु शक्तिभिरावृते ॥
हय ग्रीवो वसत्येवं स्वांपुरीं स्वजनावृतः ।।११९।।

और भी बहुत सी शक्तियाँ तथा सौन्दर्य शक्ति से आवृत हुए हयग्रीव भगवान अपने सेवकों से सुसेवित उस अपनी नगरी में बिराजमान हैं ।।११९।

ततः परं गिरि स्त्वेको योगदालभ्य नामकः ॥
आयुर्लोमापुरिस्तत्र राजते सद्म संकुला ।।१२०।।

उस नगर के और आगे कुछ दूर पर योगदालभ्य नामक एक पर्वत है; वहाँ पर आयुर्लोमा नाम की नगरी सुन्दर महलों से पूरित हुई शोभित है ॥१२०

Scanned by CamScanner

धन्वन्तरिस्तु भगवा न्स्वयं राजा विराजते ॥
सुधामुद्रा महाभागा शक्तिरस्य पतिव्रता ॥१२१

उस नगरी के राजा श्री धन्वन्तरि नाम के भगवान स्वयं विराजे हैं और बाम भाग में महाभाग्यशालिनी सुधामुद्रा नाम की पतिव्रता शक्ति विराजमान हैं ॥१२१॥

सुधाधाम्नि द्वितीयाच ताभ्यां मराडप मध्यगे ॥
सिंहासने रत्नमये नित्यं भाति जनैं वृतः ॥१२२॥

उन धन्वन्तरि भगवान के दूसरी बगल में सुधाधामिनी नाम की दूसरी शक्ति बिराजमान हैं । इस प्रकार उन दोनों शक्तियों के मध्य रत्नमय सिंहासन पर मराडप के अन्दर बैठे हुए नित्य अपने पार्षदों से सेवित हुए सुशोभित हैं ॥१२२॥

एतस्याग्रे विप्रकृष्टो नाम्ना लोकध्वजो गिरिः ॥
भक्ति योगापुरी तत्र प्रवर्द्धा लक्ष योजना ॥१२३॥

उस नगरी से आगे एक बहुत बड़ा लोकध्वज नामक पर्वत है वहाँ पर भक्तियोगा नाम की पुरी जो एक लाख योजन विस्तार वाली है ॥१२३॥

राजवेस्माद्वृता भूमि स्त्वयुतैकार्क रत्नका ॥
सप्तदुगा पुरीभाव्या सप्त दुर्गं च मन्दिरम् ॥१२४॥

जिस नगर में बहुत से राजमहल शोभित हैं । दश हजार सूर्यों के समान प्रकाशवाली रत्नमयी भूमि है और चारों तरफ सात आवरण नगरकोट (दुर्ग) हैं । इस प्रकार की पुरी के मध्य सात आवरण परकोटा (दुर्ग) से घिरा एक सुन्दर राजमन्दिर है ॥१२४॥

सहस्र योजनं भ्राज त्सभागारं सरत्नकम् ॥
शतयोजन विस्तीर्णो मराडपोमुक्तजालकः ॥१२५॥

उस राज मन्दिर के अन्दर एक हजार योजन विस्तार वाला रत्नमय प्रकाशमान सभा गार है। उस सभागार के भीतर सौ योजन विस्तार वाला मुक्ताओं के जालों से सुशोभित एक मराडप है ॥१२५॥

तत्र सिंहासनं रुक्मं खचिद्रत्नं प्रकाशवत् ॥
तस्मिन् सिंहासने सीतारामयोर्मूर्त्ति युग्मकम् । १२६॥

उस मराडप में रत्नों से खचित स्वर्णमयी प्रकाशमान सिंहासन है । उस सिंहासन पर श्री सीताराम जी की मूर्तियों को पधराए हुए ॥१२६॥

सर्वसाहित्य सहितं छत्र व्यजन चामरैः ॥
सराजा सेवते नित्यं पराभक्ति समाश्रितः ॥१२७॥

छत्र व्यजन (पंखा) चवरादिक सर्व साहित्य से सजे हुए श्री सीताराम जुगल सरकार की नित्य सेवा में आशक्त हुए परा भक्ति से परिपूर्ण श्री पृथु नाम के महाराज ॥१२७॥

Scanned by CamScanner

एवं तत्र पुरे राज्यं कुर्वन्राजा पृथुर्महान् ॥
उपास्यति सभायां श्री रामंसीतासमन्वितम् ॥१२८॥

इस प्रकार महाराज पृथुजी उस नगर के मध्य राज्य करते हुए अपने नित्य पार्षदों की सभा के मध्य श्री सीता जी के सहित श्री राम जी की उपासना करते हैं ॥१२८॥

नित्याखण्डोदिव्यरूपोसच्चिदानंद विग्रहः ॥
स्वभार्य्या सहितः श्रीमान्दासी दास गणान्वितः ॥१२९॥

वे पृथु भगवान दिव्य रूप नित्य अखण्ड सच्चिदानन्द विग्रह वाले अपनी पत्नी के सहित तथा दासी दास गणों से सेवित हुए सशोभित हैं ॥१२९॥

ततो दूरं पर्वतै को ज्ञानकूटो सुवर्णकः ॥
विज्ञानिका पुरी तत्र विद्वज्जन समाकुला ॥१३०॥

इस नगर से आगे एक ज्ञानकूट नाम का स्वर्णमय पर्वत है वहाँ पर विज्ञानिका नाम की नगरी है जिसमें विद्वान जन निवास करते हैं ॥ ३०॥

तत्र चैकं सभागारं राजते रत्न मण्डपम् ॥
तस्मिन्ननेक मुनिभिर्भगवा न्सास्त्र कारकः ॥१३१॥

उस नगर के मध्य में एक सभा महल है जिसके भीतर मण्डप में अनेक मुनियों से घिरे हुए भगवान शास्त्रकारक ॥१३१॥

व्यासो विराजते चाग्रे गणेशो लिखति स्वयम् ॥
रचयित्वापुराणानि नाना ब्रह्माण्ड गोलके ॥१३२॥

श्री वेद व्यास जी विराजते हैं। उन व्यास भगवान के आगे शास्त्रों को लिखते हुए श्री गणेश जी स्वयं विराजमान हैं इस प्रकार विविध पुराणों की रचना करके अनन्त ब्रह्माण्डों में ॥१३२॥

प्रेरितानि स्वयंयान्ति संकल्पात्तु महात्मनः ॥
वर्णैः सद्विग्रहा येतु तेभूत्वा दिव्य विग्रहाः ॥१३३॥

यहाँ भी वेद व्यास जी के संकल्प से वे पुराण स्वयं प्रेरित हो जाते हैं प्रत्येक पुराण अपने वर्णों से सदे विग्रहवान होकर हर एक ब्रह्माण्डों में दिव्य रूप से प्रवेश करते हैं ॥१३३॥

एतस्याग्रे मानवाख्यो गिरिः रत्नमयो महान् ।
मानवाख्यं पुरं तत्र सहस्रयोजना वृतम् ॥१३४॥

इस नगर से आगे एक मानवाख्य नामके रत्नों का महान पर्वत है वहाँ पर मानवाख्य नाम की नगरी एक हजार योजन विस्तार वाली है ॥१३४

रत्नदुर्गं रत्नगृहैश्चतुर्दिक्षु समाकुलम् ॥
नरा नार्य्यो दिव्यरूपा सच्चिदानन्द विग्रहाः ॥१३५॥

यह नगरी चारों तरफ रत्नमय परकोटा और रत्नों के महलों से परिपूर्ण है। उस नगर में दिव्य रूप सच्चिदानन्द विग्रह वाले नर नारी निवास करते हैं ॥१३५॥

Scanned by CamScanner

श्रीरामभक्ति संयुक्ताधनुर्वाणादि संस्कृताः ॥
श्रीरामचरितं सर्वे गायन्ति प्रेम निर्भरा: ॥ १३६॥

वे सब धनुष बाँणादिक चिन्हों से संस्कृत, श्री रामभक्ति से परिपूर्ण, श्री राम चरित्र के गान करने में सबके सब प्रेम निर्भर हुवे ॥१३६॥

अर्चयन्तिसदा सीता रामयो स्थाप्य विग्रहम् ॥
उत्सवं नित्यनैमित्यं कुर्वन्ति मेलकादिच ॥१३७॥

श्री सीताराम जी के विग्रहों को स्थापित करके नित्य पूजा करते हैं और नित्य-नैमित्तिक उत्सवों को बड़े धूम-धाम, मेला, कौतुक पूर्वक किया करते हैं ॥१३७॥

सप्त मूर्ति मनुस्तत्र राजा राज्यं करोति च ॥
मन्दिरं तस्य विस्तारै राजते दश योजनैः ॥१३८॥

उस नगर में सप्तमूर्ति नामक मनु राजा राज्य करते हैं उनका वह राजमहल नगर के मध्य दस योजन विस्तार वाला है ॥१३८॥

राज्ञीनां भिन्न सद्मानि विस्तारेण लसन्ति च ॥
प्रत्यागारं पूजयन्ति राज्ञः सीतापतेः प्रभाम् ॥१३९॥

उस राजमहल में रानियों के अलग २ महल विस्तार पूर्वक शोभित हैं। सभी रानियाँ अपने २ महलों में श्री सीताराम जी के विग्रहों की पूजा करती हैं ॥१३९॥

नृत्यं गानं च कुर्वन्ति प्रेम भक्ति परायणाः ॥
राजापि मन्दिरे स्वस्मि न्नेवं सर्वं करोतिच ॥१४०॥

श्री सीताराम जी के आगे नृत्यगान उत्सव पूर्वक प्रेमभक्ति में परायण रहती हैं राजा सप्तमूर्ति मनु भी इसी प्रकार अपने महल में श्री सीताराम जी की भक्ति करते हैं ॥१४०॥

एतस्याग्रे गिरिस्त्वेको राजते गन्धमादनः ॥
उज्वलाहि पुरी तत्र भगवान्गन्धमादनः ॥१४१॥

इस नगर से आगे एक गन्धमादन नाम का पर्वत है वहाँ पर उज्ज्वला नाम की नगरी है। उस नगर में गन्धमादन नाम के भगवान हैं ॥१४१॥

चतुर्बाहु श्चिदानन्दो दिव्य सिंहासने स्थितः ॥
चिदात्मिका शक्तिरेव आनन्दाख्या महाद्युतिः ॥१४२॥

वे चार भुजा वाले, सच्चिदानन्दस्वरूप भगवान दिव्य सिंहासन पर विराजमान हैं और आनन्दा नाम की महाप्रकाशमान उनकी एक सच्चिदानन्द शक्ति हैं ॥१४२॥

एतस्याग्रे यज्ञ सानुः पर्वतः परिभ्राजते ॥
हविष्या च पुरी तत्र यज्ञविष्णु सनातनः ॥१४३॥

इस नगर से आगे यज्ञसानु नाम का पर्वत है और प्रकाशमान हविष्या नाम की नगरी है। उस नगर में यज्ञविष्णु नाम के सनातन भगवान हैं ॥१४३॥

Scanned by CamScanner

एतस्याग्रे वीरभद्रो राजते पर्वतो महान् ॥
पुरी तु बहुला नामा काञ्चनी दुर्ग संयुता ॥१४४॥

इस नगर से आगे बीरभद्र नाम का महान् पर्वत है वहाँ पर बहुला नाम की नगरी है जो स्वर्णमयी परकोटा से युक्त है ॥१४४॥

तत्रैव राजते देवि महाशम्भुः सनातनः ॥
महामाया शक्ति रेव त्वयादृष्टा शुभानने ॥१४५॥

हे पार्वती उस नगर में सनातन देव महाशम्भु विराजते हैं और उनके वामभाग में महामाया नाम की एक शक्ति बिराजती हैं; हे शुभानने ! जिनको तुमने देखा है ॥१४५॥

सर्वाण्येतानि धामानि स्वावर्त्य विरजातटम् ॥
विलसन्ति रामरूपाः शक्तिसीता स्वरूपकाः ॥१४६॥

इस प्रकार जो मैंने जिन बहुत से बैकुण्ठ धामों का वर्णन किया है वे सब विरजा जी के उस पार किनारे मण्डलाकार होकर विराजते हैं। इन सब बैकुण्ठ धामों में जितने भगवान हैं वे सब राम रूप हैं और जितनी शक्तियाँ हैं वे सब सीता स्वरूपा हैं ॥४६॥

इति श्री शंकर कृते श्रीअमररामायणे श्रीसीताराम रत्न मञ्जूषायां ईश्वरधाम वर्णनोनाम तृतीयः सर्गः ॥३॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां तृतीयो सर्गः

अतोऽग्रे तु समुद्रः स्यात् ततोभूमिः समुद्रका ॥
सप्तावर्णान्येवं च सप्तद्वीपैः स सागरैः ॥१॥

इन सब धामों के मण्डल के अन्दर सातों समुद्रों का मण्डल और सातों द्वीपों का मण्डल है ॥१॥

तेषां मध्ये चानुषङ्गा मुक्ता जीवा वसन्ति हिं ॥
भिन्न प्रकृतिभावास्ते नाना वर्णा विचित्रकाः ॥२॥

उन सब द्वीपों में आनुसाङ्गिक मुक्त हुए जीवात्मा निवास करते हैं। वो सब मुक्त हुए आत्माएँ नाना बरण के विचित्र रूप और भिन्न २ स्वभाव वाले हैं ॥२॥

पार्वत्युवाच

मुक्तानां हि कथं भेदा नोक्तं पूर्वं त्वयाहर ॥
मुक्ताः कतिविधा नाथ श्रोतु मिच्छात्र मे प्रभो ॥३॥

श्री पार्वती जी बोलीं कि हे हर ! मुक्त हुए जीवों का किस प्रकार भेद होता है यह तो आपने अभी तक कभी नहीं कहा है; हे नाथ ! हे प्रभो ! ये कितने प्रकार के होते हैं इसको सुनने की मेरी इच्छा है ॥३॥

शिव उवाच

ज्ञात्वा सिद्धान्त माराध्य प्राप्नुवन्तिरघूद्वहम् ॥
तेज्ञात्वा मुक्तका देवि भाव्य रूप समीपकाः ॥४॥

श्री शंकर जी बोले जो भक्त ठीक सिद्धान्त को जानकर श्री रघुनाथ जी की आराधना करते हैं उन भाविक आत्माओं को तो सामीप्य मुक्ति प्राप्त होती है ॥४॥

Scanned by CamScanner

अनुषङ्गा स्तु बहुसो नाम धाम कथा यथा ॥
तदीयानां दर्शनम्वा सम्भाषण विवादकम् ॥५॥

और जो लोग नाम, धाम, कथा आदिक और प्रसंगों से संयोग वश मुक्त हो जाते हैं अथवा भगवद् भक्तों का दर्शन, सम्भाषण, विवादादि से मुक्त होते हैं, उनको अनुसङ्गिक मुक्त कहा जाता है ॥५॥

अज्ञात्वाहि प्रसंगीनतत्क्रन्मुक्ता नुषङ्गिकाः ॥
तद्बोधाय प्रसंग स्तु संक्षेपेण शृणुप्रिये ॥६॥

अथवा प्रसंग को न जानकर ही जो भक्ति करते हैं वो भी भक्त कहे जाते हैं। इस बात को जानने के लिए मैं संक्षेप से एक प्रसंग कहता हूँ, हे प्रिये ! सुनो ॥६॥

कोप्येको रामभक्तस्तु वने स्नातुं नदी तटे ॥
पन्थानं हि परित्यक्त्वा गतो दूरं विविक्त के ॥७॥

कोई एक श्री राम भक्त वन में नदी के किनारे स्नान के लिए रास्ता को त्याग कर दूर एकान्त स्थान में गया ॥७॥

कृत्वास्नानं पूजनार्थं पुष्पाय वन माविशत् ॥
तस्करो प्यागत स्तत्र दैवयोगा त्ततोवनात् ॥८॥

वहाँ पर उसने स्नान करके पूजा के लिए फूल लाने के हेतु वन में प्रवेश किया। दैव योग से उसी वन से उस स्नान के स्थान पर एक चोर जा पहुँचा ॥८॥

दृष्ट्वा पीत स्तत्र चौरो धौत वस्त्रं प्रसारितम् ॥
तदेवादाय शीघ्रं हि पलायमानो बभूव सः ॥९॥

उसने धो के फैलाए हुए पीत वस्त्र को देखा और उसी को लेकर शीघ्र भाग गया ॥९॥

तद्वने विपिने चौरो दूरं गत्वा तदंशुकम् ॥
प्रसार्य्य च तत्र भूमौ सुष्वापैव यथासुखम् ॥१०॥

उस वस्त्र को लेकर वह चोर उस वन में दूर जब पहुँचा और उस भूमि पर उसी वस्त्र को बिछाकर सुख से सो गया ॥१०॥

सुप्तः सन्नहिना दष्टस्ततो मृत्यू मवाप्नुवान् ॥
तद्वस्त्र स्पर्शयोगेन रामधाम गतोपिच ॥११॥

संयोग बस सोये २ सर्प ने उसको काट लिया और उसकी मृत्यु हो गयी। उस वस्त्र के स्पर्श से वह चोर मुक्त होकर श्री राम धाम को चला गया ॥११॥

शृणुदेविपुनश्चैका नौका जन समाकुला ॥
प्रतिकूलाशुगे नैव वारिमग्ना जनैः सह ॥१२॥

हे देवि ! एक प्रसंग और सुनो। एक नौका बहुत से जनों से भरी हुई नदी से पार हो रही थी। वायु की विपरीतता से जनों के सहित नौका डूब गयी ॥१२॥

सा नौः श्रीरामरामेति वर्णैश्च संस्कृता शिवे ॥
तत्प्रभावेन ते सर्वे मुक्ति मीयू र्यौगिकाः ॥१३॥

उस नौका में श्री राम राम ऐसे वर्ण लिखे हुए थे, हे शिवे ! उसी प्रभाव से वो सब सांसारिक जीव मुक्ति को प्राप्त हो गए ॥१३॥

एवश्चा नुषङ्गिकाः स्युः सप्त द्वीप निवासिनः ॥
सच्चिदानन्द रूपास्ते प्रजा भावेन संस्थिताः ॥१४॥

इस प्रकार यह अनुसङ्गिक मुक्त जीवों का सातों-द्वीपों में निवास होता है। वे अनुसङ्गिक मुक्त भी सच्चिदानन्द स्वरूप हैं और "श्री राम जी राजा हैं हम प्रजा हैं" ऐसा भाव अपने मन में रखते हैं ॥१४॥

प्रथमे तु श्यामवर्णा दीर्घकायाष्ट बाहुकाः ॥
चतुर्मुखा दीर्घ केशा अरुणाक्षाः स्त्रियोनराः ॥१५॥

सबसे बाहर के पहले द्वीप में रहने वाले मुक्त जीव लम्बे शरीर वाले, आठ भुजा वाले, श्यामवर्ण हैं। इनके चार मुख हैं; लम्बे केश हैं; लाल नेत्र हैं और स्त्री पुरुष रूप में हैं। ५॥

रक्तवस्त्राः सुनिद्राणा: नृत्याशक्ता श्चयोषिताम् ॥
कुर्वन्ति पुष्प शृंगारं नालकेरि फलाशनाः ॥१६॥

लाल वस्त्र वाले निद्रा और नृत्य में आसक्त हुए, स्त्रियों के फूल श्रृङ्गार करने में लगे हुए नारियल का भोजन करते हैं ॥१६॥

असौ द्वीप श्चन्द्र संज्ञ स्तदग्रे भद्र संज्ञकः ॥
तस्मिन्नारी नराः सर्वे चतुरास्ता श्चतुर्भुजाः ॥१७॥

इस द्वीप का चन्द्र नाम है और इसके आगे दूसरा 'भद्र' नामक द्वीप है। उसमें सब नर नारी चार मुख व चार भुजा वाले हैं ॥ ७॥

पीतवर्णा नील वस्त्रा हीरका भूषणान्विताः ॥
द्राक्षाऽशनाः गायकाश्च दीर्घ केशाश्च सर्वसः ॥१८॥

उनका अंग वर्ण पीला है; वस्त्राभूषण नील व हरित हैं; दाख (मुनक्का) किशमिस भोजन करने वाले हैं और गान में आसक्त लम्बे केश वाले हैं ॥१८॥

पुंगे तृतीये द्वीपेतु पञ्चास्यास्ते चतुर्भुजाः ॥
रक्तवर्णाः पीतवस्त्राः स्वर्णस्य भूषणेरताः ॥१९॥

तीसरे पुङ्ग नामक द्वीप में पाँच मुख और चार भुजा वाले नर नारी लाल वर्ण के पीत वस्त्र स्वर्ण भूषण वाले रहते हैं ॥१९॥

विद्या युक्ताः स्त्री पुरुषा निद्राल्पा श्चायु भोजनाः ॥
दुग्ध पानं प्रकुर्वन्ति रात्रौकामपरायणाः ॥२०॥

वहाँ के पुरुष बड़े विद्वान, अल्प निद्रा वाले, स्वतः तृप्त, दुग्धभोजी और रात्रि में काम परायण रहते हैं ॥२०॥

Scanned by CamScanner

प्रभे चतुर्थे द्वीपेतु त्रिमुखाह्रस्व बाहुकाः ॥
दीर्घ पादा कटौ स्थूला गौरा नार्य्यो नराश्च ते ॥२१॥

चौथे 'प्रभ' नामक द्वीप में तीन मुख के छोटी भुजा वाले, दीर्घ पाद, मोटी कमर, गौर वर्ण के नर नारी रहते हैं ॥२१॥

मधुरं भोजनं तेषां कुर्वन्ति जल केलयः ॥
नीलवस्त्रा वेणुवादा गायन्ति मधुर स्वरैः ॥२२॥

वे लोग मधुर भोजन करते है; जल विहार करते हैं; नील वस्त्र वाले हैं; बंशी बजाते हुए मधुर स्वर से गाते हैं ॥२२॥

पञ्चमेतु हयोत्पत्तिः हय द्वीपः सचोच्यते ॥
बहुसोगिरय स्तत्र सरितो बहुसस्तथा ॥२३॥

पाँचवे 'हय द्वीप नामक' द्वीप में घोड़े उत्पन्न होते हैं। उस द्वीप में बहुत सी नदियाँ हैं ॥२३॥

सुलक्षणारूप वन्त्यो नार्य्यो भूषण स्वल्पकाः ॥
कुशला कोकसास्त्रेपि रूप वन्तो नरा अपि ॥२४॥

उस द्वीप में सुन्दर लक्षण वाले, रूप वाले, अल्प भूषण वाले नर-नारी रहते हैं जो कोकशास्त्र में बड़े कुशल हैं ॥२४॥

लज्जा शीला नरानार्य्यः काम शीलाश्च तेऽपि ताः ॥
परस्परं स्नेह युक्ताः वने क्रीडन्ति सम्वृताः ॥२५॥

वे नर नारी लज्जा और शीलवान, बिलासासक्त, परस्पर स्नेह युक्त, समाज बद्ध होकर बनों में बिलास करते हैं ॥२५॥

गजोत्पत्तिः षष्टकेतु स हि द्वीपो गजाभिधः ॥
वनानि वहुस स्तत्र पर्वति नगराणि च ॥२६॥
स्त्रियः सुगौर वर्णास्युः पुरुषा श्याम वर्णकाः ॥
फला शना दुग्धपानाः कामकेलि विचक्षणाः ॥२७॥

छटवाँ 'गज द्वीप' है जिसमें हाथियों की बहुत उत्पत्ति है। उस द्वीप में बहुत वन, पर्वत और नगर हैं। उस द्वीप के नर श्याम वर्ण के नारी गौर वर्ण की, बहुत सुन्दर हैं उनका भोजन फल व दूध है। काम कलाओं में बड़ा सूक्ष्म बुद्धि वाले हैं ॥२७॥

भोगानन्दः सप्तमस्तु मध्येऽयोध्या तु कौशले ॥
मैथिले मिथिला ख्याता वहुदेशावृता शिवे ॥२८॥

सातवाँ भोगानन्द नाम का जो द्वीप है उसके मध्य में श्री अयोध्या नाम की कौसल नगरी और मिथिला नाम की मैथिल नगरी बहुत से देशों से घिरी हुई हैं ॥ २८।

द्वयोर्धाम्नो रंग भूता लोकाः पाताल स्वर्गकाः ॥
सर्वे दिव्या लोक भिन्ना नच प्राकृत वैभवाः ॥२९॥

हे शिवे ! इन्हीं दो धामों के अंगभूत स्वर्ग-पाताल के सब लोक हैं। सभी दिव्य हैं; प्राकृतिक लोकों से भिन्न हैं और इन लोकों में मायिक वैभव नहीं है ॥२९॥

Scanned by CamScanner

परं तु सदृशा लोके रुक्ता माधुर्य मण्डले ॥
एवं ब्रह्माण्डकं दिव्यं नित्यमेव सनातनम् ॥३०॥

वैरन्तु रूप, आकार, माधुर्य सबका एक सदृश है। इस प्रकार यह मायिक ब्रह्माण्ड के अन्दर की और सनातन दिव्य धाम का एक सदृश वर्णन हुआ ॥३०॥

सीताराम विहाराय नाना रत्न समद्धिकम् ॥
स्वर्ग पातालसद्भोगाः स्त्र्याद्या राम वियोगिकाः ॥३१॥

स्वर्ग और पातालादिक लोकों में रत्न, सम्पत्ति, ऐश्वर्य, स्त्री, पुरुष आदि नियुक्त किए हैं। ये सभी श्री सीताराम जी के ही नाना प्रकार के विहार के लिए हैं ॥३१॥

मेघ विद्युद्वायू लोकाः वारि लोक स्तथैव वै ॥
अग्नि लोकर्षिलोकौच मुनि लोक स्तथापरे ॥३२॥

मेघलोक, विद्युत लोक, वायुलोक, जललोक, अग्निलोक, ऋषिलोक, मुनि लोक तथा और ॥३२॥

गन्धर्वाणा मप्सराणां काम लोक स्तथापरे ॥
किन्नराणां च यक्षाणा मिन्द्र लोक स्ततो वरः ॥३३॥

गन्धर्वों के लोक, अप्सराओं के लोक, काम लोक, किन्नरों के लोक, यक्षों के लोक इन्द्रलोक तथा इससे भी बड़ा ॥३३॥

सूर लोकश्च पितृणां सत्य स्तुब्रह्मणाः परः ॥
एते स्वर्गे तुपाताले नागः कूर्म वराहवौ ॥३४॥

सूर्य लोक, पितर लोक, ब्रह्म लोक ये सब जो स्वर्ग में लोक गिने जाते हैं तथा पाताल में नाग लोक, कूर्मलोक, वराह लोक ॥३४॥

साम्वरो रवरो कल्पो मात्स्यक श्चेति सप्त वै ॥
पाताले भोगभिन्नास्ते सर्वे रामायभोगदाः ॥३५॥

साम्बर लोक, अवर लोक, कल्प लोक मात्स्यक लोक-ये सात लोक हैं। इस प्रकार पाताल के और स्वर्ग के जितने भी अलग २ नागलोक छोड़ कर हैं ये सर्व श्री राम जी को सुखभोग देते हैं ॥३५॥

भोगानन्दो रामलोको महदानन्द वारिधिः ॥
संज्ञा स्यादुदधेरस्य महद्रत्नालयेप्स्यं ॥३६॥

ये जो श्री राम लोक हैं वे भोग, आनन्द और महानन्द के समुद्र हैं और महान् रत्नालय नामक जो समुद्र है वह इस श्री राम लोक का हृदय है ॥३६॥

महापुण्य श्चपुर्यश्च तस्य तीरे वसन्ति याः ॥
इक्ष्वासुर्या राघवस्यैता स्तन्मात्ते गणयाम्यहम् ॥३७॥

इस महा रत्नालय समुद्र के किनारे बड़े २ महानगरियाँ हैं उनमें बड़े २ महापुरुष लोग रहते हैं। ये सब नगरियाँ श्री राम जी की सम्पत्ति ही हैं। हे पार्वती! अब मैं तुमसे इनको भी वर्णन करूंगा ॥३७॥

इति श्री शंकर कृते श्रीअमर रामायणे श्रीसीतारामरत्नमंजूषायां त्रिपादस्याति
दिव्य द्वीपे स्वर्ग पाताल कथनो नाम चतुर्थ स्सर्गः ॥४॥

इति श्री शंकर कृत रसास्वादिनी भाषा टीकायां चतुर्थो सर्गः।

॥ प्रथम सर्गः ॥

प्रथमं दक्षिणे तीरे घरे बाण वती पुरी ॥
बाण नामा पर्वतोपि सर्व सम्पत्ति दायकः ॥१॥

हे पार्वती ! अब मैं तुमको प्रथम दक्षिण किनारे समुद्र तट का बाणवती नामक नगर और बाण नामक पर्वत का भी वर्णन करता हूं जो सर्व सम्पत्ति की देने वाला है ॥१॥

तस्यां राजा विष्णु भक्तः क्षत्रियो मण्डलेश्वरः ॥
पुरकान्त महाकान्तौ पुत्रौद्वौ तस्य शोभनौ ॥२॥

उसी बाणवती नगरी में विष्णुभक्त नाम का क्षत्रियों का मण्डलेश्वर राजा रहता है । उन विष्णु भक्त राजा के पुरकान्त और महाकान्त नाम के अति सुन्दर दो पुत्र हैं ।२॥

भ्रातरौद्वौ महावीर सुवीरौ च विमातृकौ ॥
तयोश्चापि द्वौ द्वौ पुत्रौ शस्त्र विद्या विशारदौ ॥३॥

राजा के दो सौतेले भाई भी हैं जिनका नाम-महावीर और सुवीर-है उनके भी दो २ पुत्र शस्त्र विद्या में महान् विशारद हैं ॥३॥

वीरशक्ति वीरकान्तौ महावीरस्य सुन्दरौ ॥
विद्या कान्त सूर कान्तौ सुवीरस्य महोजसौ ॥४॥

महावीर के वीर शक्ति व वीर कान्त नामक दो सुन्दर पुत्र हैं और सुवीर के विद्या कान्त व सूर्य कान्त ये दो महा पराक्रमी पुत्र हैं ॥४।

राज्ञस्तु विष्णु भक्तस्य पत्नी चन्द्रकरा शुभा ॥
तस्यां जाता सुन्दराङ्गी पुत्री त्वेका सुरञ्जसा ॥५॥

राजा विष्णुभक्त की श्री चन्द्र करा नाम की सुन्दर पत्नी है उनसे सुन्दर अंग वाली एक सुरंजसा नाम की पुत्री उत्पन्न हुई ।५॥

अथरजो महावीर स्तस्यभार्य्या सुखावली ॥
तस्यां जाता तस्यपुत्री सुकला नाम तापिसा ॥६।

छोटे भाई महावीर की पत्नी सुखावली नाम की है उन से सुकला नाम की पुत्री हुई जो नाम से ही सुन्दर कलावता है ।६।

द्वितीयस्य सुवीरस्य भार्य्या चन्द्रावली वरा ॥
तस्यां जाता कुमार्य्येका तस्य नाम्ना पिचन्द्रमा ॥७॥

दूसरे भाई सुवीर की पत्नि चन्द्रावली नाम की है उन से एक कन्या उत्पन्न हुई जिसका नाम चन्द्रभा है ।७॥

परस्परं तु ता स्तिस्रो बभूवुः प्रीति संयुताः ॥
क्रीडन्त्यः स्वङ्गणे सर्वाः मातृणां मोद मादधुः ॥८॥

सुरञ्जसा, सुकला व चन्द्रमा ये तीनों कन्याएं परस्पर अत्यन्त प्रेम रखने वाली; आँगन में खेलती हुई अपनी माताओं को आनन्द देती हैं ॥८॥

प्राप्ते चैवाष्टमे वर्षे तासां सद्वर प्राप्तये ॥
तदा तासां मातृ भिश्च योजिताः शङ्करार्चने ॥९॥
राजभिः पूर्वजै स्तस्य विष्णुभक्तस्य पूजितम् ॥
नाम्ना वाणे श्वरंलिंग मुमा युक्तं वरप्रदम् ॥१०॥

इस प्रकार आठ वर्ष बीतने पर इन तीनों के लिए वर की कामना से इन की माताओंने इन तीनों को श्री शंकर जी की पूजा में नियोजित किया (लगाया)। जो शंकर जी बाणेश्वर नाम से विष्णुभक्त के पूर्वज राजाओंमें से परम्परागत पूजित होते आए हैं, पार्वती जी के सहित वर देने वाले उन श्री शंकर जी के लिङ्ग की पूजा करने के लिए ॥१०॥

मातृभिः प्रेरिता स्तिस्रः सखीगण सहस्रकैः ॥
आगत्य मन्दिरे तत्र कुर्वन्ति शिव पूजनम् ॥११॥
सखीनां शिक्षया कृत्वा सपर्य्यां विधिना हिताः ॥
पुनस्तत्र वने तत्र खेलन्ति मृगपक्षिभिः ॥१२॥

माताओं ने तीनों कन्याओं को हजारों सखियों के साथ भेजा। उन तीनों कन्याओं ने श्री शंकर जी के मन्दिर में आकर पूजन किया। सखियों ने शिक्षा देकर पूजा की सब विधि बतायी इसके बाद बगीचा में मृग पक्षी आदिकों से खेलने के लिए आयीं ॥१२॥

एकदा स्वेच्छया तत्र ह्यागतो मुनिनारदः ॥
तं प्रणमुश्च ता स्तिस्रः सखीनां शिक्षया पुनः ॥१३॥
दत्वा शिषातु देवर्षि दृष्ट्वा सर्वाति शोभनाः ॥
पश्यमाना हस्तरेखां स्तासां सखीश्च ह्युक्तवान् ॥१४॥

इस प्रकार किसी समय स्वेच्छा चारी श्री नारद मुनि वहाँ आ पहुँचे। सखियों की शिक्षासे तीनों कन्याओं ने उनको प्रणाम किया। देवर्षि नारद ने अति सुन्दरी उन कन्याओं को देखकर अशीर्वाद दिया और उनकी हस्त रेखाओं को देखने लगे और उनकी सखियों से बोले ॥१४॥

शिवार्चन प्रभावेन पूर्वमासां वरं शिवम् ॥
रामाख्यंलिखितं हस्ते विधिना तद्भविष्यति ॥१५॥

इन तीनों के शिव-पूजन प्रभाव से श्री शंकर जी ने इन कन्याओं के लिए पहले ही श्री राम नामक इनके पति होंगे ऐसा इनके हाथ में लिख दिया है और विधाता के विधान से यही बात सत्य होगी ॥१५॥

एवं मुने र्वचः श्रुत्वा सख्यः तासां महत्तराः ॥
कथं कुत्र हि को रामः पप्रच्छुर्मुनि सत्तम् ॥१६॥

इस प्रकार मुनि के वचन को सुनकर उन सब सखियों में जो प्रधान सखी है उसने मुनि श्रेष्ठ श्री नारद जी से पूछा-कब विवाह होगा ? कौन वे राम जी हैं ? कहाँ रहते हैं ? ॥१६॥

नारद उवाच

चक्रवर्ति महाराजोऽयोध्यायां राजते प्रभुः ॥
तस्य ज्येष्ठ कुमारो सौ श्याम सुन्दर विग्रहः ॥१७॥

श्री नारद जी बोले कि श्री अयोध्या जी म [illegible] के राजा श्री दशरथ जी नाम से चक्रवर्ती हैं, उनके ज्येष्ठ कुमार श्याम शरीर वाले बड़े ही सुन्दर हैं ॥१७॥

काम कोठि तिरस्कृत्य राजते रूप सञ्चयः ॥
नित्यं वय किशोरोस्ति नायकः श्रेष्ठ लक्षणैः ॥१८॥

इतने अधिक सुन्दर हैं कि करोड़ों काम को भी अपने रूप संचय से तिरस्कृत किए हुए हैं। उनकी नित्य किशोरावस्था है; वे नायक लक्षणों में सर्वश्रेष्ठ लक्षण वाले हैं ॥१८॥

एवं तासां सखी मुक्त्वा आकाशं समुनिर्गतः ॥
तास्तु सर्वाः सखीभिश्च सहर्षं गृह मायियुः ॥१९॥

इस प्रकार उन तीनों कन्याओं की सब सखियों में मुख्य सखी को ऐसा कह करके श्री नारद आकाश मार्ग से चले गए। वे तीनों कन्याएं समाज सहित अत्यन्त हर्षित होकर अपने घर आ गयीं ॥१९॥

तद्वृत्तान्तं सखी तासां गृह मागत्य मातृषु ॥
जगाद मुनिना चोक्तं श्रुतं राज्ञा पितस्तथा ॥२०॥

उन सबों की उस मुख्य सखी ने यह सारा वृत्तान्त घर में आकर माताओं से कह दिया। माताओं ने मुनि के कहे इस समाचारको अपने पतियों से कह दिया ॥२०॥

वर्षे व्यतीते राजातु तासा मुद्वाह हेतवे ॥
कृत्वाच मन्त्रिसिर्मन्त्रगुरुणा पण्डितेन च ॥२१॥

कुछ वर्ष बीतने पर महाराज ने इन कन्याओं के विवाह के लिए अपने गुरु, मन्त्री और पण्डितों के समाज में विचार किया ॥२१॥

लिखित्वा च स्वहस्तेन सहस्र सतस स्स्तुतिः ॥
पत्रोदशरथे राज्ञि प्रेषितो हि स्वयं गुरुः ॥२२॥

तब अपने हाथ से हजारों प्रकार की स्तुति लिखकर अपने गुरु के द्वारा महाराज दशरथ जी के लिए पत्र भेजा ॥२२॥

आजगामाशु सविप्रोऽयोध्यायां राज मन्दिरे ॥
तत्तासा पत्रिका तेन हस्तेऽयोध्या पते स्तदा ॥२३॥
वाचयित्वा पत्रिकां तु विप्रस्य पूजनं कृतम् ॥
वशिष्ठं पुनराहूय तस्मैस्सर्वं निवेदितम् ॥२४॥

वे ब्राह्मण भी शीघ्र श्री अयोध्या जी में आकर राजमहल में प्रवेश किये। वह पत्र अयोध्या पति महाराज के हाथ में दिया। श्री महाराज दशरथ जी ने उस पत्र को पढ़वाकर सुना और उस ब्राह्मण का पूजन किया। इसके बाद श्री वशिष्ठ जी को बुलवाया और ये सब समाचार सुनाए (कहे) ॥२३-२४॥

Scanned by CamScanner

पुनः सुमन्तं म हूय ाज्ञा मन्त्रो दृढी कृतः ॥
स्वहस्त पत्रिकं द ा प्रे तो हर्षवां द्विजः ॥२५॥

फिर श्री सुमंत्र जी को बुलवा कर इस निश्चय ो दृढ़ किया और अपने हाथ से एक स्वीकृति पत्र लिखकर उस ब्राह्मण को वापस किया ॥२५॥

सदिनै बहुभिर्विप्रः प्राप्तोबाणवतीं पुरीं ॥
पत्रिकां कोशलेन्द्रस्य विष्णुभक्त करेददौ ॥२६॥

ब्राह्मण भी बड़े प्रसन्न हुए। बहुत दिनों में वह ब्राह्मण बाणवती नगरी पहुँचे और विष्णुभक्त महाराज के हाथ में कोशलेन्द्र महाराज का पत्र दिया ॥२६॥

भ्रातृभिः सहितो राजा वाचयित्वा तु पत्रिकां ॥
वाचिकं श्रावितं सर्व मवरोधे पुरोधसा ॥२७॥

राजा ने भी उस पत्र को भाइयों सहित पढ़ वाया। फिर उपरोहित जी ने इस समाचार को रनिवास में सुनाया ॥२७॥

अर्चयित्वागणेशंहि नार्य्यो गानं च चक्रिरे ॥
सम्बन्ध सदृशं स्त्रीणां पुरुषाणां हि योगिकम् ॥२८॥

राजा ने गणेश जी का पूजन किया और नारियों ने गान किया; वह गान स्त्री और पुरुषों के संबन्ध योग सदृश हुआ ॥२८॥

ततो निमन्त्रितो राज्ञा विष्णुभक्तेन बान्धवाः ॥
मण्डलं स्थातु राजानः कन्यादानमहोत्सवे ॥२९॥

उसके बाद राजा विष्णुभक्त जी ने अपने बन्धु-बान्धवों को निमन्त्रित किया और विवाह-मण्डप बनवा कर कन्यादान का महोत्सव आरम्भ किया ॥२९॥

गानै वाद्यै र्दक्षिणाभि ब्राह्मणेभ्यः समन्ततः ॥
प्रदत्तं रामचन्द्राय कन्यारत्नं त्रयं शुभम् ।३०॥

गान, बजान, दक्षिणादि से ब्राह्मणों द्वारा श्री रामचन्द्रजी के लिए कन्यारूपी तीनों रत्नों का सुन्दर विधान से दान किया ॥३०।

तासां सुदाये कन्यानां ह्युत्तमानां महीक्षता ॥
सुधेनूनां मेक लक्षं वालधी शृंगभूषितम् ॥३१॥

महाराज विष्णुभक्त ने सुन्दर दमादों (जमाइयों) के लिए उत्तम कन्याओं का उत्तम विधि से दान किया और दहेज में एक लाख गाय जिनके पूँछ और सींग उत्तम तरह से भूषित थे ॥३१॥

ककुद्मानां वृषभाना मेकलक्षश्च भूषितम् ॥
अश्वानां च भूषितानां रथाना मेक लक्षकम् ॥३२॥

तथा एक लाख बैल सुन्दर ककु (जूड़) वाले और सुन्दर भूषणों से भूषित दिये। और एक लाख सुन्दर भूषणों से भूषित घोड़ा वाले रथ ॥३२॥

रथैस्त्रिगुण मश्वानां समूहं रत्न भूषितम् ॥

तथागज समूहं तु दत्तं स्यन्दन सम्मितम् ॥३३॥

और रथों से तीन गुन अधिक अर्थात् तीन लाख सुन्दर भूषणों से भूषित घोड़े व इसी प्रकार हाथियों के रथ-समूह को भी दिया ॥३३॥

भारवाहो प्यन श्वोष्ट्रा स्तेषां पुष्टातिका सतां ॥

ददौ स दश लक्षाणिभारयुक्तानि वस्तुनाम् ॥३४॥

बोझा ढोने के लिए खच्चर तथा ऊँटों को भी दिया जो उत्तम पुष्ट और श्रेष्ठ थे । इस प्रकार वस्तुओं के बोझाओं से लदे हुए इनकी संख्या दस लाख है ॥३४॥

सहस्रं तु विद्रु माणां भारा एव मवेध्य कां: ॥

मुक्तानां तन्मिता भारा अन्येषां मणि जातिनाम् ॥३५॥

एक हजार भार उत्तम विद्रु म मणियों का है और इतना ही मुक्तामणियों का भार तथा अन्य उत्तम जाति के मणियों के भी बहुत भार हैं ॥३५॥

पुनर्विद्रु म मुक्तानां देवछन्दा श्च गोस्तनाः॥

गुस्साधका गुत्सका श्च ददौ दाये नराधिपः ॥३६॥

और विद्रु म तथा मुक्ताओं के सौलरों वाले हार, ६४ लरों वाले हार और ३२ लरों वाले हार, इस प्रकार के हारों के भी भार अपने प्रिय दमादों (जमाइयों) के लिए महाराज विष्णु भक्त ने दिए॥३६॥

विस्तस्य कुरु विस्तस्य भारा शत सहस्रकम् ॥

सुदाये तेन पुत्रीणां दत्ता मुक्ताभिमानिना ॥३७॥

ये सब हार कोई सोलह मासा के, कोई ६४ मासा के बहुत बड़े हार होने पर भी हल्के हैं । इस प्रकार हल्के भूषणों सौ हजार भार अपने सुन्दर जमाई व पुत्रियों के लिए दिए क्योंकि आप की समुद्रतट की राजधानी होने से आप मुक्ता और मणियों के अधिक अभिमानी हैं ॥३७॥

अक्षौहिण्यो पि तिस्र श्च समन्ता त्सज्जनान्विताः ॥

दासीदास गणा एवं पञ्च लक्षैश्च सम्मिताः ॥३८॥

और तीन अक्षौहिणी सेना सब प्रकार के अस्त्र-शस्त्र, वस्त्राभूषणों से सजी हुई तथा बहुत से दास दासी गण दिए । इस प्रकार पाँच लाख की संख्या में सेवकों को दिया ॥३८॥

एवं सर्वं सज्जयित्वा भ्रातृभिः सहित स्तदा ॥

गुरुणा ब्राह्मणैः सद्भिरमात्यैश्च समावृतः ॥३९॥

इस प्रकार महाराज विष्णुभक्त जी अपने भ्राताओं के सहित इस सब दहेज की सम्पत्ति को सुन्दर सजावट पूर्वक देकर के फिर अपने पुरोहित, ब्राह्मण, सज्जन और मन्त्री आदिकों के समाज से घिरे हुए ॥३९॥

प्राप्तो वर निवाशे च तं दृष्ट्वा कौशलेश्वरः ॥

बद्धाञ्जलि मदूरं हि समुत्थितः प्रणम्य च ॥४०॥

महाराज कौशलेश्वर जी के दर्शन हेतु जनवासे में गए । दूर से हाथ जोड़कर महाराज को दर्शन किया, प्रणाम किया । महाराज चक्रवर्ति दशरथ जी ने उठकर स्वागत किया ॥४०॥

Scanned by CamScanner

विष्णुभक्त उवाच

कृतो ह्यनुग्रहोदेयं मयि त्वया महात्मना ॥
मदर्थं ह्यागतो दूरं निर्हेतुक कृपानिधे ॥४१॥

श्री विष्णुभक्त जी बोले कि हे महाराज ? आप बहुत बड़े महात्मा हैं। हे देव ! आपने मेरे ऊपर बहुत बड़ा अनुग्रह किया। इतने दूर देश से मेरे लिए निर्हेतुकी कृपा करने के लिये आए ॥४१॥

प्रति कर्तुं तु हे देव न शक्तः शतं जन्मसु ॥
तव दासस्य दासस्य दासोहं बन्धुभिस्सदा ॥४२॥

हे देव ! आप कृपा के समुद्र हैं मैं सौ जन्म में भी आप की इस कृपा का उपकार पूरा नहीं कर सकता। मैं अपने भाइयों के सहित आपके दासों का दास का दास हूँ ॥४२॥

महर्षिस्तु वशिष्ठोय मस्माकं कुल दैवतम् ॥
सुमन्तस्तु यथा त्वं मे नात्रास्ति च प्रसंशनम् ॥४३॥

ये महर्षि श्री वसिष्ठ जी महाराज मेरे कुल के देवता हैं। ये महाराज सुमन्त्र भी आपकी ही तरह से मेरे स्वामी हैं। अब मैं आपकी क्या प्रसंशा कर सकता हूँ ॥४३॥

समुद्राय समुद्रस्य जलेनाञ्जलिकं यथा ॥
दीयते तत्प्रकारेणोरी कर्तुं हि तवो चितम् ॥४४॥

समुद्र का ही जल समुद्र में ही अञ्जलि देने की तरह से तारण होने के लिये जो कुछ मैंने आपको भेंट किया उसको स्वीकार करना आपको उचित है ॥४४।

सर्वस्तु स्विदं महाराज चक्रवर्ति नराधिप ॥
सैवमुक्त्वा विष्णु भक्तो बद्धाञ्जलि मुपस्थितः ॥४५॥

हे महाराज ! आप तो चक्रवर्ती राजा हैं। ये सब सम्पत्ति आप की ही है ऐसा कह कर महाराज विष्णु भक्त हाथ जोड़ कर खड़े हो गए ॥४५॥

कौशलेन्द्रो वशिष्ठश्च सुमन्तो न्ये सभासदाः ॥
तस्यैवं वचनं श्रुत्वा ममज्जुः प्रेम वारिधौ ॥४६॥

महाराज विष्णु भक्त जी के इस प्रकार के वचनों का सुनकर महाराज श्री कौसलेन्द्र जी व सुमन्त्र जी आदि सभी सभासद् प्रेम के समुद्र में डूब गए ॥४६॥

पुनस्तु विष्णुभक्तेन वशिष्टा द्या महर्षयः ॥
पुजिता भूषणै वस्त्रैवित्तस्य बहु सञ्चयैः ॥४७॥

फिर महाराज विष्णुभक्त जी ने श्री वसिष्ठादि महार्षियों की वस्त्र भूषण व धन के बहुत संचय (समूह) से पूजा की ॥४७॥

अर्घादि षोडशैः कृत्वा भ्रातृभिः सहितः पुनः ॥
सारथावरजानस्य वृत्तिकाभट्टमागधाः ॥४८॥

तथा अर्घ पाद्यादि षोडशी प्रकार से भाइयों सहित पूजा की। उसके बाद सूत मागध भाटादिकों द्वारा जनवासे में स्तुति-उत्सव पूर्वक महाराज जी दशरथ का स्वागत करने पर रथ पालकी आदि बहुत सी सम्पत्तियों को ॥४८॥

यथाभिवाञ्छितं वस्तु ददौ तेभ्यः परं यशा ॥
यूयं तु कौशलेन्द्रस्य सार्वभौमस्य वृत्तिकाः ॥४९॥

जिसने जो माँगा उसको वही वस्तु देकर भाटादिकों को प्रसन्न किया और यह कहा कि आप लोग सार्वभौम चक्रवर्ति-महाराज श्री दशरथ जी के हाथ से इनामादिक सम्पत्ति पाने वाले हैं ॥४९॥

तेभ्यस्त्वहं किं ददामि गृहस्थो धन दुर्बलः ॥
एवञ्चानुनयं श्रुत्य तं प्रशंशुस्तु याचकाः ॥५०॥

इसी प्रकार के आप लोगों को गृहस्थावस्था में रहने वाला, धन से दुर्लभ हुआ मैं आपको क्या दे सकता हूँ। इस प्रकार विष्णुभक्त जी की अनुनय- विनय को सुनकर सभी याचक गण आपकी प्रसंसा करने लगे ।।५०॥

सर्वमेवंच सम्पाद्य गेरे यानं वरं यशाः ॥
पुनः कौशल नाथस्य शभायां मायया हि सः ॥५१॥

इस प्रकार सब बरातियों को सम्यक् प्रकार संतुष्ट करके फिर श्री विष्णुभक्त जी महाराज श्री कौसलेश जी की सभा में आ पहुँचे ॥५१॥

एतत्काले वरोधात्तु जन्यान निवासके ॥
मिष्ठान्न मुपहाराय राज्ञापि प्रेषितं वहु ॥५२॥

इसी समय रनिवास से जनवासे के लिए विविध प्रकार की मिठाई आदि उपहार-सामग्री विष्णु भक्त की महारानी द्वारा भेजा हुआ आ पहुँचा ॥५२॥

पूपकानि मोदकानि दधिभाण्डानि कोटिशः ॥
गर्भमिष्टत्वमिष्टादि फलानाञ्च समूहकम् ॥५३॥

उस उपहार में पूआ, लड्डू, दही गुझिया, धर्की, फल आदि समूहों के करोड़ों भान्डे भर भर के आए ॥५३॥

तयाचोपभोजनाय रामं जामातरं तदा ॥
समानेतुं स्व कुमारो वीरकान्तो हि प्रेषित: ॥५४॥

महारानी जी ने अपने कुमार वीरकान्त को-"जमाता श्री राम जी रनिवास में ही कलेऊ करेंगे; बुलाकर ले आओ"—ऐसा कह करके भेजा ॥५४॥

तेन शाकं लक्ष्मणेन सहितो रघुनन्दनः ॥
आजगाम कौतुकेन वीथ्यां वीथ्यां महद्गृहम् ॥५५॥

वीरकान्त के साथ श्री लक्ष्मण जी के सहित श्री रघुनाथ जी गली गली में दुलहा के योग्य उत्सव कौतुक पूर्वक विशाल रनिवास में आए ॥५५॥

तदा च पुर वाशिन्यः स्त्रियो त्यन्त मनोहराः ॥
इति श्रुत्वा प्रधावन्तियथा तत्तथा त्वराः ॥५६॥

गलियों में कौसिलवती नगरी की रहने वाली अत्यन्त मनोहर स्त्रियाएँ इस समाचार को सुनकर अत्यन्त शीघ्रता से जो जैसी थीं वैसे ही उठकर चली आयीं ॥५६॥

अट्टेषु च गवाक्षेषु काश्चि द्वारेष्वनावृताः ॥
शृङ्गारमेव कुर्वन्त्यः स्थिताः कट्यम्बरेण वै ॥५७॥
कर्तुमारभ्यसंद्भूषां काश्चि चन्द्र शुभाननाः ॥
श्रुत्वातमागतं वीथ्यां प्रधावन्ति यथा तथा ॥५८॥

कोई छत पर से कोई छज्जाओं पर से, कोई फाटकों पर बिना पर्दा के झाँकने लगीं। कोई शृङ्गार ही करती हुई कटि वस्त्र पहनती हुई, कोई भूषणों को पहनती हुई, कोई सुन्दर मुख वाली शृङ्गार करना आरम्भ ही की हुई थी, गलियों में श्री राम जी आ रहे हैं सुनते ही जैसी की तैसी दौड़ आयी ॥५७-५८॥

कचिद्कुर्वन्त्यंगराग मेकस्मिन्नेत्र अञ्जनम् ॥
सा श्रुत्य तस्या गमनं नदत्तं द्वय के तदा ॥५६॥

कोई अंग में अंगराज लेपन कर रही थी और कोई एक ही आँख में अंजन लगाई हुई थी श्री राम जी आ रहे हैं ऐसा सुनने पर उसने दूसरी आँख में अञ्जन नहीं लगाया और शृङ्गार नहीं किया ॥५६॥

काचिच्छृङ्गार साहित्यं प्रशार्य दर्पणं करे ॥
गृहीत्वे वागतं श्रुत्य रामं द्वारे प्रधावति ॥६०॥

कोई शृङ्गार करने के लिए शृङ्गार-सामग्री को फैलायी हुई थी; वह हाथ में दर्पण लेकर श्री राम जी आ गए हैं ऐसा सुनते ही द्वार पर दौड़ आयी ॥६०॥

स्व कण्ठे धारितुं काचिद्वाला वाला म्बुज स्रजम् ॥
हस्ते चादाय चाकर्ण्य प्रधावतिसमागतम् ॥६१॥

कोई बाला कमल की माला को अपने कण्ठ में पहनने के लिए अपने हाथ में लिए हुई राम जी आ गए हैं सुनते ही दौड़ पड़ी ॥६१॥

पश्यन्तीनां रामचन्द्र मुखं चन्द्र शतप्रभम् ॥
रथ्यां रथ्यां हि नारीणाँ सर्वतो विस्मृता स्मृतिः ॥६२॥

सैकड़ों चन्द्रमाओं को लज्जित करने वाले प्रकाशमान मुख चन्द्र वाले श्री रामचन्द्र जी गली २ में सबके चित्त को चुरा रहे हैं। सब स्त्रियाँ अपने शरीर की व्यवस्था को भूली हुई होगई ॥६२॥

रथ्यासु दक्षिणे वामे स्वस्य रामो रघूद्वहः ॥
हर्म्येषु शशिनां पंक्तिः पश्य न्नन्द्धुति शंकुलम् ॥६३॥

रघु श्रेष्ठ श्री राम जी अपने दाहिना तरह और बाँए तरफ ऊँचे २ महलों के छज्जाओं, छत, फाटकों पर चन्द्रमुखियों के प्रकाशमान मुख चन्द्र पंक्तियों को अत्यन्त सघन देखते हुए चले जा रहे हैं ॥६३॥

विवाह वेश संशोभी श्यामः साञ्जन लोचनः ॥
लक्ता रक्त पाद हस्तो विवेश श्वासुरंगृहम् ॥६४॥

नेत्रों में अञ्जन लगाए हुए चरणों में महावर लगाए हुए, हाथों में मेंहदी लगाए हुए, विवाह के शृङ्गार से सुन्दर शोभित, श्याम वर्ण श्री राम जी ने अपने ससुर के घर में प्रवेश किया ॥६४॥

Scanned by CamScanner

गायन्त्यश्च हसन्त्यश्च धावन्त्यश्च शुभाननाः ॥
नीराजितुं वरं रामंसर्वा राज कुलस्त्रियः ॥६५॥

सुन्दर मुख चन्द्र वाली राजकुलस्त्रियां कोई गान करती हुई कोई हँसती हुई, श्री राम जी को द्वार पर से आरती करके स्वागत् करने के लिए दौड़ कर आ रही हैं ॥६५॥

कुंकुमाक्षत पुष्पाणि धृत्वा काञ्चन पात्रके ॥
सुवासिन्योपि वृद्धाश्च शीघ्रं प्राङ्गण मागताः ॥६६॥

उनमें कोई वृद्धा हैं, कोई बाला हैं, कोई युवती हैं हाथों में चन्दन, कुंकुम, अक्षत, पुष्प आदि माङ्गलिक पदार्थों से भरे हुए स्वर्ण पत्रों को लेकर शीघ्रता से प्रांगण में आयीं ॥६६॥

नीराजितस्तु जामाता श्वश्रूभिः प्राङ्गणे तदा ॥
महद्वेष्मान्तरे नीतोभ्रातृभि स्सखिभिश्चसः ॥६७॥

इस प्रकार प्रांगण में सासुओं से स्वागत आरती विधान पूर्वक महान् महल में सखाओं व भ्राताओं सहित श्री राम जी आए ॥६७॥

श्वश्रूभिरादृतः प्रेम्णा मोहनाङ्गो रघूद्वहः ॥
सखिभिर्भ्रातृ मिर्युक्तः श्याले हस्य विलासिभिः ॥६८॥

सासुओं ने अत्यन्त मनो हर अंग वाले श्री रघुनाथ जी का महत अनुराग से स्वागत् किया। सखा भाई और सालादिकों के साथ विविध हास्य-कौतुक हुए। ६८॥

नारीणां रसवद्गानं शृण्व न्कृत्वोपभोजनम् ॥
श्वश्रूदत्तानि वासांसिभूषणानि बहूनि च ॥६९॥

नारियों के सुन्दर रसीले गानों को सुनते हुए कलेऊ करके, सासु के दिए हुए बहुत से वस्त्र भूषणों को ॥६९॥

परिधाय सर्वं श्रीमा न्विहरन्श्वासुरं गृहम् ॥
वरजान निवासेसौ वर वेषे समागतः ॥७०॥

महान शोभा सम्पन्न श्री राम जी धारण करके ससुर के घर में विहार करके उसी दुल्हा के वेष से जनवासे में आ पहुँचे ॥७०॥

तदा हिविष्णु भक्तेन गुण चातुर्य्य शालिना ॥
विज्ञापितौ प्रश्रयाति वशिष्ट कौशलेश्वरौ ॥७१॥

उस समय श्री विष्णु भक्त जी ने अपने गुणों से व बड़ी नम्रता से श्री वसिष्ठ जी और श्री कौसलेश्वर महाराज को यह जनाया कि ॥७१॥

विष्णु भक्त उवाच

कौशलेन्द्र महाराज मदर्थे यद्यपरिश्रमः ॥
जनानुकम्पिना देव कर्तव्यः सततं त्वया ॥७२॥

हे कौसलेन्द्र महाराज मेरे लिए आपने बहुत परिश्रम किया। आप अपने जनों पर अनुकम्पा करने वाले हैं इसी प्रकार आगे भी हमेशा के लिए करते रहना चाहिए ॥७२॥

Scanned by CamScanner

अन्तः पुरेपिभवतां दर्शनं याति लालसा ॥
पुनः कुत्र कुतः कस्मा द्भवतां योग दुर्लभः ॥७३॥

मेरे अन्तः (रनिवास) में भी आपके दर्शन की बड़ी लालसा लगी हुई है आगे कब ? कहाँ ? कैसे ? यह दुर्लभ योग प्राप्त हो सकेगा ? ॥७३॥

एवमुक्त्वा विष्णु भक्तः प्रशंसा पूर्णया गिरा ॥
आश्वासितो बशिष्ठेन रथेनेगृह मागतः ॥७४॥

इस प्रकार राजा विष्णुभक्त जी के कहने पर श्री वसिष्ठ जी ने प्रसंसा पूर्वक वाणी से आश्वासन दिया और विष्णुभक्त जी रथ में बैठा कर अपने घर में लिवा आए ॥७४॥

पुनः सम्पाद्य सामग्रीं तमानेतु नरेश्वरः ॥
स्वयमेव गतः प्रेम्णा सज्जयित्वा तु वाहिनीम् ॥७५॥

महाराज चक्रवर्ती जी को अपने घर में बुलवाने का इन्तजाम व सब सामग्री तैयार करके फिर सवारियों की सजा कर प्रेम पूर्वक लिवा लाने के लिए जनवासे में स्वयं गए ॥७५॥

अत्युक्त मौक्तिका भ्राजदुभूषांगाः सद्विमान काः ॥
सौन्त्वार्क मण्डलाभास्तु चलन्त इव पर्वताः ॥७६॥

सुन्दर भूषणों से भूषित ऊँचे गद्दी तकिया वाले श्रेष्ठ विमान जो सूर्य के समान प्रकाश करने वाले हैं चलते हुए पर्वतों की तरह ऊँचे॥ ७६॥

बहूनिसुख यानानि सुचमाश्वानि भूषिताः ॥
दासैस्तु चामरै से व्याः गत्या सांगित ताण्डवाः ॥७७॥

और बहुत से सुखपाल उत्तम भूषणों से सजे घोड़ा वाले रथ जिनमें दास लोग चंवर आदिक से सेवा कर रहे हैं। इस प्रकार की सवारियाँ जिनमें संगीत (नाचना, गाना, बजाना) व तायडवादि नृत्यों का भी इन्तजाम है ॥७७॥

खचिता काञ्चना राजताः सु वरूथिनः ॥
उत्तमैर्व हयैर्युक्ताः मुक्ता रत्नविभूषितैः ॥७८॥

और सवारियों के अगल बगल चाँदी स्वर्णादि भूषणों से सुन्दर सजी हुई पैदल सेना व उत्तम घोड़े मुक्ता रत्न रचित भूषणों से युक्त चल रहे हैं ।७८॥

वास्त्राः काम्बला बहुशः सूत सेवक सम्वृताः ॥
संशिष्टा स्तेजसायुक्ता रथाश्च किङ्किणी क्वणाः ॥७९॥

और विविध प्रकार के वस्त्र व कम्बल तथा सूत, मागधादिक सेवकों से घिरे हुए तथा सुन्दर प्रकाशमान तेज से युक्त रथ जिनमें किंकिणियों का कलरव मचा है ।७९॥

सुश्रूपकांति चतुरा दूताः सद्रूपभूषिताः ॥
छत्रव्यजनान्येके च चामरा श्चापि केचन ॥८०॥

और सुन्दर रूपवान भूषणों से भूषित दूत लोग जो इधर से उधर समाचार देने वाले चतुर हैं और छत्रव्यंजन चंवरादि लिए हुए बहुत से सेवक ॥८०

आमोदीसम्पुटान्येके सौवर्णानिसुसेवनाः ।।
गृहीत्वाः तत्पराः सर्वे स्वर्ण दण्ड धरा अपि ।।८१।।

पान के डिब्बे और मिठाइयों के स्वर्णथार सेवा के लिए, लिए हुए सावधान हैं और बहुतसे सेवक स्वर्ण दण्ड लिए हुए ।।८१।।

एवं सर्वं समादाय तदा वाणपुरीश्वरः ।।
प्राप्त शीघ्रं तन्निवाशे विकुर्वाणे वरंयशाः ।।८२।।

इस प्रकार सब सामग्रियों के सहित बाणवती पुरी के महाराज श्री विष्णु भक्त श्री अवधेश महाराज के समीप पहुँच कर सुन्दर कीर्तिमान् शब्दों से प्रार्थना करते हुए ।।८२।।

वशिष्टादी न्यथायोग्ये वाहनेस्थाप्य सादरात् ।।
तदाज्ञया विष्णुभक्तः हठा द्वै वाहनेस्थितः ।।८३।।

श्री वशिष्ठ आदि सब को यथा योग्य वाहनों पर आदर पूर्वक बैठा करके तथा उनकी आज्ञा पाकर विष्णु भक्त भी बड़े हठ पूर्वक सवारी पर बैठे ।।८३।।

निवासाद्विष्णुभक्तस्य नृपस्यावास सन्मुखम् ।।
कौशलेशोपि चलति प्र बभूव कुतूहलम् ।।८४।।

इस प्रकार चक्रवती कोसलेश जी अपने निवास स्थान से विष्णुभक्त जी के घर में जाने के लिए चल पड़े । रास्ते में बड़ा कौतूहल हुआ ।।८४।

भेरीतूर्य पणवानां मूर्च्छित श्च महाध्वनिः ।।
रथानां किङ्किणी क्वाणाः गजानां घण्ट नादकाः ।।८५।।

भेरी नगाड़ा, दुन्दुभी, तूरी पणव आदि बहुत से बाजाओं की महान् आवाज उठी तथा रथों की किंकिणी-क्वाण-कल्लोल, हाथियों के घन्टों का नाद ।।८५।।

अश्वानांभूषणक्वाणा: पूरिता दूरतो दिशः ।।
एतत्सर्वमति क्रान्त्वा श्रूयते बन्दिनां गिरः ।।८६।।

घोड़ों की किंकिणी आदि भूषणों का नाद तमाम दिशाओं में दूर तक छाया हुआ है । इस आवाज का भी अतिक्रमण करके बन्दी, भाट आदिकों का स्तुति-आवाज और ऊँची सुन पड़ रही है ।।८६।।

रथ्यासां दक्षिणे वामे समन्ता च्छ्रेणिशोभिताः ।।
भूषितांगा वरा नार्यो महत्प्रासाद द्वारिषु ।।८७।।
तस्थुर्ष्योऽतीव शोभाढ्या दर्शितुं रघुनन्दनम् ।।
बालवृद्ध युवानोऽपि नरा रथ्यां प्रतिस्थिताः ।।८८।।

गलियों में महाराज की सवारी के दाहिने, बाएं तरफ दूर-तक ये सब पंक्तियाँ अति शोभित हो रही हैं और दोनों के ऊँचे महलों के छत, छज्जा, द्वारों पर श्रेष्ठ भूषणों से भूषिता श्रेष्ठ नारियाँ महाराज दशरथ जी के दर्शन के लिए बड़ी शोभा सजायी हुई खड़ी है । बाल; वृद्ध; युवा पुरुष भी गलियों में बगल बगल खड़े देख रहे हैं ।।८८।।

Scanned by CamScanner

अनावृताइ द्वारीषु सुवासिन्यः शुभाननाः ॥
हस्ताम्बुजे समादायस्थिता नारीजनं विधिम् ॥८९॥

महल गली दरवाजों पर भीड़ से कहीं भी जगह खाली नहीं है। छत, छज्जा, द्वारों पर कुँआरी और सुवासिनी सुन्दर मुखचन्द्र वाली स्त्रियाँ हस्त कमलों में आरती के थाल सजी हुए लिए हुई हैं ॥८९॥

पृष्टे पृष्टे तु विरह आग्रे चाग्रे महोत्सवम् ॥
प्रवर्तय न्वरीशमी जगाम श्वासुरंगृहम् ॥९०॥

इस प्रकार महाराज चक्रवर्ती जी के पीछे २ तो विरह, बेचैनी उत्पन्न हो रही और आगे २ महान् उत्सव हो रहा है। इस प्रकार दुल्हा भेष में श्री राम जी अपने पिता जी के साथ ससुर के घर में गए ॥९०॥

निरीक्ष रामचन्द्रस्य मुखचन्द्र मनोहरम् ॥
नाशा मौक्तिक संयुक्तं न केषां शरीर स्मृतिः ॥९१॥

श्री राम चन्द्र जी का मनोहर मुखचन्द्र नासामणि व घुंघराले केश संयुक्त देख करके स्त्रियाँ शरीर की दशा भूल रही हैं। ९१॥

वर्षन्ति पुष्पमाल्यानि लाजा श्च मौक्तिकानिच ॥
निरीक्ष्यन्त्यो गवाक्षेभ्यो नार्यो नारी ज्यराघवम् । ९२॥

और फूलों की माला लावा (लाजा) व मणि मोतियों की वर्षा कर रही हैं इस प्रकार छज्जाओं पर से श्री रघुनाथ जी की आरती हो रही है ॥९२॥

एवं पुर जनानन्द वर्द्धं य न्वु हित प्रभम् ॥
काञ्चनाद्रि समाकार मुच श्रृङ्गाश्रश्लेषितम् ॥९३॥

इस प्रकार पुरजनों के आनन्द को बढ़ाते हुए महान् प्रकाश का जहां मण्डप बँधा है और पहाड़ के समान ऊँचे मेघों स आश्लेषित (आलिंगित) शिखर वाले ॥९३॥

मणि तोरण संकीर्णं पताकाध्वजभासितम् ॥
जनैराकुलितद्वारं मङ्गलार्थ विभूषितम् ॥९४॥

मणियों के तोरणों से सघन सजे हुए ध्वजा पताकादिकों से विभूषित महाराज विष्णुभक्त जी के रनिवास महल का द्वार मांगलिक वस्तुओं से भूषित जनों से भरा हुआ है ॥९४॥

दीपौषध्या इवारण्यं दीपमाल्यैश्च दर्शितम् ॥
ददर्शविष्णु भक्तस्य मन्दिरम् कौशलेश्वरः ॥९५॥

इस प्रकार द्वार पर दुल्हा को दीपमालाएँ दिखायी गई ऐसा प्रतीत होता कि मानों दीप औषधियों (संजीवनी बूटियों) का वन हो। इस प्रकार विष्णुभक्त के मन्दिर को महाराज कोसलेश ने देखा ॥९५॥

स्वस्यप्रासाद सानिध्यं समासाद्य नरेश्वरः ॥
रथा दवतीर्य्य शीघ्रं चतुरः शुश्रुषा कृतौ ॥९६॥

इस प्रकार अपने दरवाजे के समीप रथ को लाकर के श्री अवधेश महाराज को शीघ्र रथ से उतारा। बड़ी चतुरता पूर्वक सेवा की। ९६॥

हस्तावलम्बनं दत्वा गुरुसम्बन्धिनश्च सः ॥
विस्तार्यास्तरणं भूमौ रथादव ततारह ।९७॥

बसिष्ठ जी आदि को भी हाथ का अवलम्ब देकर बिस्तरा से बिछी हुई भूमि पर उतारा ॥९७॥

जनेषु क्षम्यतामेवं वदत्सु कौशलेश्वरम् ॥
दत्वा हस्तावलम्बञ्च गजादवततार सः ॥९८॥

"जन समूह की आप लोग क्षमा करके भीड़ को हटादें"—ऐसा कह करके महाराज दशरथ जी को हाथ का अवलम्ब देकर के हाथी पर से उतारा ॥९८॥

यावाञ्जन कंकणाढ्यो विवाहोष्णीष शोभितः ॥
नारीजितो वरो रामो द्वार्य्ये वस्त्रीगणैस्तदा ॥९९॥

विवाह की पगड़ी बाँधे हुए अञ्जन कङ्कन महावर आदि विवाहिक चिन्हों से शोभित दुल्हा श्री राम जी को स्त्री समाज ने दरवाजे पर ही आरती की ॥९९॥

सुगन्धावारिणा सिक्ते मार्गे पुष्पा वकीर्णिते ॥
• महार्ह वसने पादौ दधन्स गुरुणा समम् ॥१००॥

पुष्पों के पाँवड़े सुगन्ध जल से सिंचित मार्ग से विस कीमती बस्त्रों पर पाँव देकर गुरु महाराज के साथ ॥१००॥

सोमात्येन पित्रा चैव वाणेश्वर पुरः सरः ॥
वर स्तद् भोजन स्थानं विवेशान्तः पुरायनम् ॥१०१॥

तथा मन्त्री पिता जी के साथ व आगे २ विष्णुभक्त महाराज के चलते हुए इस प्रकार श्री राम जी अन्तः पुर के भोजन स्थान में पहुँचे। १०१॥

तदा च स्वर्ण केपात्रे पूज्यानां स्वयमेवहि ॥
प्रीत्या प्रक्षालितौ पादौ विष्णुभक्तेन धीमता ॥१०२

वहाँ पर पहले स्वर्ण के पात्रों से श्री विष्णुभक्त जी ने स्वयंहि प्रेम पूर्वक पूज्यों के चरण धोये ॥१०२॥

विकुर्वाणो विष्णुभक्तः पीठानि स्वर्णकानि तु ॥
यथोचितं सुविन्यस्ययुक्तानि कोमलांशुकैः ॥१०३॥

क्रमशः चरण धोने पर यथा योग्य स्वर्ण सिंहासनों पर सबको बैठाया जो सिंहासन पर उचित यथा योग्य कोमल बस्त्र बिछे हुए हैं ॥१०३॥

बध्वाञ्जलिं तु हे देव वरद प्रवर प्रभो ॥
इति सम्भाष्यासनेतु वशिष्ठः स्थापितो गुरुः ॥१०४॥

इस प्रकार बड़े बुद्धिमान श्री विष्णुभक्त जी ने सबको अलग २ बैठाकर बड़े स्नेह से हाथ जोड़कर सबका सम्मान किया और श्री बसिष्ट जी से बोले कि हे महाराज आप तो महान् बर दान देने वाले हैं। इस प्रकार आदरणीय शब्द बोलकर गुरु बसिष्ठ जी को बैठाया ॥१०४॥

Scanned by CamScanner

ततः पित्रा समात्येन सहरामो वरो वरः ॥
विनीय विष्णु भक्तेन स्थापितः स्वासनेऽशुके ॥१०५॥

फिर विष्णुभक्त जी ने पिता व मन्त्रियों के सहित श्रेष्ठ दुल्हा को कोमल वस्त्र बिछे हुए सिंहासनों पर बैठाया ॥१०५

इत्यन्तरे चन्द्रकरा राज्ञी वात्सल्य निर्भरा ॥
स्विस्याः सखीमुवाचेति शृणु मे वचनं यथा ॥१०६

इसी बीच में महारानी श्री चन्द्रकरा अम्बा जी वात्सल्य स्नेह से भरी हुई अपनी सखी से बोलीं—हे सखी! मेरा वचन सुनो तो? ॥१०६॥

श्रीचन्द्रकरी उवाच

इमौ राज कुमारौ तु मातृ हस्तेन भोजनं ॥
बहुभिर्लालनै रेवं कुर्वाणौ स्वेच्छया यदा १०७॥

ये दोनों राजकुमार माता के हाथ से बहुत प्रकार के लाड़-दुलारों द्वारा इच्छा पूर्वक भोजन करने वाले हैं ॥१०७॥

लज्जया बहूनां मध्ये किमश्नीतो शुभाननौ ॥
अत्रानयस्व केनापि प्रकारेण विचक्षणे ॥१०८॥

इन बड़े लोगों की बहुत भीड़ में ये कुमार लज्जा के मारे क्या भोजन कर सकेंगे? इस लिए हे बुद्धिमती? किसी प्रकार से इन दोनों कुमारों को अन्तः पुर रनिवास में लें आओ ॥१०८॥

वात्सल्य हृदयाराज्ञी सखीमुक्तवतीयदा ॥
सख्या तद्ज्ञापितं राज्ञि विष्णुभक्ते समस्तकम् ॥१०९॥

वात्सल्य-स्नेह में भरी हुई महारानी के इतना कहते ही वह सखी महाराज विष्णुभक्त जी से सब कह दिया ॥१०९॥

कर्णे तदुक्त वान्राजा वशिष्ठं सर्व सम्मतम् ॥
गुरुणा प्रेरितो रामो लक्ष्मणेन समंगतः ॥११०॥

श्री विष्णुभक्त जी ने भी महाराज श्री वसिष्ठ जी के कान में सब बात कह दी। गुरू महाराज ने लक्ष्मण जी सहित श्री राम जी को महारानियों के पास भेज दिया ॥११०॥

पुत्र वात्सल्यसंयुक्ता सा रामेपिच लक्ष्मणे ॥
प्रस्थाप्य स्वासने दिव्ये तौ स्वयं चापि सन्निधिम् ॥१११॥

पुत्र वात्सल्य में भींजी हुई महारानी जी दिव्य कोमल बिछावन बिछे हुए आसनों पर श्री राम जी और लक्ष्मण जी को बैठाकर स्वयं भी समीप में बैठ गयीं ॥१११॥

प्रस्थीय व्यंजनं हस्ते गृहीत्वासहितं यथा ॥
अकारिभोजनं रुच्यं षड्रसञ्च चतुर्विधम् ॥११२॥

विविध प्रकार के व्यंजनों का परसवा कर अपने हाथ से षटरस चार प्रकार के ग्रास उठाकर पवाने लगीं ॥११२॥

श्रीचन्द्रकरोवाच

श्रीराम वत्स हेतात धन्यास्ते जननीस्वयम् ॥
धन्या अपि तु सर्वाहि त्वां पुत्रं लक्ष्मणान्वितम् ॥११३॥

और बोलीं कि हे वत्स ? हे तात ? हे राम ? आपकी माता धन्य और सब माताएँ भी धन्य हैं जो आप और इन श्री लक्ष्मण जी को पुत्र-रूप में पा गयी हैं ॥११३॥

पूर्णचन्द्राननं शीलं मन्दस्मित मनोहरम् ॥
य त्पश्यन्त्यो लालयन्ति तत्पुरा सञ्चितं तपः ११४॥

जो वे आप कि शरद् पूर्ण चन्द्र सदृश मुख चन्द्र को और सुन्दर सुशीलता पूर्वक मनोहर मुसुक्यान को देखतीं हैं तथा लाड़ प्यार करती हैं। अहो ! उन्हों ने पहले जन्म में कोई महान तप किया था ॥११४॥

आसां हि कुल पूज्यानां पुत्रीणां भाग्य तोमया ॥
लब्धमेतत्क्षणं तत्तु पुनरेवविवियोगजम् ११५॥

मैंने भी इस उत्तम कुल पूजित कन्याओं के भाग्य से इस सुख को एक क्षण के लिए प्राप्त किया है फिर मैं इस वियोग रूपी अग्नि में जला करूँगी ॥११५॥

यदत्युक्त्वा चन्द्रकरा अवदश्रु मुखास्थिता ॥
प्रबोधिता च रामेणभाववश्येन मातृवत् ११६॥

इतना कहते ही चन्द्रकरा अम्बा आँखों से आँसुओं की धारा बहाने लगीं। भाव के वश में रहने वाले श्री राम जी ने माता की तरह से सास को भी प्रबोधित किया ॥११६॥

श्रीरामोवाच

मातः कस्मा देतदून मन्यसे हृदये परम् ॥
वारम्बार माग मिष्ये लोकरीत्यापि दूरतः ॥११७॥

श्री राम जी बोले कि हे अम्बा ! आप अपने हृदय में इतनी दीनता को क्यों धारण कर लिये हैं ? मैं तो लोक रीति से भी दूर होने पर भी बार २ यहाँ आऊँगा ॥११७॥

एवं सुवचनैः श्वश्रू वात्सल्य हृदयापरा ।
भाववश्येन रामेण वारम्बारं प्रतोषिता ॥११८॥

इस प्रकार के सुन्दर वचनों से वात्सल्य भाव भरे सासु के हृदय को भाव के वश में रहने वाले श्री राम जी ने वारम्बार संतुष्ट किया ॥११८॥

तदा वस्त्रैर्भूषणैस्सा भूषयित्वा सुभ्रातरौ ॥
चन्द्रकराम्बहस्तेन प्रेषितौ नृपसन्निधिम् ॥११९॥

उसके बाद दिव्य वस्त्र भूषणों से दोनों भ्राताओं को अपने हाथ से भूषित करके महाराज दशरथ जी (पिता जी) के पास भेज दिया ११९॥

लक्षावधिसूपकाराः काञ्चन पात्रहस्तकाः ॥
गृहाणेदं गृहाणेद मितिसब्द प्रपूरितः ॥१२०॥

लाखों की संख्या में रसोइया लोग स्वर्ण-पात्रों को हाथ में लेकर महाराज चक्रवर्ती जी के समाज में भोजन कराते हुए ये पदार्थ आप लीजिए, ये पदार्थ आप लिजिए इस प्रकार के शब्दों का गूँज मचा रहे हैं ॥१२०॥

Scanned by CamScanner

आदरेणाति सर्वेषां कारयामास भोजनम् ॥
तुचर्विधं रसैः षड्भिः पात्रे काञ्चके शुभे ॥१२१

इस प्रकार बड़े आदर से सुन्दर स्वर्ण पात्रों में चारों प्रकार के षट रस भोजनों को परस कर बड़े आदर से सबको भोजन कराया ॥१२१॥

असंख्येषु जनेष्वेवं नेदं लब्धं मयेति वाक् ॥
समाजे कौशलेन्द्रस्य मुखे कस्यापि न श्रुतम् ॥१२२॥

भोजन करते हुए असंख्य जनों के होने पर भी किसी ने यह नहीं कहा—"कि मुझे यह चीज नहीं मिली" ऐसा कोई भी शब्द महाराज चक्रवर्ती जी के समाज से कान में नहीं आया ॥१२२॥

भोजनानन्तरं राज्ञा माला सौगन्धि वीटिकाः ॥
दत्ता याव ज्जना तेभ्यो यथायोग्यादरेणवै ॥१२३॥

भोजन के बाद महाराज विष्णुभक्त जी ने सब को फूल माला पहनायीं, अतर (इत्र) लगाया और यथा योग्य आदर से जितने भी जन थे सब को पान दिए । १२३॥

भोजनै र्भूषणै र्वस्त्रै र्विष्णुभक्तेन भावतः ॥
पूजितोऽसौ कौशलेन्द्रः पुनरेनं प्रशंशयत् ॥१२४॥

इस प्रकार भोजन वस्त्र भूषणों से भाव पूर्वक श्री विष्णुभक्त जी ने कोसलेन्द्र महाराज की पूजा की तथा महाराज दशरथ जी ने भी राजा विष्णुभक्त की प्रसंसा की ॥१२४॥

पुत्रस्तेनानुव्रजता गुरु मन्त्रि युतेन च ॥
गुरु मन्त्रि समेतोऽपि सुनिवासं समागतः ॥१२५॥

गुरु और मन्त्री के सहित श्री चक्रवर्ती जी जनवास में आए साथ में श्री राम व लक्ष्मण जी भी आए तथा पहुँचान के लिए गुरु और मन्त्री तथा पुत्र के साथ राजा विष्णुभक्त भी जनवासे में आए ॥१२५॥

कौशलेशो उवाच

भो बाणपुर राजेन्द्र कृतवांश्च परंश्रमम् ॥
गमनं क्रियतां शीघ्रं त्वत्कृतैः स्तोषिता वयम् ॥१२६॥

महाराज कोसलेन्द्र जी बोले कि हे बाणपुर राजेन्द्र ! आपने बहुत बड़ा परि श्रम किया; हम सब को अत्यन्त संतुष्ट किया । अब हम लोगों के लिए बिदाई का इन्तजाम शीघ्र कीजिए ॥१२६॥

विष्णुभक्त उवाच

त्वांतोषितुं कथं शक्तः सर्व लोक महेश्वरम् ॥
परन्तु महतां रीतिः तुष्यन्ति भाव केवलात् ॥१२७॥

श्री विष्णुभक्त जी बोले कि आप तो सम्पूर्ण लोक के ईश्वर हैं; आपको संतुष्ट करने की किसमें शक्ति है परन्तु यह रीति है कि महान पुरुष तो केवल भाव मात्र से ही संतुष्ट हो जाते हैं ॥१२७॥

बहुनात्र किमुक्तेन लोके यद्वारि दृश्यते ॥
वाप्यां नद्यां तड़ागादौ तत्समुद्रस्य सर्वथा ॥१२८॥

बहुत कहने से क्या होगा लोक में यह बात प्रसिद्ध ही है कि बावड़ी, तालाब, नदियाँ सब समुद्र से ही तृप्त होते हैं, इनसे समुद्र क्या तृप्त होगा ॥१२८॥

नदीः पूर्तैः सागरस्य कदापि लोकविश्रुता ॥
आजन्मैवं त्वयि कृत्यमस्माकं लोक विश्रुतम् ॥१२६॥

जिस प्रकार नदियों से समुद्र कभी भी पूर्ण नहीं हो सकता उसी प्रकार हम लोग जन्म भर आपके लिए जो भी करें आपकी इस कृपालुता पर वह कुछ नहीं है तो भी इतना ही हमारा कृत्य सम्पूर्ण लोकों में कीर्ति फैलावेगा ॥१२६॥

स्वस्मिन् स्तद्योग्यता मेव मुक्तवन्तं नरेश्वरम् ॥
वशिष्ठः कौशलेशोपि स्वादरेण तमुक्तवान् ॥१३०॥

इस प्रकार अपनी और महाराज कौशलेश जी की योग्यता को कहते हुए महाराज श्री विष्णुभक्त जी को श्री वसिष्ठ जी व कौशलेश महाराज भी बड़े आदर पूर्वक इस प्रकार बोले ॥१३०॥

श्री बसिष्ठ उवाच

गच्छ राजन्गता रात्रिरूर्ध्वं याम द्वया दपि ॥
श्रमितोपि पुनः प्रात रुत्थितव्यं हि शीघ्रतः ॥१३१॥

श्री वसिष्ठ जी बोले कि हे राजन ! रात्रि दो याम से अधिक बीत गयी अब आप अपने घर जाइये। यद्यपि आप श्रमित हैं तो भी प्रातः जल्दी से उठकर के हम लोगों की बिदाई का इन्तजाम कीजिएगा ॥१३१॥

प्रज्ञापितो विष्णुभक्तो वशिष्टेन यदा बहुः ॥
तं नत्वा कौशलेशंच जगाम भवनं स्वकम् ॥१३२॥

इस प्रकार बहुत बार कहने पर भी विष्णुभक्त जी श्री बसिष्ठ जी और कौसलेश जी को प्रणाम करके अपने घर को गये ॥१३२॥

पुनः प्रभाते स श्रीमान् कृत्वा स्नानादिकां क्रियाम् ॥
आगत्य मुनि पादाब्जं ववन्दे कौशलेश्वरम् ॥१३३॥

पुनः प्रातः काल श्रीमान् विष्णुभक्त जी स्नानादिक नित्य क्रियाओं को करके जनवासे में आए और बसिष्ठ जी तथा कौसलेश जी के चरण कमलों में प्रणाम किया ॥१३३॥

प्रत्युत्थितं विष्णुभक्तः स्थीयतां स्थीयता मिति ॥
उक्तवां कौशलेशेन सचतेन सन्मानितः ॥१३४॥

स्वागत के लिए उठते हुए महाराज कोशलेश व बसिष्ठ जी को महाराज विष्णुभक्त जी ने आप बैठिए आप बैठिए ऐसा कहा भी है तो भी कौशलेश महाराज ने भी उठकर विष्णुभक्त जी का बहुत बड़ा सम्मान किया ॥१३४॥

पुनः परस्परं प्रीत्या मिलित्वैकाशने स्थितौ ॥
वशिष्ठश्च सुमन्तश्च सर्वे सभ्याः समास्थिताः ॥१३५॥

और परस्पर मिलकर दोनों महाराज एक ही आसन पर बैठ गए। श्री बसिष्ठ जी और श्री सुमन्त आदि सभासद भी अपने २ स्थानों पर बैठ गए ॥१३५॥

Scanned by CamScanner

ते नेमु स्तं विष्णुभक्तं सोपि सर्वान्ननाम च ॥
तदा मुनि र्वशिष्टस्तु प्रोक्तवा न्द्राच्चिणं नृपम् ॥१३६॥

सब सभासद लोगों ने विष्णुभक्त जी को प्रणाम किया और विष्णुभक्त जी ने भी सब को प्रणाम किया। और मुनि बसिष्ठ जी ने विष्णु भक्त जी से यह कहा ॥१३६॥

श्री वशिष्ठ उवाच

सर्वं कृत म्महीपाल विशेषं वर्णयामि किं ॥
पिताहि कीर्तिराज स्ते तस्य त्वं कीर्ति विग्रहः ॥१३७॥

हे राजन ! आपने बहुत किया कहाँ तक आपकी विशेषता का वर्णन करें। आपके पिता ही कीर्तिराज थे उनके कीर्ति रूप साक्षात विग्रह आप हैं ॥१३७॥

तवैव स्नेह रज्वा हि वयं वद्धाः समन्ततः ॥
परन्तु दूर देशत्वा द्जाने माज्ञपय त्वरो ।१३८॥

आपकी स्नेह रूपी रस्सी से हम लोग चारों तरफ से बँध गए हैं परन्तु दूर देश होने की वजह से आप शीघ्र हम सब बरातियों को बिदा होने की आज्ञा दें ॥१३८॥

एवं स वचनं श्रुत्वा वशिष्टस्य महात्मनः ॥
सुख मुद्वेगमुभयं प्राप्योवाच मुनीश्वरम् ॥१३९॥

महात्मा बसिष्ठ जी का वचन इस प्रकार सुनकर हर्ष व वियोग दोनों को प्राप्त होकर मुनीश्वर जी से विष्णुभक्त जी इस प्रकार बोले कि ॥१३९॥

विष्णुभक्त उवाच

अत्राहं किंवदिष्यामि यथायोग्यं तथा कुरु ॥
अनुज्ञा वाहकत्वं हि दास्यं सद्भिः समाहितम् ॥१४०॥

हे महाराज इस जगह पर मैं क्या बोलूँ जैसा आप उचित समझें वैसा करें। मैं तो आपकी आज्ञा का पालन करने वाला दास हूँ आप सब सत पुरुषों से पूज्य हैं ॥१४०॥

इत्युक्त्वा विष्णु भक्तेन प्रेम निर्भर मास्थितम् ॥
वशिष्ठेनार्ग्य वचनै रामोऽनुज्ञापित स्तदा ॥१४१॥

श्री विष्णुभक्त जी के इस प्रकार कहने पर प्रेम परिपूर्ण मन होकर श्री बसिष्ठ जी ने श्री राम जी को आज्ञा दी ॥ ४१॥

वशिष्ठ उवाच

याहि शीघ्रं रामभद्र कौशल्यानन्द वर्द्धन ॥
यधवन्तिस्रो ष्यामयस्व तासां विज्ञाप्य मातरम् ॥१४२॥
एवंमुने र्वशिष्टस्य वचः श्रुत्वारघूद्वहः ॥
विमानं गज मास्थायानीकिन्या विष्टभ्रातृभिः ॥१४३॥

हे कौशल्यानन्द वर्धन रामचन्द्र जी ? शीघ्र जाकर अपनी सासुओं से आज्ञाप्त होकर तीनों बंधुओं के साथ शीघ्र लौट आइए। इस प्रकार मुनि बसिष्ठ जी के वचन सुनकर रघु श्रेष्ठ श्री राम जी हाथी पर ऊँचे विमान में बैठकर सेना भ्राता व सखाओं से घिरे हुए ॥१४२॥१४३॥

Scanned by CamScanner

तुर्य्यादि वाद्य घोषैश्च रथ्यां कौतुक मादधन् ॥
स्त्रीणां च श्वाशुरं गेहं वरो रामो वरं ययौ ॥१४४॥

गलियों में तुरी आदिक बाजाओं के नाद और विविध प्रकार के कौतुकों को देखते हुए, स्त्रियों से स्वागत् पाते हुए, ससुर के घर में दुल्हा भेष में श्री राम जी जा पहुँचे ॥१४४।

तमागतं हि श्रुत्वातु द्वारं श्वश्रुः समागता ॥
कृत्वानारीजनं गाने रानीतोऽन्तः पुरं तया ॥१४५॥

दुल्हा द्वार पर आ रहे है ऐसा सुनकर सासुएँ गान आदि कौतुक पूर्वक आरती करने के लिए अन्तः पुर से द्वार पर आ पहुँची ॥१४५॥

तदागानं प्रकुर्वन्त्यः सुवासिन्यः समन्ततः ॥
विभूषिताबधूः सर्वाः या मात्रेहि निवेदिताः ॥१४६॥

सुवासिनी स्त्रियाँ झुण्ड की झुण्ड चारों तरफ गान करती हुई आयीं। सुन्दर भूषणों से भूषित स्त्रियाएँ सब स्वागत करके दुल्हा को अन्तः पुर में लिवा ले गयीं ॥१४६॥

तदा श्री रामचन्द्रेण श्रवदश्रु मुखास्थिताः ॥
प्रबोधिताः सुवचनैः श्वश्रूः सर्वाः समन्ततः ॥१४७॥

और श्री राम जी ने विदा होने की बात जैसे ही सुनाइ तैसे ही सबके सब आँखों से अश्रुओं की धारा बहाने लगीं श्री राम जी ने भी अपने सुन्दर बचनों से सासु आदिक सबको समझाकर प्रबोधित किया १४७॥

गमिष्यामि ह्यासु मातः प्रेरितो गुरुणा प्यहम् ॥
वात्सल्येन सर्वदा हि मातः चिन्तय पुत्र वत् ॥१४८॥

और कहा कि हे माता? गुरु महाराज ने मेरे को विदा होकर शीघ्र आने के लिए आज्ञा दी है। आप मेरा पुत्र की तरह वात्सल्य भाव से हमेशा स्मरण करें ॥१४८।

उत्थाय चासनादेवं मुक्त्वा वध्वा कराञ्जलिं ॥
प्रणम्य शिरसा श्वश्रू मश्रुपूर्णा कुलेक्षणाः ॥१४९॥

इस प्रकार कह कर आसन से तुरन्त उठकर हाथ जोड़ करके आसुओं से व्याकुल नेत्रों वाली सासु को सिर से प्रणाम किया।१४९।

श्रीरामचन्द्र श्चन्द्रास्यो मधुरो मोहनेक्षणः ॥
आज्ञापयेति वचन मब्रवी त्प्रणया न्वितः ॥१५०॥

मधुर मन मोहन कटाक्ष वाले श्री रामचन्द्र जी अपने मुख चन्द्र से प्रणय पूर्वक-"मुझे आज्ञा दो"-ऐसा वचन बोले ॥१५०॥

श्रीचन्द्रकरोवाच

गमिष्यसि सुखं गच्छ त्वमि मे विनयं त्विदम् ॥
इमास्तिस्रोपिमे पुत्र्यो नु सुचर्यास्ते पदस्य वै ॥१५१॥

श्री चन्द्रकरा अम्बा जी बोलीं कि हे वत्स! आप जाते है तो सुख से जाइए परन्तु मैं आपसे यह एक विनय करती हूँ कि मेरी ये तीनों पुत्रियाँ आपके श्री चरणों की अनुचरी हैं ॥१५१॥

Scanned by CamScanner

पुन स्ते मान्य पत्न्याः श्री जानक्याः पादसेवनम् ॥
करिष्यन्ति सदा प्रीत्या दास्यो भूत्वासुशीलतः ॥१५२॥

और आपकी जो मान्य पत्नी श्री जानकी जी हैं उनके भी चरणों की ये सब बड़े प्रेम से हमेशा सेवा करेंगी और सुन्दर शील पूर्वक दासी बनी रहेंगी ॥१५२॥

एवमुक्त्वा तु सर्वास्ता रामपादं प्रजग्रहुः ॥
समेवम्मैवमित्युक्त्वा पुन र्वाग्भिः प्रबोधिता ॥१५३॥

इतना कह कर सब माताओं ने श्री राम जी के चरणों को पकड़ लिया। श्री राम जी ने भी-नहीं २ हो गया हो गया"—ऐसा कह कर फिर भी उन माताओं को अपनी वाणी से प्रबोधित किया ॥१५३॥

तदा बहु समाजैश्च गानवाद्यैः समन्ततः ॥
तिसृभिर्वरभूषाभिर्वधूभिर्वरभूषितः ॥१५४॥

उस समय बहुत स्त्रियों के समाज ने गाने बजाने करके तीनों बधुओं को सुन्दर वस्त्र भूषणों से शृङ्गार करके सुन्दर भूषित वर के साथ में विदा कर दिया। ।१५४।

पुर स्त्रीणां स्मनोनेत्रा न्यादाय रूपतोबलात् ॥
स्वनिवासं साजगाम श्रीरामोमोहनेक्षणः ॥१५५॥

पुर की समस्त स्त्रियों के मन और नेत्रों को अपने रूप-सुन्दरता के बल पर आकर्षित करके मन-मोहनी कटाक्ष वाले श्री राम जी अपने निवासस्थान जनवास में आए ॥१५५॥

प्रजाभिश्चापि सर्वाभि र्बाणेशः कोलेश्वरम् ॥
प्रत्युज्जगामातिदूरं वशिष्टेन निवर्त्तितः ॥१५६॥

समस्त प्रजा के साथ महाराज बाणेश्वर विष्णुभक्ति जी विदा होने के समय बरातियों के सहित श्री अवधेश महाराज दशरथ जी को बहुत दूर तक पहुँचाने के लिए गये और जब वसिष्ठ जी ने समझा के विदा किए (निवृत्त किए) तब लौटे ॥१५६॥

इति श्री शङ्कर कृते श्री अमर रामायणे श्रीसीतारामरत्न मञ्जूषायां श्रीराम लघु विवाहोनाम
पञ्चम स्सर्गः ॥५॥

इति श्रीमधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां
लघु विवाह नाम पञ्चमः सर्गः ।

बाणपुर्या योजनानां शतं दूरं समाश्रितम् ॥
पुर मेकं नन्दनाख्यं दुर्ग त्रय परिवृत्तम् ॥१॥

बाणावती नगरी से सौ योजन की दूरी पर तीनों कोटाओं से घिरा हुआ नन्दन नाम का एक नगर है ॥१॥

स्वर्णैश्च स्फटिकै र्हर्म्यै र्गोपुरैः समलंकृतम् ॥
उच्चध्वज पताकाभि र्दूरतो दर्शितं जनैः ॥२॥

जो स्वर्णमयी स्फटिक मणियों के महल और ऊँचे २ गोपुरों (फाटकों) से और ऊँचे २ ध्वजा पताकादि से शोभित है जिसको बरातियोंने दूर से ही देखा ॥२॥

विद्या वन्तो ब्राह्मणाश्च वैश्याः धनप्रवर्द्धकाः ॥
सुरपेमाः क्षत्रियाश्च शूद्रा ब्राह्मण सेवकाः ॥३॥

जिस नगर में विद्वान ब्राह्मण, धनवान, वैश्य, महा बलवान क्षत्रीय और ब्राह्मणों के सेवक सूद्र निवास करते है ॥३॥

एत त्प्रजा समायुक्त स्तत्र राजा सुनीतिमान् ॥
नाम्नापि योगधीरोसौ प्रजामोद प्रदो वभौ ॥४॥

इस प्रकार की प्रजा से युक्त बड़े नीतिमान राजा श्री योग धीर नाम के हैं जो प्रजा को बहुत आनन्द देते है ॥४॥

तस्य नाम्ना रत्नकान्ति महिषी गुण वत्तरा ॥
तस्यां तस्यैक पुत्रस्तु गुणधीरोपि नामतः ॥५॥

उन की बड़ी गुणवती रानी श्री रत्नकान्ती नाम की हैं। उन से राजा का गुणधीर नामक एक पुत्र हुआ ॥५॥

जाता कन्यास्तु तिश्रोपि सुषमा गुणभूषिताः ॥
सुकान्ती शीलकान्ती च लावण्यापि जघन्यजा । ६॥

और तीन कन्याऐं हुई जो परमा, सोभा और गुणों से भूषित हैं। उन कन्याओं का नाम सुकान्ती, शीलकान्ति और सब से छोटी का नाम लावण्या है ॥६॥

चिदम्बरोस्य वरजो भ्राता राज्ञो गुणान्विता ॥
पत्नीचास्य सुमेधा स्याद् गुण रूप विभूषितः ॥७॥

उन योगधीर जी के छोटे भ्राता बड़े गुणवान "चिदम्बर" नाम से प्रसिद्ध है। उन की पत्नी सुन्दरी गुण और रूप से भूषिता "सुमेधा" नाम से प्रसिद्ध है ॥७॥

एकः पुत्रश्चैक पुत्री रूपलेखापि नामतः ॥
पुत्रस्तु सुविदो नाम्ना सुमेधायाः शुभाः प्रजा ॥८॥

उन की भी रूपलेखा नाम की एक पुत्री और सुबिद नाम का एक सुन्दर पुत्र है ।८॥

परस्परं चतश्रोपि वभूवुः प्रीति संयुताः ॥
सखीनां मण्डले सर्वाः क्रीडन्ति मातृ हर्षदाः । ६॥

ये चारों कन्याऐं परस्पर अत्यन्त प्रेमवाली अपने सब सखी मण्डल के बीच में माताओं को अत्यन्त सुख देन वाले खेलों को खेला करती हैं ॥६ ।

नाम्ना तु योग मुद्रैका सखी तासां विलक्षणाः ॥
तया च शिक्षिता सर्वा बहुविद्या प्रवीणया ॥१०॥

उन सब की एक योगमुद्रा नाम की सखी बड़ी बिलक्षण बुद्धि वाली है। बहुत विद्याओं में प्रवीणा उसने उन सब लड़कियों को पढ़ाया ॥१०॥

तासां चतसृणां मध्ये सुकान्ती गुण वत्तरा ॥
ज्येष्टापिसा चैकदातु संस्थित्वैकान्त मन्दिरे ॥११॥

उन चारों कन्याओं में सब से बड़ी सुकान्ती नाम की कन्या बड़ी गुणवती है। वह किसी एक समय एकान्त मन्दिर में बैठी हुई ॥११॥

गुणरूपेणात्म तुल्यं वरं चिन्तति सौख्यदम् ॥
बयस्यायोग मुद्रापि तस्या स्तत्रागता तदा ॥१२॥

अपने गुण और रूप के समान उत्तम सुख देने वाले अपने लायक पति की चिन्ता कर रही थी उसी समय उस की सम वयस्का सखी योगमुद्रा वहाँ पर आ पहुँची ॥१२॥

किं विचारयसि भद्रे चिन्तायुक्तापि दृश्यते ॥
तयैवं पृच्छ्य माणा सा सर्वं तस्यैनिवेदितम् ॥१३॥

उसने कहा कि हे भद्रे ! तू अत्यन्त चिन्ता युक्त दीख पड़ती है। इस एकान्त में तू क्या विचार कर रही है। इस प्रकार पूछती हुई उस अपनी सखी को शुकान्ती ने अपने मन की सब बात बताई ॥१३॥

श्रुत्वा सर्वं तदुक्तं सा योगमुद्रा विचक्षणा ॥
तां प्रति प्रावद द्वाक्यं मनोज्ञं लोक सम्मतम् ॥१४॥

बड़ी सूक्ष्म बुद्धि वाली योग मुद्रा ने उस को इन सब बातों को सुना तब उस ने अत्यन्त मनो रम-णीय लोक सम्मत बात कही ॥१४॥

योगमुद्रोवाच

श्रूयतां राजकन्ये त्वं गुण रूप विभूषिता ॥
तथापि स्त्रीजनानां तु सर्वस्वं सदृशः पतिः ॥१५॥

हे राज कन्यके ! सुनो। यद्यपि तुम सुन्दर रूप और गुणों से भूषित अति सुन्दरी हो तथा स्त्रियों के लिए तो अपना सर्वस्व अपने सदृश पति ही होता है ॥१५॥

किंरूपेण गुणैः किम्वायदा न्वोत्मि ममम्पतिम् ।
नलभेद् व्यर्थकं तस्याः स्त्रिया जन्म नृपात्मजे ॥१६॥

हे राजकन्यके ? यदि स्त्री को अपने लायक पति न मिला तो उस के रूप और गुणों से कौन लाभ है उसका तो जन्म भी व्यर्थ ही है ॥१६॥

तदहं सखि जानामि लोके यश्चोत्तमः पतिः ॥
दूरदेशे प्युपायेन महता प्राप्स्यसि हि तम् ॥१७॥

परन्तु हे सखी ! लोक में जो सब से उत्तम पति है उस को मैं जानती हूँ वह यद्यपि दूर देश में है तो भी कोई महान् उपाय से तुम उनको प्राप्त कर लोगी ॥१७॥

कदाचिद्गुण हीनास्त्री सुपतिं प्राप्य शोभते ॥
यथा तमो वर्ता रात्री शुक्ल चन्द्रमसा पिसा ॥१८॥

स्त्री कदाचित गुण हीन भी हो तो सुन्दर पति को पाकर के वह अति शोभित होती है जैसे अन्धकार मयी रात्रि पूर्णमासी के चन्द्रमा को पाकर शोभित होती है ॥१८॥

एवं तस्या वचः श्रुत्वा पुन स्तां चिन्तया न्विता ।।
योगमुद्रा मुवाचेति कर्तव्यं वद मे यथा ।।१९।

इस प्रकार योगमुद्रा के वचन को सुन कर चिंतित हुई सुकान्ता ने फिर पूछा कि मुझे कौन उपाय करना चाहिए मुझे इस बात का बता दो ।।१९।।

यन्मां निदशयसि तस्य वद प्रभावं स्थानं च रूप गुण वैभव सत्समाजम् ।।
नाम्नाहि केन सखि राजति राजपुत्रो लेभे कथं तमिति देवि कुरु प्रबोधम् ।।२०।।

और जिस पुरुष को आप मेरे लिए दिखा रही हो उसके प्रभाव, स्थान, रूप, गुण, वैभव, सहवासी समाज, और नाम क्या है ? कैसा है ? और वह राज पुत्र मुझे कैसे प्राप्त हो सकता है, हे देवि ! इन सब बातों को बताओ ।।२०।।

एवं तस्या वचः श्रुत्वा योगमुद्रा सुविज्ञका वक्तु
प्रचक्रमे सर्व वृत्तं तस्या हि पूर्वकम् ।।२१।।

बड़ी पण्डिता योगमुद्रा ने राज कुमारी की इस प्रकार की बातों को जब सुना तब उस के पूर्व जन्म की सब कथा को कहना आरम्भ किया ।।२१।।

योगमुद्रोवाच

राजकन्ये विजानामि सप्त जन्मानि ते च वै ।।
प्राप्ताहि भावितं लोकं प्रेम सुक्रम साधितम् ।।२२।।

योगमुद्रा बोली—हे राजकन्यके ! मैं तुम्हारे सात जन्म के हाल (समाचार) जानती हूँ साधन से अगम, प्रेम ही है मूल्य जिसका, भावुक पुरुषों से भावित है जो भगवत धाम उसको तुम अवश्य प्राप्त करोगी ।।२२।।

सर्वं स्मरस्वकीयं यज्जानकी वर हेतवे ।।
मयोपदिष्टं, गुरुणा तत्कृपा भाव साधनम् ।।२३।।

पहले जन्म में गुरु रूप से मैंने जो तुम को श्री जानकी वर जी की प्राप्ति के लिए उपदेश किया था जो भगवत् कृपा प्रसादिक भाव है वही तुम्हारा सर्वस्व भूत भगवत प्राप्ति का साधन है; उसको तुम स्मरण करो ।।२३।।

माधुर्य्यानन्द वा शक्त्या ज्ञानं लोकेपि चाद्य ते ।।
रुद्धं ज्ञानं राजकन्ये कथयामीह सर्वकम् ।।२४।।

पहले मैंने तुम्हारे लिए लोक में भी ज्ञानशक्ति से अथवा माधुर्य आनन्द शक्ति से उपदेश किया था। हे राजकन्यके ! तुम्हारा वह ज्ञान अब रुक गया है इसलिए इस समय ज्ञान को सम्पूर्ण रूप से कहूँगी ।।२४।।

श्रूयतामुत्तमेलोके देशे चोत्तर कौशले ।।
श्रीमद्दशरथो राजा सार्वभौमः सनातनः ।।२५।।

तुम सावधान होकर सुनो सम्पूर्ण लोकों में सब से उत्तम जो उत्तर कौशल देश है उसमें सनातन, सार्वभौम महाराज श्री दशरथ जी राज्य करते हैं ।।२५।।

Scanned by CamScanner

सुरासुरनमस्कृत्यो वैभवार्णव सत्कृतः ॥

शूरोदारो महातेजा सत्सुखानन्द विग्रहः ॥२६॥

वे महाराज सुर और असुर (दिव्य धाम के पार्षद व प्राकृतिक जीव) सब से नमस्कृत हैं और ऐश्वर्य रूप समुद्र से तो वे महान् सत्कृत हैं और बड़े शूर, महान् उदार, महातेजस्वी और सच्चिदानन्द सुख के साक्षात विग्रह हैं ॥२६॥

पत्न्यस्तु तस्य वै त्रीणि शतानि च शतार्द्धकम् ॥

उत्तमा गुण रूपैस्तु तिस्र स्तासां समाहिताः ॥२७॥

उन की साढ़े तीन सौ पत्नी हैं जो उत्तम गुण रूप वान हैं। उन में तीन मुख्य हैं जो सावधान होकर महाराज की सेवा करती हैं ॥२७॥

तासा मपि च नामानि श्रृणु राज सुते यथा ॥

कौशल्याच सुमित्रापि कैकेयी करुणा वृता ॥२८॥

उनके भी नामों की मैं तुमसे कहूँगी हे राजसुते! सुनो। एक का नाम श्री कौसल्या दूसरी श्रीशुमित्रा तीसरी श्री कैकयी जी है। ये तीनों करुणा रस की मूर्ति हैं ॥२८।

पुरीत्व योध्या तस्या स्ति राजधानी सनातना ॥

प्रमोद विपिनां वृता सप्त दुर्गा वृतापि च ॥२६॥

उन महाराज की अयोध्या नाम की नगरी सनातन राज धानी है जो प्रमोद आदिक बनों से घिरी हुई सात पर कोटा वाली है ।२६॥

विभक्ताष्टा पदाकरा प्रतिवस्त्वा पणौगृहैः ॥

मुक्तामाणिक्य सन्दर्भा प्रोच्च हर्म्य गवाक्षका ॥३०॥

वह अलग २ आठ पदों के आकार वाली स्वर्णमयी अष्ट सिद्धी मयी, अष्ट आवरणमैयी कमलाकार चौपड़ यन्त्र शहस नगरी है। उसके प्रत्येक आवरण में प्रत्येक वस्तु के बाजार और महल अलग २ हैं जो महल मुक्ता व मणि माणिक्यों के तो खानि हैं और ऊँचे छज्जे, झरोका व अट्टालिका वाले हैं ॥३०॥

सत्प्रजा संकुला प्रोच्चद् गोपुरै रमणीदका ॥

तडाग वापिका रामैः परमाद्भुत शोभना ॥३१॥

सज्जन प्रजा से भरी हुई; ऊँचे फाटकों वाली; अत्यन्त रमणीय तालाब, बावड़ी बगीचा वाली; परम अद्भुत शोभना वह नगरी है ॥३ ॥

जातीयानां बान्धवानां समाजै राजते हि सा ॥

भ्रातरा वरजौ तस्य द्वौहि विक्रम संयुतौ ॥३२॥

अपनी २ जाति वाले बन्धुवर्ग के अलग २ समाज से शोभित हैं। इस प्रकार की नगरी के अधिपति महाराज दशरथ के दो भाई तो अति पराक्रमी हैं ३२॥

नाम्ना च विक्रमरथो द्वितीयः स्या द्यशोरथः ॥

तयो श्च द्वौ द्वौ पुत्रौहि महावीर्य्यौ गुणा करौ ॥३३॥

जिनका नाम-विक्रम रथ व यशोरथ है। इन दोनों भाइयों के भी दो २ पुत्र हैं जो महान् बलवान और गुण के सागर हैं ॥३३॥

Scanned by CamScanner

जेष्टोभानुप्रभथास्या वरजः स्याद् गुणप्रभः ॥
विक्रम रथस्यात्मान मैकी तृत्य प्रवर्त्त कौ ॥३४॥

विक्रम रथ जी के ज्येष्ठ पुत्र का नाम भानुप्रभ और छोटे का गुणप्रभ नाम है जो अपने पिता जी के सदृश हैं ॥३४॥

तथा यशो रथ स्यैवं द्वौ पुत्रौ सुमहावलौ ॥
तत्र ज्येष्टो भद्र कान्तः कनिष्ठ श्चित्र विक्रमः ॥३५॥

और यशोरथ के भी महान् बलवान दो पुत्र हैं ज्येष्ठ का नाम भद्रकान्ति और कनिष्ठ का नाम चित्र विक्रम है ॥३६॥

विक्रम रथस्य पत्नी विज्ञाना नामतो र्थतः ॥
ज्ञाना यशो रथस्यैकं नृपस्यै कस्य द्वे सुते ॥३६॥

विक्रम रथ की पत्नी का नाम विज्ञाना है जो यथार्थ नामा है। और यशोरथ की पत्नी का नाम ज्ञाना है तथा एक एक राजा की दो दो कन्यायें हैं ॥३६॥

स्वस्य श्रीकौशलेंद्रस्य राज्ञो सर्वाः सु सत्प्रजाः ॥
अतुल्य विक्रमा श्चान्यै गुंणै श्चापि विभूषिताः ॥३७॥

महाराज श्री कोशलेश जी के भी जितने पुत्र हैं वे महान् पराक्रमी व सुन्दर हैं। राजाओं के योग्य समस्त उत्तम सद् गुणों से भूषित हैं ॥३७॥

सुकुमाराः कोमलाङ्गाःकाम कोटि मनोहराः ॥
श्रीरामो लक्ष्मण श्चैव भरतः सत्रुसूदनः ॥३८॥

वे बड़े सुकुमार हैं; कोमल अंग वाले हैं; करोड़ों कामों से अधिक सुन्दर सब के मन को हरने वाले हैं सब से बड़े का नाम श्री राम इसी क्रम से लक्ष्मण भरत शत्रुघ्न नाम है ॥३८॥

एते तु लोक विख्याता श्चत्वारोपि महौजशः ॥
कौशल्या रामभद्रस्य सुमित्रा लक्ष्मणस्य च ॥३९॥

ये चार तो महान पराक्रम वाले लोक प्रसिद्ध हैं । श्री राम जी की माता श्री कौशल्या जी, श्री लक्ष्मण जी की माँ श्री सुमित्रा जी हैं ॥३९॥

सत्रुघ्नस्यापि सामाता कैकेयी भरतस्य च ॥
त्रिस्रोपि लोके विख्याता राज्ञो मान्या गुणाधिकैः ॥४०॥

शत्रुघ्न जी की भी सुमित्रा जी ही माँ हैं और भरत जी की कैकेयी जी माँ हैं। महाराज चक्रवर्ती जी को अधिक मान्या महा गुणवती ये तीनों माताएँ लोक विख्यात हैं ॥४०॥

सन्तिसर्वे राजपुत्रा लोकोत्तर गुणान्विताः ॥
तथापि भूषिते वंशे रामः स्या त्सद्विभूषणः ॥४१॥

सभी राजकुमार लोकोत्तर गुण वाले अपने वंश के भूषण स्वरूप हैं तो भी सुन्दर सद् गुणों से भूषित वंश में श्री राम जी तो अति ही महान गुणवान भूषण स्वरूप हैं ॥४१॥

काम कोटिं तिरस्कृत्वा स्वात्म रूपेण संस्थितः ॥
इन्द्र नील मणि स्निग्धो नीलेन्दीवर सुन्दरः ॥४२॥

जो अपनी अंग सुन्दरता से करोड़ों कामों का तिरस्कार करते हुए इन्द्र नील मणि के समान श्याम वर्ण वाले, नील कमल के सदृश सुकुमार और अत्यन्त चिकन अंग वाले सदा स्नेही हैं ॥४२॥

विनैव भूषां सद्भूषो यथा भ्राजति केवलम् ॥
महतीसुपमाकिम्वा प्रताके स्यैव संस्थिताः ॥४३॥

बिना ही भूषणों के सुन्दर भूषित सरीख महान् परमा शोभा के तो मानो प्रतीक ही खड़े हैं। इसी प्रकार प्रकाशित हो रहे हैं ॥४३॥

विशाले चक्षुषी तस्य विनैव कज्जलाञ्चिते ॥
कज्जलेनाञ्चिते वास्तः कामस्य धनुषी भ्रुवौ ॥४४॥

बिना ही काजल के बड़े २ नेत्र, काजल युक्त सदृस, काम के धनुष सदृस भृकुटी वाले ॥४४॥

तिल पुष्प समा कारा नाशा तस्यातिः शोभना ॥
भाले सुविशाले तस्य तिलकं रूप विग्रहः ॥४५॥

तिल के पुष्प सदृस नासिका अत्यन्त शोभित है। विशाल भाल में रूप की मानो रेखा खिंची हो ईसे प्रकार रूप विग्रह तिलक शोभित है ॥४५॥

निस्तलौ दर्पणा कारौ कपोला वति शोभनौ ॥
नील शुक्ति समौ कर्णौ चिबुकञ्चमनोहरम् ॥४६॥

दर्पणाकार गोल कपोल, अत्यन्त शोभित नील सूक्तिका सदृश दोनों कान बराबर हैं। चिबुक तो अति ही मनोहर है ॥४६॥

अधरे रुणिमा तस्य ग्रीवा स्याद्दर लक्षणा ॥
वृषस्कन्धो दृढोरस्को दीर्घबाहू महाबलः ॥४७॥

अधरों की लालिमा (अरुणिमा), सुन्दर लक्षण युक्त शंख सदृश कण्ठ, पुष्ट कन्धा, मजबूत छाती, लम्बी भुजा व महान् बलशाली हैं ॥४७॥

रक्तौ करतलौ तस्य तथा पाद तलावपि ॥
वैभवाति सूचिताभिः सुरेखाभिः विराजितौ ॥४८॥

हाथ के तालू और चरणों के तालू लाल रङ्ग के हैं महान् वैभव को सूचित करने वाले उत्तम सुन्दर अंग, रेखाओं से अत्यन्त सुशोभित हैं ॥४८॥

कटौ सूक्ष्मं त्रिरेखाभि र्निम्ननाभ्यायुतोदरम् ॥
वस्त्यावधि स्तथा भाति शोभा वास्तु विधानवत् ॥४९॥

पतली कमर, तीन रेखाओं से शोभित गहरी नाभि युक्त उदर, जानु मूल तक सुन्दर कटि वाले हैं ऐसा लगता है मानो शोभा रूप सम्पत्ति का विधान बना हो ॥४९॥

Scanned by CamScanner

स्निग्धौ च निस्तलावूरु स्तथैवाति मनोहरौ ॥
सुषमाया मन्दिरस्य तोरण स्तम्भ भूषितौ ॥५०॥

अत्यन्त चिकन गोल जंघा अति ही मनोहर हैं मानो सुषमा (परमा शोभा) रूपी देवता के मन्दिर के मांगलिक कदलिस्तम्भ कर धनी रूप तोरणों से बिभूषित हैं ॥५०॥

वक्षणे लक्षणं तस्य नारीणांसुखदो भवेत् ॥
जंघे तूणीर सदृशे ष्टीवदौ मांसलावुभौ ॥५१॥

घुटनाओं का लक्षण नारियों को अत्यन्त सुखदायी है और घुटनाओं से नीचे की पिंडली तरकस के सदृश है और दोनों गुल्फ (टखने) मॉंसल (पुष्ट) हैं ॥५१॥

पादौ पद्मं हि लक्ष्मीणां प्रपदांगुलि भूषितौ ॥
पुष्टांग मग्न घुटिके पार्ष्णी तस्याति शोभनौ ॥५२।

चरण कमल अनन्त लक्ष्मियों के निवास वाले कमल सदृश हैं। चरणों की अगुलियाँ सुन्दर भूषित हैं। चरण की एड़ी से घुटना पर्यन्त मध्य भाग सुन्दर पुष्ट अति शोभाय मान है ।५२॥

दलेषु पद्मस्य मयङ्क श्रेणि र्नखावलि स्तस्य तथा विभाति ॥
करा ब्जयोः पाद सरोजयोश्च जालानि किम्वा भवनस्य लक्ष्म्याः ॥५३॥

चरणों की अँगुलियों की नख-पंक्ति मानो कमल के दलों पर चन्द्रमाओं की पंक्ति लगी हो इस प्रकार शोभित होते हैं। कर कमल और चरण कमल ये क्या लक्ष्मी के भवन हैं! अथवा अनन्त लक्ष्मियों को फसाने के जाल हैं ॥५३॥

सरत्न माणिक्य कीरीट शोभी सकुण्डल स्मेर शुभाव भासः ॥
समौक्तिनासो मणिमाल्य वक्षा समुन्द्रिकां कङ्कण शोभिबाहुः ॥५४॥

रत्न और माणिक्यों से सुन्दर रचित मुकुट तथा कुण्डल मन्द मुस्कराते हुए मुख चन्द्र के ऊपर अत्यन्त शोभित हैं। सहज मुस्क्यान मानो हृदय के भावों का प्रकाश कर रही है। नाक में नासा मणि, बक्षस्थल में मणियों की माला, उँगलियों में मुद्रिका और कर कमलों में कङ्कणादि धारण किए हुए अति सुन्दर भुजा वाले हैं ॥५४॥

वदने वीटिकां श्चर्वन्हृदयोल्लास शूचयन् ॥
मन्द मन्द हसन् रक्ता दन्त पंक्ति विराजते ॥५५॥

पान का बीरा चबाते हुए मुख चन्द्र की चेष्टाओं से मुख उल्लासों को जनाते हुए मन्द २ मुस्क्यान में दाँतों का लाल पंक्ति अति शोभित हो रही है ॥५५॥

तडिद् गौरीन्दुवदना नीलांशुक विभूषिता ॥
अत्यन्त सुकुमाराङ्गी प्रिया तस्य तु जानकी ॥५६॥

बिजली समान गौर वर्ण वाली, नील बस्त्र और भूषणों से भूषित अत्यन्त सुकुमार अङ्ग वाली, चन्द्र बदनी श्री जानकी जो उन की अत्यन्त प्रिया हैं ॥५६॥

तामात्मतुल्यां वयसा गुणै श्च कुलेन रूपेण कला कलापैः ॥
विनोदय न्नुरुक्म गृहे सखीनां गणे गुणाढ्यो रमते मुदा सः ॥५७॥

Scanned by CamScanner

वे प्रिया अपने प्रियतम की समान अवस्था, समान गुण, समान कुल वाली हैं। अपने रूप और सुन्दर चेष्टा कलाओं से प्रियतम जू को आनन्दित करने वाली, अनन्त सखियों से घिरी हुई महान् गुणों की खानि उन प्रिया जू को विनोदित करते हुए प्रीतम जू अत्यन्त आनन्द मग्न रहते हैं ॥५७॥

पूर्व मभ्यासितं यत्तु तयापि वर्णितं तथा ॥
प्रस्फुर त्हृदये तस्याः प्रबुद्धेवा सुनिद्रया ।।५८॥

इस प्रकार योगमुद्रा के वर्णन करने पर पूर्व जन्म में उपासना भाव से सुन्दर भजन का अभ्यास की हुई सुकान्ति के हृदय को योगमुद्रा के शब्दों ने मानों सोये हुए को जगाया। ५८॥

प्रेमबाष्पाकुलाक्षी सा रोमहर्षाङ्ग सुस्थिता ॥
धैर्यमाधाय स्वासिता योग मुद्रा मुवाचसा ॥५६॥

आँखों से अनुरागमयी आंसुओं की धारा बहाती हुई गद्गद रोमाञ्चित अङ्ग वाली सुकान्ति धैर्य को धारण करके सुन्दर तरह से बैठी हुई योग मुद्रा से बोली ॥५६॥

राजकुमार्युवाच

नाहं जानामि ते रूपं प्रभावं परमाद्भुतम् ॥
सखी न स्वामिनी मेस्ति यदिदं कथितं त्वया ॥६०॥

हे योगमुद्रे मैं तुम्हारे रूप और अद्भुत प्रभाव को नहीं जानती हूँ। तुमने मेरे को यह जो समाचार सुनाया है अतः अब आप मेरी सखी नहीं होकर अब मेरी स्वामिनी हो ॥६०॥

ममापि सर्वं जानासि जन्मान्तर-गत स्मृतेः ॥
किम्वयस्या पि रूपेण गुरुस्त्वम्मे समागता ॥६१॥

जन्मान्तर की स्मृति से भूली हुई मेरे पूर्व जन्म के हाल को भी आप जानती हैं। क्या मेरे समान अवस्था के रूप में आई हुई आप मेरे पूर्व जन्म की गुरु ही प्रकट हुई हैं ॥६१॥

तत्सर्वं त्वं समाचक्ष्व स्वय मेव समस्तकम् ॥
स मे नाथः स्वामिनी मे सा सीता जनकात्मजा ॥६२॥

आप स्वयं मेरे लिए उन समस्त समाचारों को कहिए क्योंकि वे राम जो मेरे नाथ हैं; तथा वे जनकात्मजा श्री सीता जी मेरी स्वामिनी हैं ॥६२॥

तयोस्तत्त्वस्योपदेष्टा त्वम्मे जन्मान्तरीयका ॥
गुरु रसेति विज्ञातं नमस्ते योग दायिके ॥६३॥

उन दोनों के उस दिव्य धाम में बिलास करते हुए इस तत्व का उपदेश करने वाली आप पूर्व जन्म से ही मेरी गुरू हैं। गुरुत्व रस को ठीक से जानने वाली जीवों को युगल सरकार से योग देने वाली हे योगदायके! आप को नमस्कार है ॥६३॥

योगमुद्रोवाच

ये राम रसिकानन्या भक्ताः श्री गुरु शिक्षिताः ॥
सम्बन्धावेश चित्ताथ भजन्ति भाव पूर्वकाः ॥६४॥

श्री योगमुद्रा जी बोलीं कि जो श्री राम जी का अनन्य रसिक भक्त श्री गुरु महाराज द्वारा सुन्दर शिक्षित, सम्बन्ध के आवेश में भाव पूर्वक श्री राम जी में चित्त लगाकर भजन करते हैं ॥६४॥

Scanned by CamScanner

तेषां तद्भाव संयोगं समये कत्तुं मुद्यता ॥
सीता रामाज्ञया साहं योगमुद्रा स्वरूपिणा ॥६५॥

उन की भावनाओं का संयोग समय पर श्री सीताराम जी से लगाने के लिए मैं सावधान हूँ । इस प्रकार श्री सीताराम जी की आज्ञा का पालन करती हूँ इसी लिए यह स्वरूपानुरूप मेरा नाम योगमुद्रा है ॥६५॥

चरामि मानुषेलोके मुमुक्षूणां च मण्डले ॥
माधुर्य्य मण्डले दिव्ये सर्वत्र गति रस्ति मे ॥६६॥

मैं मनुष्य लोक में मुमुक्षुजीवों के समाज में भी घूमा करती हूँ और दिव्य धाम के माधुर्य मण्डल में भी घूमा करती हूँ । इस प्रकार मेरी गति सर्वत्र है ॥६६॥

अतो यूयं चतस्रोपि भगिन्योभाव सिद्धकाः ॥
माधुर्य्य मण्डले जाताः प्राप्स्यामि योग मुद्रया ॥६७॥

इसी लिए भाव से सिद्ध हुई आप चारों बहिनों ने माधुर्य मण्डल में जन्म लिया है अतः अपनी योग मुद्रा से आप चारों बहिनों को श्री सीताराम जी को प्राप्त कराऊँगी ॥६७॥

सुकान्त रुवाच

माधुर्य्यं मण्डलं किञ्च न जानामि किमप्यहम् ॥
अर्थेन कथय स्वैव कृपारूपे यथाविधम् ॥६८॥

सुकान्ती बोली—हे कृपा रूपे मैं माधुर्य मण्डल को कुछ भी नहीं जानती हूँ इसका यथार्थ अर्थ करके कहिए ॥६८॥

योगमुद्रोवाच

प्राकृतं मानुषे लोके देही देह विभागकम् ॥
जन्म मृत्यु जरा धर्म्म विहारा भोग भावुकम् ॥६९॥

श्री योगमुद्रा जी बोलीं कि प्राकृतिक मनुष्य लोक में जीवों का देही-देह विभाग रहता है । वे जन्म मरण, बुढ़ापादिक धर्म परतंत्र हुए विहार, भोग में आशक्त रहते हैं ॥६९॥

तद्भावा भाव धर्मस्त्व मैश्वर्य्यं परमंपदम् ॥
नतथा तत्तथा भाति तन्माधुर्य्यं सुखावहम् ॥७०॥

इस प्रकार के भोक्ता भाव से सर्वथा रहित और इन प्राकृतिक धर्मों से रहित जो स्थान है वही ऐश्वर्य मयी परम पद है । यद्यपि वह परम पद प्राकृतिक लोकों के सदृश नहीं है परन्तु वैसा ही प्रतीत होता है । इस प्रकार के महान सुख स्थान को माधुर्य मण्डल कहते हैं ॥७०॥

माधुर्य्या नन्दया शक्त्या कृतं सर्वं विभाति वै ॥
यत्तु मानुष्यके लोके तद्विध्य विद्यया कृतम् ॥७१॥

माधुर्य आनन्द मयी शक्ति से प्रकाशित हुआ वह माधुर्य मण्डल अति शोभित है और जो प्राकृतिक लोक है वह अविद्या माया के द्वारा उत्पन्न हुआ है ॥७१॥

Scanned by CamScanner

राजपुत्र्युवाच

अहो कथं विस्मृत मेव सर्वं श्रीराम राजेन्द्र मणौ विभाव्यम् ॥
भर्तुं त्व भावं कृतमेव पूर्वं लब्ध्वा स्मृति स्त्वद्य तव प्रसादात् ॥७२॥

राजकन्या बोली कि अहो मैंने पूर्व जन्म में राजेन्द्रमणि कुमार श्री राम जी के साथ कान्त भावना की सिद्ध किया था वह इस समय मुझे कैसे विस्मरण हो गया। हे योगमुद्रे ! आप की कृपा से अब मुझे स्मृति आ गयी है ॥७२॥

लक्ष्म्यादिभिस्सेवित पादपद्मा पाथोजहस्ता हृदये सदामे ॥
श्रीराम राजेन्द्र कुमार वामा श्यामा शुभांगी वसतु प्रकामम् ॥७३॥

अनन्त उमा रमा ब्रह्माणियों से सेवित चरण कमल वाली, कमल के सदृश हस्त कमल वाली, राजेन्द्रमणि कुमार श्री राम जी की प्रिया किशोरावस्था सम्पन्न, सुन्दर शुभ लक्षणमयी अङ्ग वाली श्रीकिशोरी जी हमेशा के लिए मेरे हृदय में बास करें, मेरे मनोरथ पूर्ण करें ॥७३॥

प्राप्स्यापि शीघ्रं न च शंशयोत्र समे पति र्भावित एव पूर्वम् ॥
कारुण्य मूर्ते र्जनकात्मजायाः कैंकर्य्य भावं सततं करोमि ॥७४॥

पूर्व जन्म की भजन भावना से सिद्ध किए हुए मेरे पति अब मुझे शीघ्र प्राप्त हो जाँयगे इस में कोई संशय नहीं है। अब मैं करुणामयी मूर्ति श्री जनकात्मजा जी के दासी भाव को हमेशा के लिए प्राप्त होकर सेवा करूँगी। ७४॥

ताव त्कथां तस्य समग्रभाव्यां समास सन्धान विधान वत्तया ॥
प्रारम्भितां श्रावय योगमुद्रे सीता पते र्नित्य विहार धाम्नः ॥७५॥

तब तक के लिए उन दोनों सरकार की भावना करने योग्य कथा को विधान पूर्वक संक्षेप से विचार कर के हे योगमुद्रे ! अब मुझे सुनाओ। जिस कथा को तुमने आरम्भ कर रक्खी है वही सीता पति के नित्य धाम की विहार-लीला का वर्णन करो। ७५

इति श्री शंकर कृते श्रीअमर रामायणे श्रीसीताराम रत्न मञ्जूषायां
राजकन्या प्रबोधोनाम शष्ट तम स्सर्गः ॥६॥
इति श्री मधुकर रसास्वादिना कृता टीकायां
राजकन्या प्रबोधो नाम षष्ठः सर्गः

योगमुद्रोवाच

अपरा कौशलेन्द्रस्य भार्य्याः सर्वाश्च शोभनाः॥
तासु तस्य च द्वौ द्वौ हि जातौ पुत्रौ गुणा न्वितौ ॥१॥

श्री योगमुद्रा जी बोलीं— महाराज कोशलेश जी के और जो अति श्रेष्ठ सम सुन्दर सब स्त्रियाँ हैं उस से भी महाराज के बड़े गुण वान दो पुत्र हुए। १॥

मातृणां नाम युक्तानि तेषां श्री राम सङ्गिनाम् ॥
नामानि कथयिस्यामि तेषां सम्बन्धभागिनाम् ॥२॥

माताओं के नामों से युक्त श्री राम जी के संगी उन सब का नाम भी तुम से कह के सुनाऊँ जो भावुकों के परम सम्बन्धी है ॥२॥

Scanned by CamScanner